



प्रो. आशुरानी
कुलपति, डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा



वेन होमगगम धम्मनंद तेरो
चेअर प्रोफेसर उपकुलपति
बौद्ध तथा पाली विश्वविद्यालय, कोलम्बो



प्रो. शिखा श्रीधर
आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
श्रीमती बी.डी. जैन गर्ल्स (पी.जी.) कॉलेज, आगरा



डॉ. अमित कुमार सिंह
व्याख्याता, हिंदी विभाग,
के.एम.आई., आगरा



डॉ. कामना सिंह
साहित्यकार, दिल्ली



डॉ. तपस्या चौहान
अतिथि व्याख्याता, हिंदी विभाग, कला संकाय,
डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा



डॉ. शिवानी चौहान
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी
श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुणराम सोसायटी (रजि.) के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2348:5639



Impact Factor
6.521

नवम्बर 2026

ISSN 2348-5639

(त्रैमासिक)

शोध समालोचन SHODH SAMALOCHAN

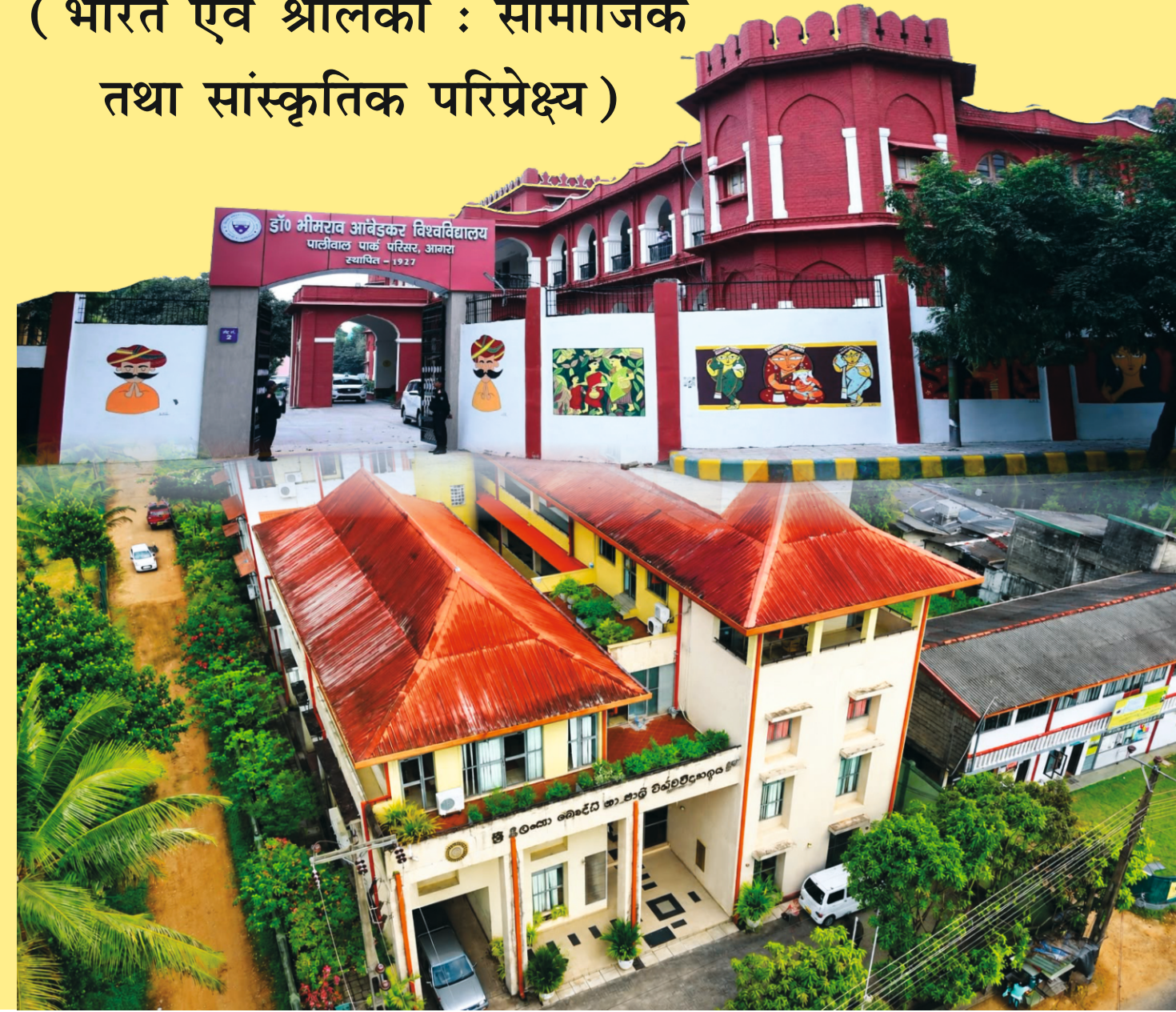
A Peer Reviewed Bilingual International
Journal of Multi-Disciplinary Research

(भारत एवं श्रीलंका : सामाजिक
तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य)



शोध समालोचन

(भारत एवं श्रीलंका : सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य)





गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFERENCED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY PRINT RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-13, अंक-4 नवम्बर (भारत एवं श्रीलंका : सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य)

आईएसएसएन : 2348-5639 / 2026

इस विशेषांक का संपादक-मंडल

संरक्षक

प्रो. आशुरानी

कुलपति

डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

वेन होमगम धम्मनंद तेरो

चेअर प्रोफेसर उपकुलपति

बौद्ध तथा पाली विश्वविद्यालय, कोलम्बो

प्रधान संपादक

प्रो. शिखा श्रीधर

आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

श्रीमती बी.डी. जैन गर्ल्स (पी.जी.) कॉलेज, आगरा

संपादक मण्डल

डॉ. अमित कुमार सिंह

व्याख्याता, हिन्दी विभाग,

के.एम.आई., आगरा

डॉ. कामना सिंह

साहित्यकार

दिल्ली

डॉ. तपस्या चौहान

व्याख्याता, हिन्दी विभाग, कला संकाय,

डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

डॉ. शिवानी चौहान

कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी

श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार



गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY PRINT RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-13, अंक-4 नवम्बर (आगरा-श्रीलंका विशेषांक) आईएसएसएन : 2348-5639 2026

स्थायी संपादक-मंडल

संपादक

- डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक

- डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक

- डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक

- डॉ. लता एस. पाटिल,
- डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अक्षर संयोजन

- मो. सलीम

कानूनी सलाहकार

- डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
- अजीत सिहाग, एडवोकेट

अंतरराष्ट्रीय सम्पादक मंडल

- आशीष कुमार, गाजियाबाद
- डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी, नेपाल
- डॉ. निशीथ गौड, आगरा
- डॉ. राजेश शर्मा, श्रीगंगानगर
- श्री शियोन छन श्यू, चीन
- डॉ. ऋतु शर्मा ननन पांडे, नीदरलैंड
- डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
- श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
- डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
- डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
- डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
- डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी हैं।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है—बैंक : PUNJAB NATIONAL BANK Branch : Yamuna Vihar, Delhi-110053 IFSC : PUNB0225600 Account Holder : SANIA PUBLICATION Current Account No. 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति

वार्षिक 2500/- रु.

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc.,)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals	08 per paper	10 per paper
2.	Publications (other than Research papers)		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

भारत एवं श्रीलंका : सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य

भारत और श्रीलंका के संबंध केवल भौगोलिक निकटता अथवा राजनीतिक संपर्कों तक सीमित नहीं हैं; इनके मूल में सहस्राब्दियों से विकसित एक व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक और बौद्धिक अंतस्सम्बंध निहित हैं। हिन्द महासागर द्वारा जुड़े ये दोनों देश दक्षिण एशियाई सभ्यता के ऐसे महत्वपूर्ण केंद्र हैं, जहाँ इतिहास की दीर्घकालिक प्रक्रियाओं ने परस्पर संवाद, आदान-प्रदान और सांस्कृतिक सह-अस्तित्व की समृद्ध परंपरा निर्मित की है। इस दृष्टि से भारत और श्रीलंका का अध्ययन केवल दो देशों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन नहीं, बल्कि दक्षिण एशिया की साझा सभ्यतागत चेतना को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

भारत और श्रीलंका के सांस्कृतिक सम्बंधों की जड़ें प्राचीन काल से लेकर आज तक सभ्यता की गहराइयों तक विद्यमान हैं। बौद्ध धर्म के प्रसार-प्रचार ने दोनों देशों के बीच आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संवाद को विशेष आयाम प्रदान किया। सम्राट अशोक के काल से सम्बंधित परंपराओं तथा महेंद्र और संघमित्रा के श्रीलंका आगमन से जुड़ी ऐतिहासिक-सांस्कृतिक स्मृतियों ने दोनों देशों के मध्य संबंधों को एक विशिष्ट धार्मिक एवं सांस्कृतिक आधार प्रदान किया। बौद्ध दर्शन, कला, स्थापत्य, शिक्षा, साहित्य और लोकाचार के विभिन्न रूपों में इन अंतर्संबंधों की छाप आज भी देखी जा सकती है। इसके साथ ही रामायण, हिंदू परंपराओं, समुद्री व्यापार, भाषायी संपर्क और लोक-संस्कृतियों ने भी भारत-श्रीलंका संबंधों को बहुआयामी स्वरूप प्रदान किया है।

दोनों देशों की सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि निकटता का अर्थ पूर्ण समानता नहीं होता। भारत और श्रीलंका में अनेक समान सांस्कृतिक तत्त्वों के साथ-साथ विशिष्ट ऐतिहासिक अनुभवों, भाषायी विविधताओं, धार्मिक संरचनाओं और सामाजिक प्रक्रियाओं ने अपनी-अपनी विशिष्ट पहचान निर्मित की है। अतः इन दोनों समाजों का अध्ययन समानताओं की खोज के साथ-साथ उनकी विशिष्टताओं और अंतर्विरोधों को समझने की दृष्टि से भी आवश्यक है। यही तुलनात्मक दृष्टि मानविकी अध्ययन को अधिक व्यापक, संतुलित और वैज्ञानिक बनाती है।

समकालीन वैश्विक परिदृश्य में भारत और श्रीलंका के सम्बंधों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन और भी प्रासंगिक हो गया है। वैश्वीकरण, प्रवासन, पर्यटन, डिजिटल संचार, शिक्षा, साहित्यिक आदान-प्रदान और सांस्कृतिक कूटनीति ने दोनों समाजों के पारस्परिक सम्पर्क के नए आयाम निर्मित किए हैं। सीमाओं से परे विकसित हो रहे सांस्कृतिक संवाद ने यह सिद्ध किया है कि संस्कृति केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान में निरंतर निर्मित और पुनर्निर्मित होने वाली जीवंत प्रक्रिया है। इसलिए भारत-श्रीलंका संबंधों को समझने के लिए ऐतिहासिक स्रोतों के साथ-साथ समकालीन सामाजिक अनुभवों और सांस्कृतिक परिवर्तनों का अध्ययन भी आवश्यक है।

इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में 'भारत एवं श्रीलंका : सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य' विषय पर केंद्रित यह शोध-पत्रिका मानविकी के विभिन्न अनुशासनों के मध्य अंतःविषयक संवाद स्थापित करने का एक प्रयास है। इसका उद्देश्य भारत और श्रीलंका के सामाजिक तथा सांस्कृतिक संबंधों से संबंधित विविध पक्षों पर मौलिक, प्रमाण आधारित और आलोचनात्मक शोध को एक साझा मंच प्रदान करना है। इसमें हिंदी, इतिहास, दर्शनशास्त्र एवं अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य, तुलनात्मक साहित्य, संस्कृति-अध्ययन, दर्शन, धर्म-अध्ययन, लोक-संस्कृति, कला, भाषा-विज्ञान, समाजशास्त्रीय विमर्श तथा अन्य संबद्ध मानविकी अनुशासनों के माध्यम से दोनों देशों के संबंधों को समझने की संभावनाएँ निहित हैं।

विशेष रूप से साहित्य भारत और श्रीलंका के सांस्कृतिक संबंधों को समझने का एक सशक्त माध्यम है। साहित्य में किसी समाज का केवल बाह्य जीवन ही नहीं, बल्कि उसकी सामूहिक स्मृति, सांस्कृतिक चेतना, लोकविश्वास, मानवीय संवेदना और ऐतिहासिक अनुभव भी अभिव्यक्त होते हैं। भारतीय और श्रीलंकाई साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन से उन सांस्कृतिक बिंदुओं को पहचाना जा सकता है जहाँ दोनों समाज एक-दूसरे के निकट आते हैं और उन क्षेत्रों को भी समझा जा सकता है जहाँ उनकी स्वतंत्र सांस्कृतिक अस्मिताएँ आकार ग्रहण करती हैं। अनुवाद और अंतर्भाषिक संवाद इस प्रक्रिया को और अधिक व्यापक बनाते हैं।

इस शोध-पत्रिका का एक प्रमुख उद्देश्य भारत और श्रीलंका के संबंधों को किसी एक अनुशासन या एकांगी दृष्टिकोण में सीमित न रखकर बहुविषयी एवं अंतःविषयी परिप्रेक्ष्य में देखना है। सामाजिक संरचना, धार्मिक सह-अस्तित्व, लोक परंपराएँ, कला एवं स्थापत्य, साहित्यिक संपर्क, भाषायी अंतर्संबंध, शिक्षा, प्रवासन, स्त्री-अनुभव, पर्यावरणीय चेतना, सांस्कृतिक विरासत और समकालीन सांस्कृतिक कूटनीति जैसे विषय इस व्यापक अध्ययन के विविध आयाम हो सकते हैं। इस प्रकार की बहुआयामी दृष्टि दोनों देशों के संबंधों की जटिलता और जीवंतता को अधिक समग्रता से उद्घाटित करने में सहायक होगी।

शोध की गुणवत्ता केवल उसके विषय की महत्ता से निर्धारित नहीं होती, बल्कि उसकी पद्धतिगत दृढ़ता, स्रोत-संपदा, तर्कसंगति और मौलिकता भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती है। अतः इस पत्रिका में प्रकाशित शोध-लेखों से अकादमिक प्रामाणिकता, संदर्भों की विश्वसनीयता, शोध-पद्धति की स्पष्टता, मौलिक चिंतन और बौद्धिक ईमानदारी की अपेक्षा की जाती है। हमारा उद्देश्य ऐसी शोध-संस्कृति को प्रोत्साहित करना है जिसमें स्थापित धारणाओं का विवेकपूर्ण पुनर्परीक्षण हो और नवीन प्रश्नों तथा नवीन व्याख्याओं के लिए पर्याप्त अवकाश उपलब्ध हो।

डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा की समृद्ध शैक्षणिक एवं शोधपरंपरा के संदर्भ में इस प्रकार का प्रयास विशेष महत्त्व रखता है। आगरा स्वयं भारतीय इतिहास, संस्कृति, कला, स्थापत्य और साहित्य की बहुविध परंपराओं का महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। ऐसी ऐतिहासिक-सांस्कृतिक भूमि से भारत और श्रीलंका के मध्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक अंतर्संबंधों पर केंद्रित शोध-विमर्श को आगे बढ़ाना दक्षिण एशियाई अध्ययन की व्यापक परंपरा में एक सार्थक अकादमिक हस्तक्षेप के रूप में देखा जा सकता है।

हमारा विश्वास है कि भारत और श्रीलंका के संबंधों को समझने का सबसे सार्थक मार्ग केवल राजनीतिक या कूटनीतिक विमर्श से होकर नहीं जाता, बल्कि उन सामान्य मनुष्यों, समुदायों, परंपराओं, भाषाओं, साहित्यिक कृतियों, धार्मिक विश्वासों और सांस्कृतिक स्मृतियों के अध्ययन से भी होकर गुजरता है जिन्होंने इन संबंधों को वास्तविक अर्थों में जीवित रखा है। संस्कृति की यही मानवीय आधारभूमि दोनों देशों के मध्य संवाद को स्थायित्व और आत्मीयता प्रदान करती है।

यह शोध-पत्रिका इसी सांस्कृतिक आत्मीयता को अकादमिक विमर्श में रूपांतरित करने का प्रयास है। हमारा उद्देश्य अतीत के गौरव का मात्र पुनर्स्मरण करना नहीं, बल्कि इतिहास और संस्कृति के उन अंतर्संबंधों को नए प्रश्नों और समकालीन शोध-दृष्टियों के आलोक में पुनर्परिभाषित करना है, जो भारत और श्रीलंका के वर्तमान तथा भविष्य के संबंधों को समझने में सहायक हो सकते हैं।

अंततः यह शोध-पत्रिका एक निष्कर्ष नहीं, बल्कि संवाद का आरंभ है ऐसा संवाद जो इतिहास से वर्तमान तक, परंपरा से आधुनिकता तक और स्थानीय अनुभव से वैश्विक परिप्रेक्ष्य तक विस्तृत है। आशा है कि इसमें प्रकाशित शोध-लेख भारत और श्रीलंका के सामाजिक एवं सांस्कृतिक संबंधों के अध्ययन को नई दिशाएँ प्रदान करेंगे तथा मानविकी के क्षेत्र में अंतःविषय और तुलनात्मक शोध की संभावनाओं को अधिक सशक्त बनाएँगे।

- प्रो. प्रदीप श्रीधर

विषयानुक्रमणिका

वाल्मीकि रामायण तथा गोस्वामी तुलसीदास का रामचरितमानस : साम्य-वैषम्य	09
प्रो. उषा यादव	
पर्यटन की दृष्टि से भारत और श्रीलंका के संबंध	14
प्रो. मनीषा	
श्रीरामचरित मानस में लंका का सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य	21
प्रो. (डॉ.) गरिमा जैन, डॉ. पन्नन बाजपेई	
वाल्मीकि रामायण और कंब रामायण में आदर्श राजधर्म की अवधारणा	27
प्रो. (डॉ.) हेमलता सुमन	
भारतीय ज्ञान परम्परा में बौद्ध दर्शन का अवदान	33
डॉ. सोरन सिंह	
विश्वास के राम : एक अध्ययन	37
ज्योति मित्तल, प्रो. चंद्रशेखर शर्मा	
आगरा की श्रीरामबरात : भारतीय संस्कृति का अमृत-कलश	42
कामना सिंह	
भारत-श्रीलंका पर्यटन संबंध : सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य	47
सामु केराई	
सीता और शबरी की संवेदनशील भूमिकाएं	51
कु. ममता	
वैश्विक परिप्रेक्ष्य में डॉ. अमिता दुबे का कथा-साहित्य : एक आलोचनात्मक अध्ययन	55
रविन्द्र चौधरी, प्रो. (डॉ.) निधि शर्मा	
वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लोक साहित्य का यथार्थ स्वर : गीत-नवगीत	62
कृष्ण कुमार यादव 'कनक'	
तमिल साहित्य और भारतीय भक्ति चेतना	70
कुसुम डूंगरवाल	
रामसेतु, रामेश्वरम, अग्नितीर्थ और धनुषकोडी में पर्यटन - एक भौगोलिक अध्ययन	76
डॉ. चन्द्रशेखर	
Hell and Retribution in the Elahera Rock Inscription	82
Ven. Beragagama Saddhananda Thero	
Leading with Sīla: Applying the Buddhist Five Precepts as an Ethical Framework for Human Resource Management and Organizational Well-being	92
Ven Godamune Chullanaga Thero	

Buddhism, Tamil Heritage and Ramayana Traditions: Three Cultural Pillars of India–Sri Lanka Relations An Expanded Legal, Historical, Diplomatic and Socio-Cultural Analysis: 1961–2026	99
Dr. Jatin V. Adesara, Dr. Suresh G Sorathia, Mr. Sapan N Shah	
A Comparative Study of Women’s Status In Srilanka And India: Social, Economic & Political Perspective	104
Prof. Neelima Singh	
The Impact Of Commercial Banks On Socio-economic Development	111
Shaifali	
Buddha Magga: Relevance in the Contemporary World	115
Prof. Neelam Singh	
India and Sri Lanka in the Indian Ocean: Geopolitical Balancing and Strategic Interdependence	121
Mrs Ekta Agrawal	
Buddhism Beyond Borders: Tradition, Transformation and Social Change in a Globalized World	130
Dr. Sangita Kumar	
Reimagining India-Sri Lanka Relations the Interface of Geostrategy, Regional Geopolitics and Cultural Diplomacy	141
Prof. Sarika Dubey	
Security Systems in Libraries: Protecting Knowledge, Preserving Access	159
Akhil Sharma	
Sacred Crossings: The Bodhi Tree, Shared Sacred Spaces and the Spiritual Imagination of India and Sri Lanka	166
Dr. Shereen Zaidi	
INDIA-SRI LANKA : Historical, Cultural and Social Relations : A comprehensive study	173
Prof. Geeta Yadvendu	
The Antiquity of the Buddhist Concept of Sustainable Development: An inquiry into Environmental Conservation, conservation and management through Sri Lankan Inscriptions	179
Ven.Beragagama Saddhananda thero, Ven. Gammahegewewa Amitha thero	
Trade Relations Between India and Sri Lanka: From the Itihasa of the Ramayana to Contemporary Economic Partnership	190
Shruti Das, Anshika Mittal	
Buddhist Psychology and Mental Well-Being: A Comparative Perspective on India and Sri Lanka	197
P. M. G. Chathurangani	
From Dhamma to Discourse: A Linguistic Study of Early Buddhism	205
Pallavi Arya	
India - Sri Lanka in the Indian Ocean Region : An Analysis of Geo - economic and Geo - political Challenges	213
Dr Bhawna Pokharna	

Indian Classical Music Therapy and Its Cultural Relevance in South Asia: An Experimental Case Study	220
Saroda Debi Sheba	
Is Abhidhamma Exclusively for Devas? Canonical Evidence and the Role of Ultimate Realities in Human Liberation	221
Ven. Bingiriye Sunandabodhi	
An Analytical Study of Buddhist Non-Harming Ethics and Youth Violence Among Generation Z with Special Reference to the Kumâra Sutta	222
Ven. Kalalgoda Sudarshika	
The Origin and Evolution of Buddhism: Social , Cultural and Ideological Perspective	223
Pooja Kasana, Prof. Alpana Mohan	



वाल्मीकि रामायण तथा गोस्वामी तुलसीदास का रामचरितमानस : साम्य-वैषम्य

प्रो. उषा यादव

वस्तुतः प्राचीन रामसाहित्य का निर्विवाद स्रोत वाल्मीकि रचित रामायण ही है, जिसके भव्य सृजन के प्रति तुलसी स्वयं विनत भाव से कहते हैं—

“बंदउ मुनि पद कंज, रामायन जेहि निरमयउ।”

आदिकवि वाल्मीकि से लेकर आज तक श्रीराम की न जाने कितनी प्रतिमाएँ उकेरी गई हैं, किंतु अतीत, वर्तमान और भविष्य में कहीं भी तुलसी के राम की समकक्षता में कोई प्रतिमा न आ सकी है, न आ सकेगी। तुलसी के राम यथार्थ में वही हैं, जो अन्य कवियों के राम हैं, तदपि आदर्श में भिन्न हैं। तुलसी ने उन्हें अपने स्वभाव, संस्कार एवं पात्रता के अनुरूप गढ़ा है। तुलसी के राम ससीम में असीम और असीम में ससीम हैं। तुलसी के राम निराकार में साकार और साकार में निराकार हैं। तुलसी के राम ज्ञान में भक्ति और भक्ति में ज्ञान हैं। वे अनन्त हैं— ‘हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।’ तुलसी के राम आनंद का एक ऐसा सिंधु हैं, जिनकी एक बूंद से संपूर्ण त्रैलोक्य सुखी हो जाता है।

गोस्वामी जी जिस समय ‘मानस’ का सृजन कर रहे थे, उनके दृष्टि-पथ से प्राचीन रामसाहित्य ओझल हो ही नहीं सकता था। कहा जाता है कि ऋषि वाल्मीकि ही राम-चरित्र का गुणगान करने के लिए इस धरा-धाम पर तुलसी के रूप में अवतरित हुए थे। यह बात सच हो या नहीं, पर यह निर्विवाद सच है कि तुलसी अवतार में वह श्रीराम के प्रति अपनी नूतन भावनाएँ लेकर प्रस्तुत हुए। आदिकवि ने अपने युगानुरूप आर्य-संस्कृति का चरमोत्कर्ष दिखाने के लिए राम को मर्यादापुरुषोत्तम रूप में चित्रित किया था। इसके विपरीत तुलसी ने राम को मर्यादापुरुषोत्तम रूप के साथ ही भक्ति की अन्यान्य भावप्रवण दृष्टियों के अनुरूप भी प्रस्तुत किया है। यदि एक ओर वाल्मीकि रामायण में आर्यों की सामाजिक रीति-नीति का सर्वांगीण चित्रण है, तो दूसरी ओर तुलसी ने रीति-नीति का सामान्य संस्पर्श भर दिया है, उसके विशद चित्रण में उनकी रुचि नहीं रही है।

तुलनात्मक अध्ययन के और अनेक बिंदु भी हैं

वाल्मीकि ने ‘रामायण’ में वीरत्व का और वीर रस के साथ-साथ शांत रस का सुंदर परिपाक किया है, जबकि ‘मानस’ में आद्योपांत भक्ति-रस सन्निहित है। महाकवि वाल्मीकि ने प्रकृति के उन्मुक्त प्रांगण में रहकर ‘रामायण’ रची थी। वन-प्रदेश, निर्झर, पर्वतश्रेणियाँ, सरिताएँ उनकी तपोभूमि का अभिन्न अंग रहीं। इस कारण प्रकृति-नटी के सौंदर्यांकन में उनकी विशेष अभिरुचि रही। उनके प्रकृति-वर्णन में जो लास्य, सौंदर्य एवं मधुरिमा है, वह अन्यतम है। दूसरी ओर तुलसी के ‘मानस’ में प्रकृति आनुषंगिक रूप में आई है। सप्रयास नहीं, सहज रूप में। वह प्रधान भूमिका में न रहकर सहवर्ती भूमिका में रही है।

बात यदि वर्णन में शिष्टता और मर्यादा की करें, तो वाल्मीकि के आदिकालीन युग के सांस्कृतिक परिवेश में इस बिंदु का कठोरता से पालन करना संभव न था। पर गोस्वामीजी ने सामाजिक शिष्टाचार की उच्च भूमि पर पहुँचकर अपने वर्णन को कहीं भी अमर्यादित नहीं होने दिया है। वाल्मीकि के समय में आर्य संस्कृति की ध्वजा का आरोहक वैदिक युग था, जिसमें

सांस्कृतिक संघर्षों को हवा देने वाले विविध मत-मतान्तर नहीं उपजे थे। जबकि तुलसी का काल सांप्रदायिक-सांस्कृतिक संघर्षों का था। ऐसी स्थिति में दोनों कवियों के ऊपर अलग-अलग किस्म का दायित्व-बोध था। वाल्मीकि को आर्य संस्कृति का सीधा-सरल मार्ग निर्दिष्ट करना था, जबकि तुलसी को संघर्षों की आपाधापी के समय समन्वय की बात सोचनी थी। कहना न होगा, दोनों महाकवियों ने अपना-अपना दायित्व पूरी निष्ठा से निभाया।

पात्रों के चरित्रांकन को लेकर भी वाल्मीकि और तुलसी का निजी दृष्टिकोण स्पष्ट परिलक्षित होता है। वाल्मीकि के पात्र यथार्थ रूप में चित्रित किये गये हैं, जबकि तुलसी के पात्र आदर्श की भावभूमि पर प्रतिष्ठित हैं। उन्हें अपने आदर्श रूप को सँजोये रखना है। विशेषतः ये पात्र भक्ति-रस से अनुप्राणित भी हैं। इस विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए भी तुलसी के पात्रों का चरित्रांकन अत्यंत कलापूर्ण और सौष्ठवयुक्त होना प्रशंसा की बात है।

कहा जाता है कि वाल्मीकि राम के समकालीन थे, पर राम के बारे में उनकी जानकारी नारद के मुँह से राम के चरित्र को सुनकर हुई। दूसरी ओर तुलसी तो काल की दूरियों को लाँघकर राम की निकटता का सुख महसूसते दिखाई देते हैं। यह सौभाग्य भवभूति और कालिदास को भी नहीं मिला। तुलसी ने अपने राम में जो कुछ देखा, जो कुछ पाया, वह उन्हें मनुष्य मानने से संभव न था। यह तो ईश्वर ही है, जो काल की दूरियों में सदा एकरस है। वह अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों में विद्यमान है। मनुष्य के रूप में देखते ही वह कालातीत न रहेगा। ऐसे में तुलसी अपने इष्टदेव राम को अपना आत्मीय, अपना सखा, अपना स्वामी कैसे मान सकेंगे?

वस्तु-विन्यास के संयोजन की दृष्टि से भी 'रामायण' और 'मानस' में भिन्नता है। तुलसी का अभीष्ट था - श्रीराम के चरित्र को गरिमामंडित करना। तुलसी के राम दया, करुणा, सदाशयता के पुंजीभूत हैं। उनके सर्वगुणसंपन्न कारुणिक रूप को यह शोभा नहीं देता कि गर्भवती सीता का परित्याग करें। भक्त की दृष्टि में तो राम-सीता अभिन्न हैं।

भक्त तुलसी मानते हैं कि जो श्रीसीतारामजी, वाणी और उसके अर्थ तथा जल और उसकी लहर की भाँति अभिन्न हैं, जिन्हें दीन-दुखी अति प्रिय हैं, उनके चरणों की वह वंदना करते हैं। तुलसी के राम वह राम नहीं हैं, जो एक धोबी की शंकानिवारण हेतु परम साध्वी सीता को त्याग दें। यदि सीता की अग्निपरीक्षा न हुई होती, तो एक बार उनका यह निर्णय गले के नीचे उतर भी जाता, पर परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने के बाद भी कहाँ तक सही रहता? इसीलिए तुलसी ने इस प्रसंग को छुए बिना राम के राज्याभिषेक के साथ ही कथा का समापन कर दिया।

वस्तुतः तुलसी के राम आचरण की अयोध्या के अपराजेय सम्राट हैं। उनका आचरण अनुपमेय है। धर्म के दसों लक्षण - धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध को एक साथ वहन करने में श्रीरामजी के स्कंध पूर्णरूपेण सक्षम हैं। इसीलिए वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड की कथा को, जो सीताजी के परित्याग से जुड़ी है, तुलसी ने अपने 'मानस' में कोई स्थान नहीं दिया। उन्होंने रामराज्य की स्थापना तक ही अपना कथा विन्यास रखा है। इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण की आरंभिक कथा - वाल्मीकि का नारद से मिलना, क्रौंच वध के अनंतर व्याध को शाप देना, ब्रह्मा की आज्ञा से 'रामायण' की रचना करना आदि - की भी 'मानस' में कोई जगह नहीं है। 'रामायण' में वर्णित सीताजी के जुड़वाँ बेटों- लव-कुश का अयोध्या जाना आदि अंश भी तुलसी के यहाँ ग्रहीत नहीं हैं।

वाल्मीकि 'रामायण' में घटनाओं की इतिवृत्तात्मकता है। वर्णन का विस्तार है। 'मानस' के वस्तु-विधान में कलात्मक सौष्ठव है। उदाहरण के लिए राम-जन्म की घटना देखी जा सकती है। तुलसी ने शुभ मुहूर्त आदि का विवरण देते हुए 'भये प्रकट कृपाला परम दयाला.....' लिखा है, जबकि वाल्मीकि ने इस प्रकार प्रकट होने की कोई चर्चा नहीं की है। इसी प्रकार श्रीराम के जन्म-काल का वर्णन भी दोनों ग्रंथों में है, पर तुलसी ने यहाँ जो अलौकिकता दिखाई है, वैसी कोई अलौकिकता वाल्मीकि रामायण में नहीं दर्शाई गई है।

अहल्या-उद्धार की घटना भी यद्यपि दोनों ग्रंथों में है, पर उसका रूप अलग-अलग है। वाल्मीकि के अनुसार वह शापित नारी घोर निर्जन वन में, सबकी दृष्टि से बचकर, निराहार, वायुभक्षण करती हुई कठोर तपस्या में रत थी और राम-लक्ष्मण के आने के बाद पवित्र होने पर उसे अपनी पूर्ववत् कांतिमय देहदृष्टि मिल गई। दूसरी ओर तुलसी ने शापित अहल्या को शिला

रूप में दिखाया है। प्रभु की परम पुनीत चरण-रज के स्पर्श मात्र से उसे शापमुक्ति एवं सद्गति प्राप्त होती है।

रामविवाह की घटना को रमणीयता प्रदान करने के लिए तुलसी ने पुष्पवाटिका में सीता और राम के परस्पर दृष्टि-विनिमय और पूर्वराग की जो चारु भूमिका निर्मित की है, वह वाल्मीकि रामायण में नहीं है। इसी प्रकार राजा जनक की राजसभा में सीता स्वयंवर का जो मनोहारी जीवंत चित्र तुलसी ने खींचा है, वैसा वाल्मीकि रामायण में नहीं है। तुलसी ने रोमांचक पृष्ठभूमि प्रस्तुत की है। एक ओर धनुष-भंग से उपजा हर्ष, दूसरी ओर परशुराम के क्रोध से उपजा कोलाहल, इस दृश्य-विधान की चित्रोपमता अवर्णनीय है। वाल्मीकि में हमें यह सौंदर्य नहीं मिलता। इसी प्रकार राम के विवाह संस्कार के संपादित होने में भी तुलसी ने जो चुहल और माधुर्य का परिवेश सजाया है, वह भी अपने आपमें अद्वितीय है।

इसी प्रकार राम के राज्याभिषेक के प्रसंग को भी दोनों ग्रंथों में एक सदृश नहीं प्रस्तुत किया गया है। वाल्मीकि ने अंतःपुर में राम और राजा दशरथ की एकान्तिक वार्ता दिखाई है, जिसमें पिता का पुत्र से कथन है कि हम तुम्हें कल ही युवराज घोषित कर देना चाहते हैं। भरत के आने से पूर्व ही यह कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिए, अन्यथा बाद में कोई विध्न पड़ सकता है। मंथरा की कुचाल भी दोनों ग्रंथों में एक जैसी नहीं है। वाल्मीकि ने तुलसी की भाँति सरस्वती द्वारा दासी की बुद्धि भ्रष्ट नहीं कराई है। इसकी जगह वह स्वयं अपनी कुटिलता के चलते कैकेयी की मति फेरती है और उसे दो वर माँगने के लिए उकसाती है। वाल्मीकि ने इस विवरण को देते समय राजा दशरथ के पुनरपि समझाने की बात कही है, पर कैकेयी जब कुछ समझना नहीं चाहती, तो वह क्रुद्ध होकर कहते हैं कि मेरे मरने के बाद न तो तू देह का संस्पर्श करे और न भरत दाह संस्कार करने के अधिकारी हों। तुलसी के 'मानस' में यह बात नहीं कही गई है।

वाल्मीकि के अनुसार सुमंत्र के साथ जब राम कैकेयी के भवन में गये, तो लक्ष्मण भी छिपकर वहाँ पहुँचे। दशरथ ने राम से कहा कि उन जैसे स्त्रैण को कारागृह में डालकर वे राज्यभार ग्रहण करें। इसमें कुछ भी अनुचित नहीं है। राम इसके लिए तैयार न हुए। इसी प्रकार जब राम विदा लेने के लिए माता कौशल्या के भवन में गये, तो वहाँ माता और लक्ष्मण ने उन्हें वनगमन से रोकने की बहुत चेष्टा की। लक्ष्मण ने तो यहाँ तक कहा कि आप किस भाग्य की प्रबलता सिद्ध कर रहे हैं? यह भाग्य तो पौरुष के सामने कुछ भी नहीं है। उचित यही है कि स्त्री के वशीभूत होकर अंधा हो जाने वाले नृप को कारागार में पहुँचा दिया जाये और उसके जितने भी हिमायती हैं, उन्हें युद्धभूमि में धूल चटा दी जाये। राजा के इन पक्षधरों में भले ही भरत-शत्रुघ्न तो क्या, देवराज इंद्र भी हों, मैं उनके साथ रणभूमि में दो-दो हाथ करने को तैयार हूँ।

इसी प्रकार इस अवसर पर वाल्मीकि रामायण की सीता भी राम से निवेदन करती हैं कि आपने बहुत दिनों से मुझे वन-भ्रमण का आश्वासन दे रखा है, पर वह घड़ी आज तक नहीं आई। यह घड़ी अनायास आई है, इसलिए आपके साथ वन जाना मेरा अधिकार है। यदि आप मुझे अपने साथ ले जाने से डरते हैं, तो कैसे पुरुष हैं? मेरे पिता यदि पहले इस सत्य से अवगत होते, तो एक कायर पुरुष को अपना जामाता कदापि न बनाते। यह सारा संवाद तुलसी के 'मानस' में नहीं है।

वाल्मीकि एवं तुलसी दोनों की रामकथा में रामवनगमन का चित्रण है। इस अवसर पर अयोध्या-वासियों की अकुलाहट भी दोनों जगह चित्रित है। जनसमूह राम के पीछे-पीछे तमसा नदी के तट तक पहुँचता है और वहीं तट पर जब थककर सो रहता है, तो राम इस अवसर का लाभ उठाते हैं। वे सुमंत्र से कहकर, मार्ग बदलकर रथ हँकवाते हैं। पुरवासियों को जब प्रातःकाल राम के चले जाने की सूचना मिलती है, तो वे सब निराश होकर अयोध्या लौट जाते हैं। उधर राम शृंगवेरपुर पहुँचे और निषाद से उनकी भेंट हुई। यह प्रसंग वाल्मीकि और तुलसी दोनों ने ही वर्णित किया है।

रात्रि-बेला में श्रीराम और सीताजी के सो जाने पर लक्ष्मण एवं निषाद के बीच जो संवाद होता है, वह दोनों ग्रंथों में भिन्न है। वाल्मीकि रामायण में लक्ष्मण ने निषाद के समक्ष राम के उस सुख-सुविधा से आपूर्ण जीवन का वर्णन किया है, जिसका वे अभी तक अयोध्या के राजभवन में रहते हुए उपभोग कर रहे थे। उस परिप्रेक्ष्य में वर्तमान के संकटों की गुरुता भी वाल्मीकि रामायण में वर्णित है। इन बातों को सुनकर निषाद के दुःखी हो जाने को भी वहाँ चित्रित किया गया है। 'मानस' में ऐसा कुछ नहीं है। लक्ष्मण ने राम का परमार्थ स्वरूप चित्रित किया है और निषाद द्वारा ज्ञान दिये जाने की बात कही गई है। लक्ष्मण और निषाद की यह ज्ञान-वार्ता वाल्मीकि रामायण में नहीं है।

‘मानस’ को केवट प्रसंग अपने आप में अद्वितीय है। इसकी मौलिक उद्भावनाएँ इस प्रकार हैं— केवट द्वारा राम के पाँव धोने की जिद और इस दृढ़ता की वजह बताना। राम का उसके प्रेम के वशीभूत होकर पाँव धोने की आज्ञा देना। केवट का उतराई लेने से इंकार कर देने पर श्रीराम का उसकी भक्तिभावना से गद्गद हो उठना। राम का पार्थिक पूजन। सीता की माँ गंगा से विनय और प्रत्युत्तर में गंगाजी के आशीर्वचन। राम, सीता, लक्ष्मण का नदी पार कर लेने के बाद वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचना। मुनि का प्रसन्नतापूर्वक उनके चित्रकूट में रहने की बात कहना। राम का इस प्रस्ताव को स्वीकारना। चित्रकूट में पर्णकुटी बनाकर राम-सीता-लक्ष्मण का रहना। ‘रामचरितमानस’ के उपर्युक्त प्रसंग-तुलसी के वर्णन-कौशल के द्योतक हैं। इनकी भावप्रवणता की कोई तुलना नहीं।

इसी प्रकार चित्रकूट में राम-भरत का पुनर्मिलन भी ‘मानस’ का अत्यंत प्रभावशाली एवं सौंदर्यमंडित प्रसंग है। वाल्मीकि रामायण में इस अवसर पर निषादराज का माथा ठोकना स्वाभाविक प्रतीत होता है और उसका स्पष्ट शब्दों में यह कहना, “आप सेना लेकर राम के पास किस प्रयोजन से जा रहे हैं।” आतंरिक उद्वेग का सूचक है। ‘मानस’ में निषादराज से ऐसा कोई प्रश्न नहीं किया गया है। यहाँ निषादराज भरत के ससैन्य आगमन से शंकित जरूर होते हैं और अपनी सेना को सावधान रहने के लिए भी कहते हैं, पर भरत से मिलने पर और आगमन का प्रयोजन जानने पर सच्चे मित्र की भाँति उनकी मदद करते हैं। यहाँ पर भी तुलसी ने भक्ति की जो महिमा दिखाई है, वह अत्यंत श्रेष्ठ और मनोरम बन पड़ी है। चित्रकूट में राजा जनक के आगमन की जो घटना ‘मानस’ में वर्णित है, वह भी वाल्मीकि रामायण में नहीं है।

काक वेशधारी जयंत के विषय में वाल्मीकि ने लिखा है कि उसने सीताजी की छाती में चोंच और चंगुल मारकर उन्हें परेशान किया, जबकि तुलसी ने ‘सीता चरन चोंच हति भागा’ कहकर सीताजी के पाँव में उसके चोंच मारने की बात द्वारा यह विवरण दिया है। अत्रि मिलन, विराध वध, शरभग दर्शन और उनका शरीर छोड़ना, मुनियों का एक साथ आकर राक्षसों के वध की प्रार्थना करना, सुतीक्ष्ण एवं अगस्त्य के मिलन की घटनाएँ दोनों ग्रंथों में हैं अवश्य, परंतु ‘मानस’ में इन ऋषियों को भगवान मानकर इनकी स्तुति की गई है, जबकि ‘रामायण’ में ऐसा नहीं है। वाल्मीकि ने विराध का विस्तृत समाचार देते हुए मुनियों के आश्रम तथा वन्य जीवन के जो शोभाशाली दृश्य उक्रे हैं, वे ‘मानस’ में नहीं हैं।

शूर्पणखा प्रसंग का वृत्तांत भी दोनों ग्रंथों में एक जैसा नहीं है। ‘रामायण’ में यह राक्षसी जब राम के सम्मुख उपस्थित होती है, तो अपने स्वाभाविक भयावह कुरूप एवं वृद्धा रूप में है, जबकि ‘मानस’ में उसे सजी-धजी अवस्था में पहुँचते दिखाया गया है। राम के द्वारा मारीच वध का प्रसंग भी दोनों ग्रंथों में समाहित होते हुए भी एक सदृश नहीं है। उसमें थोड़ा अंतर है। वाल्मीकि ने ‘रामायण’ में सीता के मुँह से लक्ष्मण के प्रति दुःशील, कठोरहृदय, भरत का गुप्तचर, दुष्ट, कुल-कलंक आदि शब्द कहलाये हैं, जो ‘मानस’ में नहीं हैं।

जटायु प्रसंग भी दोनों ग्रंथों में ग्रहीत है, पर वाल्मीकि ने तुलसी की भाँति जटायु का राम-नाम उच्चारते हुए राम-धाम जाना नहीं दिखाया है। शबरी प्रसंग भी दोनों ग्रंथों में है, तदपि कुछ भिन्नता लिये हुए।

ऋष्यमूक पर्वत पर राम-लक्ष्मण को आते देखकर सुग्रीव का शंकित होना और भेद लेने के लिए हनुमान को भेजना दोनों ग्रंथों में है, तदपि कुछ परिवर्तित रूप में। वाल्मीकि ने हनुमान को भिक्षु रूप में भेजा है, जबकि तुलसी ने बटु रूप में। ‘मानस’ में थोड़े संवाद के बाद ही हनुमान उन्हें पहचान कर राम-भक्ति में लीन हो जाते हैं, जबकि ‘रामायण’ में वह लंबे समय तक लच्छेदार संस्कृत बोलते दिखाये गये हैं। यहाँ तक कि राम भी अपने भाई से उनकी वाक्पटुता, भाषा की शुद्धता व माधुर्य की प्रशंसा करते हैं।

इसी प्रकार बलि प्रसंग में भी दोनों ग्रंथों में छुटपुट अंतर है। ‘मानस’ में राम के वन-प्रवास के वर्षाकालीन दिनों में देवताओं द्वारा निवास हेतु गुफा निर्माण की बात कही गई है। गुफा का वर्णन ‘रामायण’ में भी है, पर उसके देवताओं द्वारा बनाये जाने की बात नहीं है। इस समय वाल्मीकि ने वर्षाकालीन प्राकृतिक सौंदर्य का जो सुंदर-मनोहारी विस्तृत वर्णन किया है, वह अपने आप में बेजोड़ है।

किष्किंधा कांड की कथा भी दोनों ग्रंथों में है, किंतु एक जैसी नहीं। वाल्मीकि ने सुग्रीव प्रसंग को अत्यंत विस्तार से,

पूरी रुचि के साथ वर्णित किया है, जबकि तुलसी इसे सांकेतिक रूप में लेते हुए आगे बढ़ गये हैं। विभिन्न प्रांतों के असंख्य वानरों के एक साथ होने और भिन्न-भिन्न दिशाओं में भेजे जाने का भी विस्तृत वर्णन वाल्मीकि में है, तुलसी में नहीं।

जाम्बवान के उत्साहवर्धक वचन सुनकर हनुमान का उछलकर पर्वत पर चढ़ जाना और वहाँ से छल्लांग मारकर समुद्र पार जाने की घटना के समय पर्वत की जो दशा हुई, उसका भी वाल्मीकि ने विस्तृत वर्णन किया है। हनुमान के मुष्टि प्रहार से लंकिनी का विनम्र होना तो वाल्मीकि ने भी दिखाया है, पर तुलसी की भाँति भक्तिरस में नहीं डूबे हैं। लंका में प्रवेश के बाद सूक्ष्मरूपधारी हनुमान का भवन-भवन घूमना वाल्मीकि 'रामायण' की विशेषता है। इस समय रावण के शयनागार में जो अद्भुत दृश्य दिखाई दिये, उसकी मनोरम प्रस्तुति भी हमारा मन मोह लेती है। हनुमान जब एक छोड़ दो-दो बार रावण के भवन में खोज कर भी सीता को नहीं पाते, तो उनके मन में संकल्प-विकल्प की आँधी चलने लगती है। इसी मध्य अशोक वाटिका पर दृष्टि पड़ने पर सोचते हैं कि क्या सीता वहाँ तो नहीं?

'रामायण' की ये घटनाएँ 'मानस' में भिन्न रूप में हैं। वहाँ यह चित्रित है कि रावण के भवन में खोज-बीन करने के बाद हनुमान को विभीषण का भवन दिखता है, जो उन्हें रामाय प्रतीत होता है और वहीं विभीषण के मुँह से उन्हें सीता का संपूर्ण वृत्तांत सुनने को मिलता है।

सीता को राम की मुद्रिका प्रदान करने के प्रति भी दोनों ग्रंथ आग्रही हैं, पर वर्णन में अंतर है। वाल्मीकि की रामकथा में पहले हनुमान ने सीता के समीप आकर राम के शारीरिक सौष्ठव का वर्णन किया, राम ने वानरों के साथ कैसे मैत्री जोड़ी, यह बताया और फिर पहचान के रूप में मुद्रिका दी। दूसरी ओर 'मानस' में सीता का अशोक वृक्ष से स्वयं को भस्मीभूत करने के लिए अंगार की याचना को वृक्ष पर चढ़े हनुमान सुन लेते हैं। वह राम की मुद्रिका को इसी समय नीचे फेंकते हैं, जिसे अशोक वृक्ष द्वारा दिया गया अंगार समझकर ही सीता उठाती है।

वाल्मीकि के अनुसार वाटिका-विध्वंस के समय रावण के द्वारा एक के बाद एक अनेक वीर भेजे गये थे और हनुमान द्वारा उनको समाप्त कर देने के बाद अक्षय कुमार को भेजा गया। तुलसी ने अन्य वीरों का चित्रण न करते हुए सीधे अक्षय कुमार का ही भेजा जाना दिखाया है। तुलसी ने हनुमान को सीता से आज्ञा लेकर फल खाने के लिए जाना दिखाया है, जबकि वाल्मीकि ने इसका कोई उल्लेख नहीं किया कि सीता की अनुमति से हनुमान फल खाने गये हैं। वहाँ तो स्पष्ट उल्लिखित है कि रावण का विशेष रहस्य जानने और उससे मिलने का अवसर खोजने के लिए ही हनुमान ने वाटिका-ध्वंस की युक्ति निकाली। 'मानस' के हनुमान ने रावण को रामभक्ति का उपदेश दिया है, जबकि 'रामायण' में उन्होंने नीति का अर्थ समझाया है। वाल्मीकि ने लंका-दहन के बाद हनुमान की आकुलता प्रदर्शित की है कि कहीं इस ज्वाला से सीता भी तो नहीं जल गई? 'मानस' में इसका कोई उल्लेख नहीं है। यहाँ तक कि विभीषण का गृह भी सुरक्षित बताया गया है।

तुलसी की भाँति वाल्मीकि ने यह नहीं दिखाया है कि विभीषण के समझाने पर कुपित रावण चरण-प्रहार करता है। वहाँ केवल दुर्वचनों की बात कही गई है। शरणागत विभीषण और श्रीराम का जो संवाद 'मानस' में है, वह भी वाल्मीकि रामायण की राम-विभीषण वार्ता से पृथक है।

सेतुबंध के अवसर पर तुलसी ने पहले धरती पर रामेश्वर लिंग स्थापना और पूजा की बात कही है, जिसका वाल्मीकि रामायण में कोई विवरण नहीं है। अंगद का दूत बनकर रावण की सभा में जाना वाल्मीकि रामायण में भी है, पर इसमें तुलसी ने कुछ बातें बढ़ा दी हैं। निशाचरों और वानरों के युद्ध का जो विस्तृत वर्णन वाल्मीकि ने किया है, वह तुलसी ने नहीं किया।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वाल्मीकि और तुलसी द्वारा सृजित रामकथा में कई स्थानों पर पर्याप्त विभेद है। तुलसीदास ने ऐसा कई कारणों से किया है। कहीं राम का अवतार दिखाने के लिए, कहीं शील की स्थापना के लिए, कहीं भक्ति भावना के प्रस्फुटन के लिए और कहीं काव्यसौष्ठव द्वारा वर्णन में रोचकता-प्रवाह लाने के लिए। दोनों ग्रंथों में वर्णित रामकथा के साम्य-वैषम्य को देखकर हमें इसकी प्रतीति हो जाती है।

73, नॉर्थ ईदगाह कॉलोनी, आगरा-10, मो.: 9012818025



पर्यटन की दृष्टि से भारत और श्रीलंका के संबंध

प्रो. मनीषा

सारांश—पर्यटन के दृष्टिकोण से भारत और श्रीलंका के सम्बन्ध अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। दोनों देश ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध हैं। दोनों देश भौगोलिक निकटता के साथ साथ रामायणकाल और बौद्ध धर्म के साझा इतिहास से जुड़े हुए हैं, जो इनके पर्यटन सम्बन्ध का केन्द्र बिन्दु हैं। भारत, श्रीलंका के लिए पर्यटन का सबसे बड़ा स्रोत रहा है। हर साल लाखों भारतीय सैलानी श्रीलंका की यात्रा करते हैं। श्रीलंका सरकार भारतीय पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए अक्सर वीजा मुक्त प्रवेश की सुविधा प्रदान करती है। दोनों देशों के बीच पर्यटन सम्बन्धों के मुख्य स्तम्भ हैं—रामायण सर्किट, बौद्ध पर्यटन, कनेक्टविटी और क्रूज पर्यटन तथा आर्थिक सहयोग इत्यादि।

श्रीलंका में स्थित अशोक वाटिका, रावण एला और मनावरी मंदिर जैसे स्थल भारतीय हिंदुओं के लिए आस्था के केंद्र हैं। सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा द्वारा श्रीलंका में प्रचार प्रसार किया गया था। श्रीलंका के बौद्ध श्रद्धालु भारत में बोधगया, सारनाथ, और कुशीनगर जैसे पवित्र स्थलों के दर्शन के लिए बड़ी संख्या में आते हैं। दोनों देशों के बीच हवाई सेवाओं के अलावा क्रूज की सेवाओं की भी शुरुआत की गई है।

पर्यटन श्रीलंका की अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्तम्भ है। भारतीय पर्यटकों की भारी संख्या श्रीलंका के होटल उद्योग, स्थानीय व्यवसायों और रोजगार को सीधा सम्बल प्रदान करती है। संक्षेप में भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक आदान प्रदान और आर्थिक साझेदारी का सशक्त सेतु है।

बीज शब्द—महावंश, विल्हेल्मगाइगर, बोधिवृक्ष, संघमित्रा, मिहिल्ले, कैन्डी, दीपवंश।

प्रस्तावना

भारत और श्रीलंका के संबंधों का इतिहास अत्यंत प्राचीन, बहुआयामी और निरंतर विकसित होने वाला है। दोनों देशों के बीच भौगोलिक निकटता, समुद्री संपर्क, व्यापार, बौद्ध धर्म, रामायण-परंपरा, भाषा, कला, साहित्य और सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने सदियों से एक-दूसरे को प्रभावित किया है। इन सभी आयामों में पर्यटन एक ऐसा क्षेत्र है, जिसने प्राचीन धार्मिक यात्राओं और तीर्थ-परंपराओं को आधुनिक अंतरराष्ट्रीय पर्यटन में परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भारत श्रीलंका के लिए केवल एक पड़ोसी देश नहीं है, बल्कि बौद्ध धर्म की जन्मभूमि, बुद्ध के जीवन से जुड़े पवित्र स्थलों की भूमि और रामायण की सांस्कृतिक स्मृतियों का प्रमुख केंद्र है। दूसरी ओर श्रीलंका भारत के लिए बौद्ध संस्कृति, थेरवाद परंपरा, प्राचीन सिंहली सभ्यता, अनुराधापुर, पोलोन्नरुवा, कैन्डी और समुद्री विरासत का महत्वपूर्ण पर्यटन क्षेत्र है। इसलिए भारत-श्रीलंका पर्यटन संबंधों को केवल आधुनिक पर्यटन उद्योग के संदर्भ में देखना पर्याप्त नहीं है; इसकी जड़ें प्राचीन तीर्थयात्रा और सांस्कृतिक संपर्क में हैं।

भारत सरकार भी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पर्यटन को पर्यटन-विकास की महत्वपूर्ण श्रेणी मानती है तथा बौद्ध और रामायण जैसे प्रसंग आधारित पर्यटन क्षेत्रों को विकसित करती रही है।

प्राचीन काल में पर्यटन और तीर्थयात्रा की पृष्ठभूमि

आधुनिक अर्थ में 'पर्यटन' की अवधारणा प्राचीन भारत और श्रीलंका में नहीं थी, किंतु धार्मिक तीर्थयात्रा, ज्ञान की खोज, व्यापारिक यात्रा और राजनयिक यात्राएँ उस समय व्यापक थीं। बौद्ध धर्म के प्रसार ने भारत और श्रीलंका के बीच यात्रा को विशेष धार्मिक अर्थ प्रदान किया।

तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में सम्राट अशोक के समय महेन्द्र के श्रीलंका जाने और बाद में संघमित्रा के वहाँ पहुँचने की परंपरा ने दोनों देशों के बीच धार्मिक यात्राओं की ऐसी परंपरा को जन्म दिया, जिसका प्रभाव आज तक दिखाई देता है। महावंश में महेन्द्र के श्रीलंका आगमन तथा बोधिवृक्ष की शाखा के भारत से श्रीलंका ले जाए जाने का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। महावंश की रचना पाँचवीं या छठी शताब्दी ईस्वी में भिक्षु महानाम से संबद्ध मानी जाती है और विल्हेल्म गाइगर ने इसका प्रसिद्ध अंग्रेजी अनुवाद किया।¹

महावंश में बोधिवृक्ष के प्रसंग में भारत से श्रीलंका जाने वाली यात्रा का वर्णन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ग्रंथ में कहा गया है कि बोधिवृक्ष और संघमित्रा को जहाज द्वारा श्रीलंका ले जाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि समुद्री मार्ग केवल व्यापार के लिए ही नहीं, बल्कि धार्मिक एवं सांस्कृतिक संपर्क के लिए भी महत्वपूर्ण था।

बौद्ध पर्यटन : भारत-श्रीलंका संबंधों की सबसे मजबूत कड़ी

भारत और श्रीलंका के पर्यटन संबंधों की सबसे महत्वपूर्ण आधारशिला बौद्ध पर्यटन है। बुद्ध के जीवन से जुड़े चार प्रमुख स्थल—लुंबिनी, बोधगया, सारनाथ और कुशीनगर—बौद्ध जगत के लिए अत्यंत पवित्र हैं। इनमें से बोधगया, सारनाथ और कुशीनगर भारत में स्थित हैं और श्रीलंका के बौद्ध तीर्थयात्रियों के लिए विशेष महत्व रखते हैं—

बोधगया

बोधगया वह स्थान है जहाँ सिद्धार्थ गौतम ने ज्ञान प्राप्त कर बुद्धत्व प्राप्त किया। इसलिए श्रीलंका के बौद्ध श्रद्धालुओं के लिए बोधगया का अत्यंत ऊँचा धार्मिक महत्व है।

ग्रंथों में अशोक द्वारा बोधिवृक्ष की शाखा को श्रीलंका भेजने की घटना को अत्यंत धार्मिक उत्साह के साथ प्रस्तुत किया गया है। इससे भारत और श्रीलंका के बीच एक ऐसा तीर्थ-संबंध स्थापित हुआ जिसमें एक देश को बौद्ध धर्म की मूलभूमि और दूसरे को उसके संरक्षण एवं विकास की भूमि के रूप में देखा जाने लगा।

सारनाथ

सारनाथ वह स्थान है जहाँ बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद अपना पहला उपदेश दिया। इसे बौद्ध परंपरा में धर्मचक्र-प्रवर्तन का स्थान माना जाता है। श्रीलंका से आने वाले बौद्ध यात्रियों के लिए सारनाथ का आकर्षण इसलिए भी अधिक है क्योंकि श्रीलंका की धार्मिक परंपरा महेन्द्र के माध्यम से भारत के बौद्ध धर्म से सीधे जुड़ी हुई मानी जाती है।

कुशीनगर

कुशीनगर बुद्ध के महापरिनिर्वाण का स्थान है। यहाँ स्थित महापरिनिर्वाण मंदिर और स्तूप श्रीलंकाई तथा अन्य देशों के बौद्ध यात्रियों को आकर्षित करते हैं।

इस प्रकार भारत में स्थित बौद्ध तीर्थस्थल श्रीलंका के धार्मिक पर्यटन का महत्वपूर्ण आधार हैं। भारत में बौद्ध सर्किट के विकास का उद्देश्य भी ऐसे स्थलों को परस्पर जोड़कर तीर्थ एवं सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देना है। भारत सरकार के अनुसार बौद्ध सर्किट और रामायण सर्किट जैसे थीम आधारित सर्किट पर्यटन अवसंरचना विकास का हिस्सा रहे हैं।

अनुराधापुर और भारत की बौद्ध विरासत

यदि भारत श्रीलंका के लिए बौद्ध तीर्थों की जन्मभूमि है, तो श्रीलंका स्वयं बौद्ध धर्म के संरक्षण और विकास का एक महत्वपूर्ण केंद्र है।

अनुराधापुर श्रीलंका की प्राचीन राजधानी और बौद्ध संस्कृति का प्रमुख केंद्र था। यहाँ स्थित श्री महाबोधि विशेष रूप से भारत और श्रीलंका के धार्मिक संबंधों का जीवंत प्रतीक है। परंपरा के अनुसार यह उसी बोधिवृक्ष की शाखा से विकसित हुआ जिसे संघमित्रा भारत से श्रीलंका लेकर गई थीं।

महावंश में बोधिवृक्ष के स्वागत का वर्णन करते हुए राजा और जनता द्वारा किए गए धार्मिक समारोहों का उल्लेख मिलता है। गाइगर के 1912 के अनुवाद में The Receiving of the Great Bodhi-tree अध्याय XVIII पृष्ठ 122 से आरंभ होता है और उसके आगे के पृष्ठों में वृक्ष के स्वागत तथा उसके धार्मिक महत्त्व का वर्णन है।

इस प्रकार अनुराधापुर आज केवल पुरातात्विक स्थल नहीं है; यह भारत-श्रीलंका धार्मिक पर्यटन का ऐतिहासिक प्रतीक है।

मिहितले : भारत से श्रीलंका तक बौद्ध धर्म की यात्रा का स्मारक

मिहितले को श्रीलंका में महेंद्र के आगमन से जोड़ा जाता है। परंपरा के अनुसार यहीं राजा देवानाम्पिय तिसस और महेंद्र की ऐतिहासिक भेंट हुई। इसलिए मिहितले भारत-श्रीलंका बौद्ध संबंधों का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल है।

एक भारतीय पर्यटक जब मिहितले पहुँचता है तो वह केवल प्राचीन खंडहर नहीं देखता, बल्कि उस ऐतिहासिक यात्रा की स्मृति से जुड़ा है जिसके माध्यम से भारत की बौद्ध परंपरा श्रीलंका पहुँची।

महावंश में महेंद्र के श्रीलंका आगमन और राजा देवानाम्पिय तिसस के धर्म-परिवर्तन की कथा मिलती है। ग्रंथ का अध्याय XIII 'The Coming of Mahinda' इस घटना का प्रमुख साहित्यिक स्रोत है। गाइगर के 1912 संस्करण में यह अध्याय लगभग पृष्ठ 88 से आरंभ होता है।

कैंडी और दंतधातु का पर्यटन

श्रीलंका का कैंडी शहर भारत-श्रीलंका धार्मिक संबंधों को समझने के लिए एक और महत्वपूर्ण पर्यटन केंद्र है। यहाँ स्थित Temple of the Sacred Tooth Relic अर्थात् श्री दलदा मालीगावा बौद्धों के लिए अत्यंत पवित्र स्थल है।

बुद्ध के दंतधातु से जुड़ी परंपरा ने श्रीलंका के राजकीय इतिहास और बौद्ध धर्म को एक-दूसरे से जोड़ दिया। दंतधातु केवल धार्मिक प्रतीक नहीं रही, बल्कि श्रीलंका के राजसत्ता-संबंधी वैधता के प्रतीक के रूप में भी विकसित हुई।

भारत से जाने वाले बौद्ध पर्यटकों के लिए कैंडी इसलिए महत्वपूर्ण है कि भारत में बुद्ध के जीवन से जुड़े स्थलों की यात्रा के बाद श्रीलंका में बुद्ध की स्मृति और धरोहर के संरक्षण को प्रत्यक्ष देखने का अवसर मिलता है।

समुद्री पर्यटन और प्राचीन संपर्क

भारत और श्रीलंका के बीच समुद्र ने दूरी पैदा करने के बजाय संपर्क का माध्यम बनाया। प्राचीन काल में बंगाल की खाड़ी, पाक जलडमरूमध्य और हिंद महासागर के समुद्री मार्गों से व्यापारी, भिक्षु और राजकीय दूत आते-जाते थे।

महावंश में बोधिवृक्ष को समुद्री मार्ग से श्रीलंका ले जाने का उल्लेख इस बात का साहित्यिक प्रमाण है कि धार्मिक यात्रा के लिए समुद्री परिवहन का उपयोग किया जाता था। अध्याय ग्ग में तमलिट्टि तक पहुँचने और वहाँ से समुद्री यात्रा का वर्णन मिलता है।

इस प्राचीन समुद्री संपर्क की आधुनिक परिणति क्रूज़ पर्यटन, तटीय पर्यटन, समुद्रतट पर्यटन और द्वीप-आधारित पर्यटन में देखी जा सकती है।

भारत के दक्षिणी तटीय क्षेत्र—विशेषकर तमिलनाडु और केरल—का श्रीलंका से समुद्री संपर्क आज भी पर्यटन के लिए महत्वपूर्ण है।

रामायण पर्यटन : एक अलग सांस्कृतिक आयाम

भारत-श्रीलंका पर्यटन संबंधों का दूसरा प्रमुख आधार रामायण पर्यटन है। रामायण की कथा भारतीय उपमहाद्वीप में व्यापक रूप से लोकप्रिय रही है और श्रीलंका में भी रामायण से जुड़े अनेक स्थानों की पहचान स्थानीय परंपराओं में की जाती है।

श्रीलंका में सीता एलिया, अशोक वाटिका से संबद्ध परंपराएँ, हनुमान से संबंधित स्थल, रावण से जुड़े स्थान और रामायण से संबंधित अनेक धार्मिक-सांस्कृतिक स्मृतियाँ भारतीय पर्यटकों को आकर्षित करती हैं।

हालाँकि यहाँ ऐतिहासिक तथ्य और धार्मिक/लोकपरंपरा के बीच अंतर करना आवश्यक है। रामायण से संबद्ध प्रत्येक स्थल को पुरातात्विक रूप से रामायणकालीन प्रमाणित स्थल मानना उचित नहीं होगा। किंतु पर्यटन की दृष्टि से इन स्थानों का सांस्कृतिक महत्त्व निर्विवाद रूप से बड़ा है।

भारत सरकार भी आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देती है और रामायण जैसे सांस्कृतिक सर्किटों को पर्यटन-विकास के संदर्भ में महत्त्व देती रही है।

इस प्रकार रामायण पर्यटन धार्मिक आस्था, साहित्यिक परंपरा और सांस्कृतिक स्मृति को आधुनिक पर्यटन उद्योग से जोड़ता है।

रामायण और भारत-श्रीलंका सांस्कृतिक पर्यटन

वाल्मीकि की रामायण भारत और श्रीलंका के सांस्कृतिक संबंधों को समझने का प्रमुख साहित्यिक स्रोत है। रामायण में लंका का वर्णन कथा के अंतिम और अत्यंत महत्त्वपूर्ण चरण में सामने आता है।

वाल्मीकि की रामायण में हनुमान द्वारा समुद्र पार करके लंका पहुँचने, अशोक वाटिका में सीता को खोजने और लंका की भौगोलिक-सांस्कृतिक विशेषताओं को देखने का वर्णन मिलता है।

पर्यटन की दृष्टि से इस साहित्यिक परंपरा ने भारत और श्रीलंका के बीच एक साझा सांस्कृतिक कल्पना को जन्म दिया। आधुनिक पर्यटक जब अयोध्या, चित्रकूट, रामेश्वरम् और श्रीलंका के रामायण-संबंधी स्थलों की यात्रा करता है तो वह वस्तुतः एक बहुराष्ट्रीय सांस्कृतिक यात्रा करता है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि रामायण के विभिन्न भारतीय और दक्षिण-पूर्व एशियाई संस्करणों में लंका और रामकथा के विवरणों में अंतर मिलता है। अतः पर्यटन-विवरण में वाल्मीकि रामायण, कंब रामायण, रामचरितमानस और स्थानीय श्रीलंकाई परंपराओं को अलग-अलग स्रोतों के रूप में देखना चाहिए।

साहित्य में भारत-श्रीलंका यात्रा का चित्रण

भारत और श्रीलंका के पर्यटन संबंधों को समझने के लिए केवल ऐतिहासिक ग्रंथ ही नहीं, बल्कि साहित्यिक और धार्मिक ग्रंथ भी महत्त्वपूर्ण हैं।

(क) महावंश — महानाम

महावंश श्रीलंका के इतिहास का सबसे महत्त्वपूर्ण पालि वंशग्रंथ है। इसकी रचना परंपरागत रूप से भिक्षु महानाम से संबद्ध है। विल्हेल्म गाइगर ने इसका अंग्रेजी अनुवाद 1912 में प्रकाशित किया।

बोधिवृक्ष के संबंध में ग्रंथ का भाव अत्यंत स्पष्ट है। उसमें अशोक द्वारा वृक्ष की शाखा श्रीलंका भेजे जाने की धार्मिक महत्ता का वर्णन है। यह प्रसंग आज भारत और श्रीलंका के बीच बौद्ध तीर्थ-पर्यटन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

(ख) दीपवंश² — अनाम बौद्ध भिक्षु-संकलन

दीपवंश श्रीलंका का प्राचीन पालि ऐतिहासिक ग्रंथ है। इसके लेखक का निश्चित नाम उपलब्ध नहीं है; इसलिए इसे

सामान्यतः अनाम बौद्ध भिक्षु-संकलन माना जाता है।

इसमें महेंद्र के श्रीलंका आने और बौद्ध धर्म की स्थापना का उल्लेख मिलता है। पर्यटन के संदर्भ में इसका महत्त्व इसलिए है क्योंकि इससे उन स्थानों की धार्मिक स्मृति को समझने में सहायता मिलती है जो आज श्रीलंका के प्रमुख बौद्ध पर्यटन स्थलों में शामिल हैं।

(ग) वाल्मीकि कृत रामायण ³

भारत और श्रीलंका के सांस्कृतिक पर्यटन में रामायण का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसके लेखक परंपरागत रूप से महर्षि वाल्मीकि माने जाते हैं।

लंका की यात्रा, समुद्र पार करना, अशोक वाटिका और सीता की खोज जैसे प्रसंग भारत-श्रीलंका सांस्कृतिक पर्यटन के साहित्यिक आधार हैं।

यहाँ पृष्ठ संख्या के संबंध में विशेष सावधानी आवश्यक है, क्योंकि रामायण की पांडुलिपियों, आलोचनात्मक संस्करणों और आधुनिक अनुवादों में अध्याय एवं पृष्ठ संख्या बहुत अलग-अलग हैं। इसलिए शोध-लेख में काण्ड और सर्ग संख्या देना अधिक विश्वसनीय होता है।

(घ) तुलसीदास कृत रामचरितमानस⁴ –

भारत में रामकथा की लोकप्रियता को समझने के लिए तुलसीदास का रामचरितमानस अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि यह वाल्मीकि रामायण का प्रत्यक्ष ऐतिहासिक स्रोत नहीं है, किंतु उत्तर भारत में रामकथा की धार्मिक लोकप्रियता का प्रमुख आधार है। इसी लोकप्रियता ने श्रीलंका से जुड़े रामायण पर्यटन को भी व्यापक जन-सांस्कृतिक संदर्भ दिया है।

आधुनिक पर्यटन संबंध

प्राचीन तीर्थयात्रा आज आधुनिक पर्यटन में परिवर्तित हो चुकी है। विमान सेवाओं, सड़क संपर्क, होटल, पर्यटन पैकेज और डिजिटल सूचना प्रणालियों ने भारत-श्रीलंका यात्रा को पहले की अपेक्षा बहुत सरल बनाया है।

आज भारत आने वाले श्रीलंकाई पर्यटक मुख्यतः बौद्ध तीर्थस्थलों, ऐतिहासिक स्थलों और सांस्कृतिक नगरों की यात्रा करते हैं। दूसरी ओर श्रीलंका जाने वाले भारतीय पर्यटकों के आकर्षण में समुद्रतट, प्राकृतिक सौंदर्य, बौद्ध स्थल, रामायण-संबंधी स्थान, ऐतिहासिक नगर और सांस्कृतिक उत्सव प्रमुख हैं।

भारत की पर्यटन नीति में भी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देने पर जोर है। सरकार द्वारा पर्यटन स्थलों की आधारभूत संरचना, कनेक्टिविटी और प्रचार-प्रसार को विकसित करने की योजनाएँ इस दिशा में महत्त्वपूर्ण हैं।

पर्यटन से आर्थिक संबंधों को मजबूती

पर्यटन केवल सांस्कृतिक आदान-प्रदान नहीं है, बल्कि आर्थिक संबंधों को भी मजबूत करता है। पर्यटक होटल, परिवहन, भोजन, स्थानीय हस्तशिल्प, गाइड, स्मृति-चिह्न और स्थानीय सेवाओं पर खर्च करते हैं। इससे स्थानीय रोजगार पैदा होता है।

यदि भारत और श्रीलंका संयुक्त बौद्ध एवं रामायण पर्यटन पैकेज विकसित करें, तो दोनों देशों के पर्यटन उद्योग को लाभ मिल सकता है।

उदाहरण के लिए एक संयुक्त बौद्ध यात्रा का मार्ग इस प्रकार बनाया जा सकता है—

लुंबिनी → बोधगया → सारनाथ → कुशीनगर → चेन्नई/कोलंबो → अनुराधापुर → मिहंतले → कैंडी।

इसी प्रकार रामायण पर्यटन का सांस्कृतिक मार्ग—

अयोध्या → चित्रकूट → नासिक/अन्य रामायण स्थल → रामेश्वरम् → श्रीलंका के रामायण-संबंधी स्थल के रूप में विकसित किया जा सकता है।

इस तरह पर्यटन दोनों देशों के ऐतिहासिक संबंधों को आधुनिक आर्थिक गतिविधि में बदल सकता है।

पर्यटन और जन-से-जन संबंध

भारत और श्रीलंका के संबंधों में 'people-to-people contact' का विशेष महत्त्व है। पर्यटक जब दूसरे देश में जाता है तो वह केवल स्मारक नहीं देखता, बल्कि स्थानीय समाज, भोजन, भाषा, वेशभूषा, संगीत, धार्मिक परंपरा और जीवन-पद्धति से परिचित होता है।

बौद्ध पर्यटन विशेष रूप से शांतिपूर्ण और आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करता है। भारत में श्रीलंकाई भिक्षुओं और तीर्थयात्रियों का आगमन तथा श्रीलंका में भारतीय बौद्ध यात्रियों की उपस्थिति दोनों देशों के सामाजिक-सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत करती है।

इस दृष्टि से पर्यटन राजनय का एक प्रभावी माध्यम है। जहाँ राजनीतिक संबंध कभी-कभी बदल सकते हैं, वहीं सांस्कृतिक और धार्मिक संबंध लंबे समय तक बने रहते हैं।

निष्कर्ष

भारत और श्रीलंका के संबंधों को पर्यटन की दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों देशों के बीच पर्यटन कोई आधुनिक घटना नहीं है। इसकी जड़ें महेंद्र की यात्रा, संघमित्रा के आगमन, बोधिवृक्ष की शाखा, प्राचीन समुद्री संपर्क और बौद्ध तीर्थयात्रा जैसी घटनाओं में मिलती हैं।

महावंश में भारत से श्रीलंका तक बोधिवृक्ष की यात्रा का वर्णन इस सांस्कृतिक संपर्क का अत्यंत महत्वपूर्ण साहित्यिक प्रमाण है। 1912 के गाइगर संस्करण के अध्याय The Receiving of the Great Bodhi-tree में पृष्ठ 122 से और The Coming of the Bodhi-tree के पृष्ठ 128 से मिलता है।

आज बोधगया, सारनाथ, कुशीनगर, मिहिंतले, अनुराधापुर और कैंडी जैसे स्थल दोनों देशों के बीच धार्मिक पर्यटन के जीवंत पुल हैं। इसी प्रकार रामायण से जुड़े सांस्कृतिक स्थल दोनों देशों के साझा साहित्यिक और धार्मिक संबंधों को पर्यटन के माध्यम से वर्तमान पीढ़ी तक पहुँचाते हैं।

अतः भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन संबंधों को केवल विदेशी पर्यटकों की संख्या बढ़ाने की आर्थिक नीति के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। यह इतिहास, धर्म, संस्कृति, साहित्य, समुद्री संपर्क और जन-से-जन संबंधों को जोड़ने वाला सेतु है। यदि दोनों देश बौद्ध सर्किट, रामायण सर्किट, समुद्री विरासत, ऐतिहासिक नगरों और सांस्कृतिक उत्सवों को संयुक्त रूप से विकसित करें, तो पर्यटन भारत-श्रीलंका संबंधों को और अधिक सुदृढ़ करने वाला प्रभावी माध्यम बन सकता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत और श्रीलंका के पर्यटन संबंध अतीत की तीर्थयात्रा से वर्तमान के सांस्कृतिक पर्यटन और भविष्य के साझा पर्यटन-राजनय तक की एक निरंतर यात्रा हैं।

संदर्भित प्रमुख ग्रंथ एवं पृष्ठ-सूची

1. महावंश (The Mahavamsa or The Great Chronicle of Ceylon) — परंपरागत रूप से भिक्षु महानाम से संबद्ध; अंग्रेजी अनुवाद Wilhelm Geiger, सहयोग: Mabel Haynes Bode, Pali Text Society/Oxford University Press, 1912-
 - अध्याय XI — The Consecrating of Devanampiya Tissa — लगभग पृ. 77
 - अध्याय XIII — The Coming of Mahinda — लगभग पृ. 88
 - अध्याय XV — The Acceptance of the Mahavihara — पृ. 97
 - अध्याय XVIII — The Receiving of the Great Bodhi-tree — पृ. 122
 - अध्याय XIX — The Coming of the Bodhi-tree — पृ. 128.
- इन अध्यायों की पृष्ठ-सूचना 1912 के Pali Text Society संस्करण के विषय-सूची और डिजिटल प्रतियों से पुष्ट होती है।

2. दीपवंश (Dipavahsa) — लेखक निश्चित नहीं; परंपरागत रूप से श्रीलंकाई बौद्ध भिक्षु-संघ का संकलन। महेंद्र और बौद्ध धर्म के श्रीलंका आगमन संबंधी प्रसंग विशेष महत्वपूर्ण हैं।
3. रामायण : महर्षि वाल्मीकि; लंका-काण्ड/युद्धकाण्ड के लंका संबंधी प्रसंग भारत-श्रीलंका सांस्कृतिक पर्यटन के प्रमुख साहित्यिक आधार हैं।
4. रामचरितमानस : गोस्वामी तुलसीदास; का सुंदरकाण्ड और लंका-काण्ड रामकथा की उत्तर भारतीय लोकप्रिय परंपरा को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

(नोट -पृष्ठ-संख्या संबंधी आवश्यक टिप्पणी : प्राचीन भारतीय ग्रंथों की पृष्ठ संख्या संस्करण, संपादक और अनुवाद के अनुसार बदल जाती है। इसलिए महावंश के लिए ऊपर दी गई पृष्ठ-संख्या विशेष रूप से Wilhelm Geiger के 1912 संस्करण की हैं। उस संस्करण की विषय-सूची में संबंधित अध्यायों के पृष्ठ स्पष्ट रूप से दिए गए हैं।)

प्राचार्य/ प्रोफेसर हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, आगरा कैंट,
आगरा।



श्रीरामचरित मानस में लंका का सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य

प्रो. (डॉ.) गरिमा जैन, डॉ. पन्नन बाजपेई

सारांश- श्रीरामचरितमानस गोस्वामी तुलसीदास द्वारा प्रणीत अवधी का अनुपम महाकाव्य है। भारतीय संस्कृति में इस ग्रन्थ का नाम स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। यह महाकाव्य केवल धार्मिक ग्रन्थ नहीं है बल्कि भारतीय संस्कृति, नैतिक मूल्यों और लोक मंगल की पवित्र भावना पर आधारित एक दार्शनिक ग्रन्थ है। इसमें महाकवि तुलसीदास ने भगवान श्रीराम के पावन चरित्र के माध्यम से परिवार, समाज और राष्ट्र के प्रति व्यक्ति के कर्तव्यों का बोध कराया है तथा एक आदर्श शासन की कल्पना प्रस्तुत की है। इन्हीं विशेषताओं के कारण श्रीरामचरितमानस भारतीय जनजीवन, साहित्य और संस्कृति तथा नैतिक शिक्षा का मूल आधार है। इस अनुपम ग्रन्थ में राम के चरित्र के साथ-साथ उनके जीवन से जुड़ी अन्य घटनाओं और स्थानों को भी चित्रित किया गया है।

मानस में वर्णित लंका केवल राक्षस राज रावण का राज्य नहीं है बल्कि तत्कालीन सामाजिक राजनीतिक और सांस्कृतिक दशा को निरूपित करने वाला नगर है। श्रीरामचरितमानस में लंका का चित्रण ऐसे समृद्ध नगर के रूप में किया गया है जहाँ अपार वैभव, उच्च कोटि की स्थापत्य कला, सैन्य शक्ति और सांस्कृतिक सम्पन्नता विद्यमान है तो दूसरी ओर रावण के अहंकार और वामाचार के कारण यहां नैतिक मूल्यों का पतन भी दिखायी देता है। यह शोध आलेख श्रीरामचरितमानस के आधार पर लंका के सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

भूमिका- श्रीरामचरितमानस भारतीय साहित्य और भारतीय लोक-जीवन का अनुपम महाकाव्य है। इसमें केवल श्रीराम के जीवन का वर्णन ही नहीं बल्कि आदर्श समाज और धर्म मानवीय मूल्य तथा सनातन संस्कृति का व्यापक रूप में चित्रण किया है। कवि ने अयोध्या, चित्रकूट, किष्किन्धा जैसे क्षेत्रों का विशेष वर्णन उनके सामाजिक और सांस्कृतिक दशा के अनुरूप प्रस्तुत किया है, जिसमें लंका का वर्णन विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि यह नगर भौतिक समृद्धि की चरम सीमा और नैतिक पतन को एक साथ दर्शाता है। भारतीय संस्कृति के धार्मिक ग्रन्थों में लंका का उल्लेख एक वैभवशाली नगरी के रूप में मिलता है। आदि कवि वाल्मीकि ने अपने आदिकाव्य रामायण में लंका का वैभवशाली वर्णन किया है और स्पष्ट किया कि लंका नगरी का निर्माण विश्वकर्मा ने किया था यह स्वर्ण नगरी है। प्रारम्भ में लंका नगरी पर कुबेर का अधिकार था इसके बाद रावण ने अपने बाहुबल से कुबेर से इसे छीन लिया। वाल्मीकि रामायण में लंका का परिचय स्वयं श्रीराम स्वर्ण नगरी के रूप में देते हैं, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि रावण की राजधानी लंका अत्यन्त समृद्धशाली नगर था। लंका के विषय में श्रीराम लक्ष्मण से कहते हैं कि लंका अत्यन्त समृद्धशाली नगर है और उन्होंने लंका को स्वर्ण नगरी घोषित किया है।

अपि स्वर्णमयी लंका
न मां लक्ष्मण रोचते
जननी जन्मभूमिश्च

स्वर्गादपि गरीयसी

भौगोलिक शास्त्र के अनुसार लंका एक अत्यन्त समृद्ध, सुदृढ और समुद्र से घिरा हुआ राज्य था। भारत के दक्षिण में लंका भारत के दक्षिणी तट के सामने स्थित थी। वाल्मीकि रामायण के अनुसार लंका त्रिकूट पर्वत पर बसी थी। यह पर्वत नगर को प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करता था। चारों ओर समुद्र से घिरी तथा विशाल परकोटे वाली लंका सुरक्षित राजधानी थी। जैसा कि तुलसीदास जी ने मानस में उसका वर्णन किया है। लंका में घने-वन, सुन्दर उपवन जैसे - अशोक वाटिका, नदियां, सरोवर और जीव जंतु पाए जाते थे।

**गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका
तहाँ रह रावन सहज असंका
तहाँ अशोक उपवन जहाँ रहई
सीता बैठी साँच रत अहई**

लंका समुद्र के उस पार दक्षिण दिशा में है। इसकी पुष्टि रामकाव्यधारा के अलावा अन्य कवियों ने भी किया है। सूफी काव्यधारा के कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने लंका को दक्षिण में दिखाया है। भारतीय पौराणिक मान्यताओं के अनुसार सूर्य की स्थिति छः मास उत्तरायण रहती है और छः मास दक्षिणायन रहती है। जब सूर्य दक्षिणायन होता है तो भारत में जाड़ा होता है। जायसी नागमती विद्योग खण्ड में लिखते हैं—

**पूसमास तन थर-थर काँपा
सुरजु जाय लंका दिसि चाँपा**

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा प्रणीत श्रीरामचरित मानस के सुन्दरकाण्ड और लंकाकाण्ड में लंका की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति का परिचय मिलता है। तुलसीदास ने रावण की लंका को वैभवशाली और शक्ति सम्पन्न नगर के रूप में चित्रित किया है। लंका सोने की नगरी थी। वहाँ के महल, भवन, मार्ग और दुर्ग अत्यन्त भव्य थे। हाथी, घोड़ा, खच्चर आदि तथा रथ सेना की कोई तुलना नहीं थी। नागरिक धन-धान्य से सम्पन्न थे और ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे।

**कनक कोटि विचित्र मणि कृत सुन्दरायतना घना
चँहठ हठ सुबठ बीथीं चारु पुर बहुविधि बना
गज बाजि खच्चर निकट पदचर रथ बरुथिन्ह को गनै
बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत निहं बनै**

लंका का समाज राक्षसी समाज था और राक्षसी समाज में पाई जाने वाली सारी विशेषतायें वहाँ विद्यमान थीं। बल और पराक्रम के मद में विलासी जीवन को अधिक महत्व दिया जाता था। समाज में धर्म, दया और मर्यादा का अभाव था। पर्वताकार शरीर वाले राक्षस भयंकर गर्जना करते हुए मल्ह युद्ध का अभ्यास करते थे। समाज में हिंसा का अत्यधिक महत्व होने के कारण वह चरम सीमा पर थी। लोगों का आहार-विहार राक्षसी विशेषताओं से परिपूर्ण था। यही अधर्म और हिंसा का व्यवहार तत्कालीन समाज को पतन की ओर ले गया।

**कहुँ माल देह बिसाल सेल समान अतिबल गर्जहीं
नाना अखारेन्ह भरहिं बहुविधि एक एकन्ह तर्जहीं
करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं**

रावण एक शक्तिशाली और उच्च कोटि का विद्वान शासक था, लेकिन उसका अहंकार और अधर्म लंका को विनाश की ओर ले गया। अधिकांश प्रजा उसके आतंक के कारण भयवश उसकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करती थी। यही नहीं राक्षसी समाज और मानव समाज के अलावा देव समाज पर भी उसका अधर्म और आतंक व्याप्त था। गोस्वामी जी उसकी स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं—

दसमुख सभा दीखि कपि जाई
कहि न जाय कछु अति प्रभुताई
कर जोरे सुर दिसिप बिनीता
भकुटि विलोकत सकल सभनीता

यद्यपि लंका में रावण का आतंक था, राक्षसी विशेषतायें विद्यमान थीं पर समाज का प्रत्येक व्यक्ति अधर्मी था यह नहीं कहा जा सकता। रावण का भाई विभीषण सत्य, धर्म और नीति का पालक था उसकी सामाजिक पहचान अलग थी। वह सामाजिक अन्याय और अनीति का घोर विरोधी था। उसने रावण को हर क्षेत्र में अनीति करने से रोका वह सीताजी को लौटा देने के पक्ष में था और उसने रावण को इसके लिए समझाया भी था। यही नहीं जब रावण का पुत्र मेघनाद हनुमान को बांधकर रावण के समक्ष दरबार में प्रस्तुत करता है तो रावण और हनुमान का वार्तालाप होता है और रावण हनुमान को मार डालने का आदेश देता है तब विभीषण ही रावण को नैतिक शिक्षा देकर हनुमान के प्राण बचाते हैं। जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रावणकालीन समाज में धर्मनिष्ठ व्यक्तियों का भी अस्तित्व था।

सुनत निसाचर मारन धार
सचिवन्ह सहित विभीषण आए
नाइ सीस करि विनय बहूता
नीति बिरोध न मारिअ दूता
आन दंड कछु करिअ गोसाँई
सबही कहा मंत्र भल भाई
सुनत बिहसि बोला दसकंधर
अंग भंग कर पठइअ बंदर

श्रीरामचरितमानस में समाज में स्त्रियों की क्या भूमिका थी? इसका विस्तृत वर्णन मिलता है। लंका में महिलायें विभिन्न क्षेत्रों में काम करती थीं वे सुरक्षा व्यवस्था में भी नियुक्त होती थीं और अपने कर्तव्य का पालन करती थीं। मानस में इसका साक्ष्य मौजूद है। लंका में प्रवेश करते समय प्रथम भेंट लंकिनी से हुई। जिसे रावण द्वारा लंका की सुरक्षा व्यवस्था के लिए नियुक्त किया गया था। कुशल सैनिक की भाँति वह रात्रि में पहरा देती थी और उसे चोर पकड़ने का वरदान प्राप्त था। इसीलिए लंका में प्रवेश करते समय हनुमान ने छोटा रूप बनाया। इस पर वह लंकिनी की दृष्टि में छिप नहीं सके।

नाम लंकिनी एक निसिचरी
सो कह चलेसि मोहि निंदरी
जानेसु नहीं मरमु सठ मोरा
मोर अहार जहाँ लगि चोरा

लंका के राजमहलों में स्त्रियों का जीवन सुखपूर्ण था। वे विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करती थीं। राजमहल में मंदोदरी जैसी कुशल बुद्धिवाली और नीतिशास्त्र की ज्ञाता स्त्रियाँ सम्मानपूर्वक रह रहीं थी। रावण के कार्य व्यवहार में नैतिकता का अभाव था। रावण के व्यक्तिगत आचरण में नारी सम्मान का उल्लंघन प्रमुख बिन्दु था। नीति-निपुण मंदोदरी की सुन्दर वार्ता और उचित परामर्श को ठुकराकर रावण अपने राक्षसी समाज के साथ पतन को प्राप्त हुआ। जहाँ रावण ने सीता का अपमान किया और मंदोदरी के परामर्श का उपहास की दृष्टि से देखा जो रावण की संकीर्ण विचारधारा का परिचय देता है।

बिहँसा नारि बचन सुनि काना
अहो मोह महिमा बलवाना
नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं
अवगुन आठ सदा उर रहहीं

**साहस अनूत चपलता माया
भय अबिवेक असौच अदाया**

श्रीरामचरितमानस में लंका में संयुक्त परिवार का परिचय मिलता है। रावण, उसकी माँ, उसके नाना माली सुमाली, उसके भाई विभीषण, कुंभकरण और मेघनाद आदि पुत्र एक ही राज परिवार से जुड़े हैं। सभी सुखपूर्वक रह रहे हैं और प्रत्येक परिस्थिति में सब एक-दूसरे का साथ देते हैं। राक्षसी परिवार में पारिवारिक सम्बन्धों का विशेष महत्व दिखायी देता है। यद्यपि रावण का अहंकार पारिवारिक जीवन पर भारी पड़ता है। रावण अपनी पारिवारिक वृद्धि देखकर प्रफुल्लता का अनुभव करता है और अपनी शक्ति प्रदर्शन का समर्थन करते हुए वह पूरे परिवार को अत्याचार करने की आज्ञा देता है।

**दसमुख सभा बैठि एक बारा
देखि अभित आपन परिवारा
सुत समूह जन परिजन नाती
गनै को पार निसाचर जाती**

श्रीरामचरितमानस में रावण के समय लंका उच्च विकसित संस्कृति का प्रतीक है। अतः सांस्कृतिक स्वरूप उच्च कोटि का दिखाई देता है। स्थापत्य कला की दृष्टि से लंका उच्च स्थिति में थी। लंका के महल, दुर्ग, तोरण और उपवन वहाँ की उन्नतिशील स्थापत्यकला का परिचय देते हैं। सीता की खोज में गए हनुमान लंका में भवनों का निरीक्षण करके सोच में पड़ जाते हैं। रावण का महल और उसकी सजावट उच्च कोटि की थी।

**गयउ दसानन मंदिर माही
अति विचित्र कहि जात सो नाही**

रावणकालीन लंका में संगीत और नृत्यकला भी विकसित दशा में थी। रावण स्वयं संगीत का ज्ञाता था। उसने अपने इष्ट भगवान शिव के लिए अनेक स्तुतियाँ रच रखी थीं। राजमहलों में प्रायः संगीत और नृत्य का आयोजन होता रहता था और रावण सभा में बैठकर इसका आनन्द लेता था जिससे लंका की कलात्मक अभिरुचि का परिचय मिलता है।

**बैठ जाइ तेहिं मंदिर रावन
लागे कनक गुन गन गावन
बाजहिं ताल पखाउज बीन
नृत्य करहिं अप्सरा प्रबीना**

रावणकालीन धार्मिक स्थिति भी बहुत अच्छी थी। यद्यपि लंका में राक्षसों का राज था फिर भी वहाँ शिव भक्ति का विशेष महत्व था। रावण स्वयं भगवान शिव का परम भक्त था। उसका पुत्र मेघनाद अपने को परम शक्तिशाली बनाने के लिए अपनी कुलदेवी का हवन, यज्ञ करता रहता था। यही नहीं रावणकालीन लंका में सबको अपने-अपने इष्टदेव को पूजन का पूरा अधिकार प्राप्त था। विभीषण का उदाहरण लिया जा सकता है। जहाँ रावण शिव का उपासक था वहीं विभीषण पूरी स्वतंत्रता के साथ राम की उपासना कर रहा था। लंका में प्रवेश करने पर हनुमान विभीषण का महल देखकर चकित हो जाते हैं।

**भवन एक पुनि दीख सुहावा
हरि मन्दिर तहँ भिन्न बनाव
रामायुध अंकित गृह, सोभा बरनि जा जाइ
नव तुलसिका बूँद तहँ, देखि हरषि कपिराइ**

इस प्रकार लंका का जीवन अत्यधिक ऐश्वर्य और भोग-विलास से युक्त था। तुलसीदास ने भी लंका की भौतिक समृद्धि की प्रशंसा करते हुए और उसके संस्कृतिक पतन की आलोचना भी की है। रावण का अहंकार, परस्परिहरण और अधर्म के कार्य-कलाप उसके संस्कारों का पतन दिखलाते हैं और उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि केवल धन और वैभव से संस्कृति की रक्षा नहीं हो सकती। उसके लिए धर्म नैतिकता और सदाचार आवश्यक है। केवल शक्ति प्रदर्शन से संस्कृति को बचाया

नहीं जा सकता रावण का नैतिक पतन और संस्कार इस स्तर तक बढ़ जाते हैं कि वह सीता जैसी पवित्र नारी पर भी शस्त्र उठाने की घोषणा करता है।

**सुनत बचन पुनि मारन धावा
मयतनया कहहिं नीति बुझावा
मास दिवस महुँ कहा न माना
तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना**

मानस में रावण का स्वरूप यह स्पष्ट करता है कि वह धर्म और संस्कृति को पूर्ण रूप से नष्ट कर देना चाहता है। वह अपने सभी सेनानायकों को धर्म और संस्कृति नष्ट करने के लिए उकसाता भी है और स्वयं सांस्कृतिक मूल्यों पर कोई ध्यान नहीं देता। इसीलिए नीति की बातें सिखाने पर वह विभीषण को अपमानित करके लंका से निकाल देता है।

**मम पुर बस तपसिन्ह पर प्रीती
सठ समुझाइ तिन्हहि कहु नीती
अस कहि कीन्हीस सिर चरन प्रहारा
अनुज गहे पद बारहिं बारा**

निष्कर्ष- इस प्रकार श्रीरामचरितमानस में लंका का सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य अत्यन्त समृद्ध संगठित तथा वैभवशाली दिखायी देता है। भव्य राजभवन, विकसित स्थापत्यकला, संगीत, नृत्य तथा पर्व और उत्सव उसके उच्च सांस्कृतिक विकास के प्रतीक हैं और जहाँ लंका का समाज विलासिता और वैभव पर टिका है वहीं दूसरी ओर तुलसीदास ने यह भी स्पष्ट किया कि केवल भौतिक उन्नति द्वारा किसी समाज की वास्तविक श्रेष्ठता सिद्ध नहीं हो सकती। उसके लिए सदाचार और नैतिकता आवश्यक है। रावण का अहंकार, अधर्म, अत्याचार और शक्ति का दुरुपयोग यह सिद्ध करते हैं कि जब समाज धर्म मर्यादा और नैतिक मूल्यों से विमुख हो जाता है तो उसका पतन निश्चित है। किसी भी समाज की स्थायी उन्नति का आधार नैतिकता और धर्म है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ. शिवबालक शुक्ल, संस्कृत निबन्ध चन्द्रिका, प्रथम प्रकाशन, मेरटन रोड, कानपुर—पृष्ठ-18
2. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 365-66
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 'पदमावत', नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी - पृष्ठ 140
4. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 371
5. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 371
6. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 379
7. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 380
8. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 371
9. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 407
10. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 99
11. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 372
12. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 404
13. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 372
14. श्रीरामचरित मानस, मूल मञ्जला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 374

15. श्रीरामचरित मानस, मूल मझला साइज, गीताप्रेस, गोरखपुर - पृष्ठ 388

प्रो. (डॉ.) गरिमा जैन
आर्मापुर पी.जी. कॉलेज, कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत
मोबाइल - 9935057642
डॉ. पन्नन बाजपेई
आर्मापुर पी.जी. कॉलेज, कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत
मोबाइल—9219488433



वाल्मीकि रामायण और कंब रामायण में आदर्श राजधर्म की अवधारणा

प्रो. (डॉ.) हेमलता सुमन

महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित “वाल्मीकि रामायण” को रामकथा का आदि और प्रामाणिक स्रोत माना जाता है, जिसने न केवल भारतीय साहित्य को समृद्ध किया, बल्कि एशिया के अनेक देशों की सांस्कृतिक परंपराओं को भी प्रभावित किया। इसमें श्लोकों की संख्या 24 हजार है, यह महाकाव्य सात अध्यायों या काण्डों में विभाजित है— बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, आरण्यकाण्ड, किष्किंधाकाण्ड, सुंदरकाण्ड, युद्धकाण्ड और उत्तरकाण्ड। कालांतर में विभिन्न भारतीय भाषाओं में रामकथा के अनेक रूप विकसित हुए, जिनमें तमिल कवि कंबन द्वारा रचित “कंब रामायण” अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुई। कंबन रामायण (या रामावतारम्) 12वीं शताब्दी (लगभग 1178 ईस्वी) में महाकवि कविचक्रवर्ती कंबन द्वारा तमिल भाषा में रचित एक महान और सर्वोत्कृष्ट काव्य ग्रंथ है। इस की रचना चोल राजा कुलोटुंग तृतीय के शासनकाल के दौरान हुई थी। राघव आर्यंगर की बहुमूल्य खोजों के आधार पर यह मान लिया गया है कि रामवतारम् 1178 ई. में समाप्त हुआ और इसका प्रकाशन 1185 में हुआ। श्री वी.वी.एस. अय्यर के अनुसार “कंब रामायण विश्वसाहित्य में उत्तम कृति है। इलियड, पैराडाइज़ लॉस्ट और महाभारत से ही नहीं, वरन् आदिकाव्य वाल्मीकि रामायण की तुलना में भी यह अधिक सुन्दर है।”

कंबन ने इस ग्रंथ की रचना अपने संरक्षक सदयप्पा वल्लाल के प्रोत्साहन से की थी और कृतज्ञता स्वरूप हर 1,000 छंदों में उनका नाम का भी उल्लेख किया है। कंब रामायण का विशेष महत्व इसलिए भी है कि कंबन ने वाल्मीकि की कथा को आधार बनाकर तमिल समाज की सांस्कृतिक चेतना, वैष्णव भक्ति और स्थानीय जीवन-मूल्यों के अनुरूप उसका नवीन रूप प्रस्तुत किया। भारतीय साहित्य और संस्कृति में रामायण केवल एक महाकाव्य ही नहीं है, बल्कि आदर्श जीवन-मूल्यों, शासन व्यवस्था और नैतिक आचरण का महत्वपूर्ण जरिया है।

महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित “वाल्मीकि रामायण” तथा तमिल कवि कंबन द्वारा रचित “कंब रामायण” भारतीय रामकथा-परंपरा की दो महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। जबकि दोनों ग्रंथों का मूल कथानक समान है, फिर भी उनके सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और दार्शनिक संदर्भों में पर्याप्त रूप से भिन्नताएँ दिखाई देती हैं। वाल्मीकि रामायण में राजधर्म का आधार धर्म, सत्य, न्याय, लोक कल्याण, मर्यादा और प्रजा-वत्सलता है। इसमें राजा को प्रजा का संरक्षक, न्यायप्रिय, कर्तव्यनिष्ठ तथा धर्म पालक माना गया है। श्रीराम अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख से ऊपर उठकर राज्य और प्रजा के हित को सबसे ऊपर रखते हैं। पिता की आज्ञा का पालन, वन-गमन, निष्पक्ष न्याय तथा प्रजा की भावना के प्रति संवेदनशीलता उनके आदर्श राजधर्म का स्वरूप प्रस्तुत करती है। कंबन के राम केवल आदर्श राजा ही नहीं हैं, अपितु लोक-मंगल के लिए अवतरित ईश्वर के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इसलिए उनके राजधर्म में करुणा, भक्ति, दया और धर्म संरक्षण के तत्व सशक्त रूप से अभिव्यक्त होते हैं। कंब रामायण में इन आदर्शों को तमिल सांस्कृतिक चेतना, वैष्णव भक्ति तथा दैवीय अवतारवाद के आलोक में फिर से व्याख्यायित किया गया है। दोनों महाकाव्यों में राजधर्म के मूल सिद्धांत— धर्म पालन, न्याय, लोक कल्याण और नैतिक नेतृत्व समान हैं, फिर भी उनकी अभिव्यक्ति अपने-अपने युग, भाषा, संस्कृति और धार्मिक दृष्टिकोण के हिसाब से भिन्न रूप ग्रहण

करती है। वाल्मीकि का दृष्टिकोण अधिक मानवीय एवं राजनैतिक है। वाल्मीकि कहते हैं कि-“ कोई व्यक्ति अगर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के जैसा मानवीय आचरण अपने व्यक्तिगत जीवन में धारण करले तो वह अपने व्यक्तिगत जीवन को श्रेष्ठ बना सकता है।” जबकि कंबन का दृष्टिकोण भक्ति-प्रधान एवं दार्शनिक है। वह कहते हैं कि-“ अगर कोई व्यक्ति विष्णु अवतरित भगवान श्रीराम की सच्चे मन से आराधना करे तो वह व्यक्ति श्रेष्ठ बन सकता है। दोनों ग्रंथ भारतीय शासन-दर्शन में ऐसे आदर्शों की स्थापना करते हैं, जो आज भी सुशासन, नैतिक नेतृत्व, उत्तरदायित्व और जनकल्याण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

रामायण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक उसका आदर्श शासन-दर्शन है। भारतीय परंपरा में राजा को केवल राज्य का शासक ही नहीं; बल्कि धर्म का संरक्षक, न्याय का पालनकर्ता तथा प्रजा का हितैषी माना गया है। “वाल्मीकि रामायण में श्री राम अपने अनुज भरत को समझाते हुए कहते हैं कि- “भरत एक राजा को अपने निजी व्यक्तिगत सुख को त्याग कर प्रजा के हित को सर्वोपरि रखते हुए राज्य के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह धर्म, न्याय, निति, शान्ति, योग्य मंत्रणा अनुसार करना चाहिए तथा अपनी इन्द्रियों - लोभ, मोह, क्रोध, अहंकार आदि के वशीभूत न होकर उच्च आचरण धारण कर समस्त प्रजा के प्रति स्नेह भाव से समर्पित रहना चाहिए।”

वाल्मीकि रामायण के महत्वपूर्ण उद्धरण -महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित वाल्मीकि रामायण में धर्म, नीति, कर्तव्य और मानवीय संबंधों पर अत्यंत गंभीर और प्रेरणादायक संवाद हैं—

1. राम-लक्ष्मण संवाद (मातृभूमि की महिमा)

लंका विजय के पश्चात जब लक्ष्मण ने लंका की भव्यता और सोने की नगरी देखकर वहीं बसने की इच्छा व्यक्त की, तब श्रीराम ने लक्ष्मण को यह अमर उपदेश दिया-

“अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे रोचति लक्ष्मण।

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥” (युद्धकाण्ड)

अर्थरू हे लक्ष्मण! भले ही यह लंका सोने की बनी हो, फिर भी मुझे इसमें कोई रुचि नहीं है। माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ हैं।

2. राम-विभीषण संवाद (शरणागति का वचन)

जब रावण का त्याग कर विभीषण श्रीराम की शरण में आए, तो सुग्रीव आदि ने उन पर संदेह जताया। तब श्रीराम ने शरणागत धर्म पर यह बात कही-

“सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।

अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम॥” (युद्धकाण्ड)

अर्थरू जो व्यक्ति एक बार भी मेरी शरण में आकर केवल इतना कह देता है कि “मैं आपका हूँ”, उसे मैं समस्त प्राणियों से निर्भयता प्रदान कर देता हूँ। यह मेरा अखंड व्रत है।

3. सीता-राम संवाद (वन गमन का निर्णय)

जब श्रीराम को 14 वर्ष का वनवास मिला और वे सीता जी को महल में ही रहने की सलाह दे रहे थे, तब सीता जी ने पतिव्रता धर्म और सहधर्मिणी के कर्तव्य पर कहा-

“न पिता नात्मजो नात्मा न माता न सखीजनः।

इह प्रेत्य च नारीणां पतिरेको गतिः सदा॥” (अयोध्याकाण्ड)

अर्थरू नारी के लिए न पिता, न पुत्र, न स्वयं का शरीर, न माता और न ही सखियाँ—केवल पति ही इस लोक और परलोक में एकमात्र गति (आश्रय) है। जहाँ आप रहेंगे, वहीं मेरा स्वर्ग है।

4. राम-भरत संवाद (चित्राकूट संगम पर धर्म-चर्चा)

चित्रकूट में जब भरत जी श्रीराम को अयोध्या वापस लौटाने आए, तब श्रीराम ने पिता के वचन और धर्म के पालन

पर कहा—

**“न चाप्यधर्मः पितुरेष राम! यत्तु ब्रवीषि त्वमदीनसत्त्व।
धर्मे ते धीयतां बुद्धिः पितुर्वचनकारिणी॥” (अयोध्याकाण्ड)**

अर्थरू हे भरत! पिता के आदेश का पालन करना धर्म है, अधर्म नहीं। तुम्हारी बुद्धि सदा पिता की आज्ञा का पालन करने और धर्म के मार्ग पर चलने में ही स्थिर रहनी चाहिए।

5. हनुमान-सीता संवाद (अशोक वाटिका में परिचय)

रावण की नगरी में उदास बैठी सीता जी के समक्ष जब हनुमान जी पहली बार प्रकट हुए, तो उन्होंने बड़े ही विनम्र शब्दों में अपना परिचय दिया—

**“रामदूतं च मां विद्धि सुग्रीवसचिवं कपिम्।
राघवेण प्रेषितं देवि! तवान्वेषण काङ्क्षिणा॥” (सुन्दरकाण्ड)**

अर्थरू हे देवी! आप मुझे श्रीराम का दूत और सुग्रीव का मंत्री समझें। आपकी खोज की इच्छा से स्वयं श्री रघुनाथ जी ने मुझे आपके पास भेजा है।

6. राम-लक्ष्मण संवाद (विपत्ति में धैर्य)

जी राम के वनवास के समय जब लक्ष्मण इस समाचार से अत्यंत क्रोधित हो गए थे, तब श्रीराम ने उन्हें शांत करते हुए कहा—

**“सुखं वा यदि वा दुःखं प्रियं वा यदि वाप्रियम्।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत हृदयेनापराजितः॥” (अयोध्याकाण्ड)**

अर्थरू जीवन में चाहे सुख आए या दुःख, प्रिय परिस्थिति हो या अप्रिय—मनुष्य को अपने हृदय से पराजित हुए बिना हर परिस्थिति को धैर्यपूर्वक स्वीकार करना चाहिए।

अतः कहा जा सकता है कि, राजधर्म की अवधारणा भारतीय राजनीतिक चिंतन का केंद्रीय तत्व रही है। राजधर्म का तात्पर्य केवल प्रशासन चलाने से नहीं; बल्कि सत्य, न्याय, मर्यादा, दया, करुणा, उत्तरदायित्व और लोककल्याण पर आधारित शासन स्थापित करने से है। राजा का व्यक्तिगत आचरण ही राज्य की नैतिक दिशा निर्धारित करता है। इसलिए भारतीय ग्रंथों में बताया गया है कि आदर्श राजा वही है जो अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर प्रजा के सुख और धर्म की रक्षा को सर्वोच्च स्थान देता है।

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम का चरित्र आदर्श राजधर्म का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है। वे पिता की आज्ञा और सत्य की रक्षा के लिए राज्य का त्याग करते हैं, धर्म की स्थापना के लिए संघर्ष करते हैं तथा राज्य प्राप्त होने पर न्यायपूर्ण और लोक कल्याणकारी शासन स्थापित करते हैं। उनके शासन को श्रमराज्य के रूप में स्मरण किया जाता है; जहाँ धर्म, न्याय, समृद्धि और सामाजिक संतुलन का आदर्श स्वरूप विद्यमान है। यहाँ राजधर्म का स्वरूप मानवीय, नैतिक और व्यावहारिक है, जिसमें राजा और प्रजा के बीच विश्वास तथा उत्तरदायित्व का संबंध प्रमुख है।

दूसरी ओर, कंब रामायण में श्रीराम का स्वरूप एक आदर्श राजा के साथ-साथ विष्णु के अवतार के रूप में अधिक स्पष्टता से उभरता हुआ सामने आया है। कंबन ने राजधर्म की अवधारणा को वैष्णव भक्ति, दैवी अनुग्रह और तमिल सांस्कृतिक मूल्यों के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। उनके यहाँ राजा का दायित्व केवल राजनीतिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह धर्म, भक्ति, करुणा और लोकमंगल का भी संवाहक बन जाता है।

“कंब रामायण के अन्तर्गत लंका में राजा रावण द्वारा अपने अनुज विभीषण को बहिष्कृत करने के उपरान्त विभीषण जब श्री राम की शरण में जाते हैं तो श्री राम अपने अनुज लक्ष्मण, सुग्रीव व समस्त मंत्रियों से विभीषण को अपनी शरण में लेने के विषय पर बात करते हैं तदोपरांत वह कहते हैं कि, यदि कोई शत्रु भी आत्म समर्पण कर दे तो राजा का कर्तव्य है कि वह उसे अभयदान दे।”

इस तरह हम देखते हैं कि, कंब रामायण में राजधर्म का स्वरूप आध्यात्मिक एवं भक्तिपरक आयाम ग्रहण कर लेता है। तमिल भाषा के महाकवि कंबन द्वारा रचित शकंब रामायणमश (या रामावतारम) तमिल साहित्य का एक अनुपम महाकाव्य है। कंबन की शैली में भक्ति, भावुकता और काव्यात्मक सुंदरता का अद्भुत संगम दिखता है।

कंबन रामायण के प्रमुख और प्रसिद्ध उद्धरण

1. श्री राम का दिव्य सौंदर्य (बाल काण्ड)

जब श्री राम मिथिला की गलियों से गुजरते हैं, तो नगरवासी उनके रूप पर मोहित हो जाते हैं। कंबन जी श्रीराम के सौंदर्य का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

“तोळ कण्डार तोळे कण्डार, ताळ कण्डार ताळे कण्डार”

“आळि अङ्गे कण्डारुम्, अंगे अम्मै कण्डार”

अर्थात् जिन लोगों ने श्री राम की बलिष्ठ और सुंदर भुजाओं को देखा, वे बस उनकी भुजाओं को ही देखते रह गए; जिन्होंने उनके चरणों को देखा, वे उनके चरणों के दर्शन में ही खो गए। किसी की दृष्टि उनके पूरे स्वरूप पर एक साथ नहीं टिक सकी, क्योंकि उनका प्रत्येक अंग अपने आप में अनंत सौंदर्य समेटे हुए था।

2. सीता-राम का प्रथम मिलन (बाल काण्ड)

स्वयंवर से पूर्व जब श्री राम और माता सीता की दृष्टि एक-दूसरे पर पड़ती है, तब उनके निश्छल प्रेम और पूर्वजन्म के संबंध को कंबन ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

“अण्णलुम् नोक्किनान, अवळुम् नोक्किनाळ्”

“नोग्गु उण्णक्कण्णिणाळ्, नोक्कमुम् नोक्कमुम् ओन्नागि”

अर्थरू नायक (राम) ने देखा और नायिका (सीता) ने भी देखा। दोनों की आँखें मिलीं और दो दृष्टि मिलकर एक हो गई। दोनों के हृदय इस तरह एक हो गए मानो दो शरीर एक ही प्राण बन गए हों।

3. रावण को श्रीराम की सीख (युद्ध काण्ड)

युद्ध के पहले दिन जब रावण के सभी अस्त्र-शस्त्र व्यर्थ हो जाते हैं और वह असहाय होकर खड़ा रहता है, तब श्रीराम उस पर दया करते हुए एक महान योद्धा का धर्म निभाते हैं और कहते हैं—

“इन्नु पोइ नाळे वा”

अर्थ : “आज जाओ और कल आओ।”

अर्थात् श्रीराम कहते हैं कि तुम थक चुके हो और निहत्थे हो। मैं निहत्थे पर वार नहीं करता। आज विश्राम करो, शस्त्र लो और कल युद्ध के लिए आओ। यह उक्ति श्रीराम की उदारता और धर्म-परायणता का प्रतीक है।

4. लंका का त्याग और मातृभूमि का महत्व (युद्ध काण्ड)

जब लक्ष्मण लंका के वैभव से प्रभावित होते हैं, तब कंबन के राम उन्हें सत्य और धर्म का बोध कराते हुए कहते हैं—

“नल्लमै सेय्दु नडु निन्ऱवर्कु”

“एल्लाम् उळ्वागुम् एन्नरु उरैत्तान्”

अर्थरू सोने की लंका या कोई भी धन-संपदा धर्म और सत्य से बढ़कर नहीं हो सकती। जो व्यक्ति धर्म के मार्ग पर निष्पक्ष होकर चलता है, उसे ही अंत में अक्षय कल्याण और शांति प्राप्त होती है।

5. सीता जी की पवित्रता और अग्नि परीक्षा (उत्तर काण्ड/युद्ध काण्ड)

अग्नि परीक्षा के समय जब अग्निदेव स्वयं प्रकट होकर सीता जी की पवित्रता की गवाही देते हैं, तो कंबन जी अग्निदेव के मुख से कहलवाते हैं—

“कर्पिन् कनकमुम्, करिपनुक्कु अणिमुम्”

अर्थात : सीता जी केवल पवित्र ही नहीं हैं, बल्कि वे स्वयं श्पातिव्रत्य और पवित्रताश का आभूषण हैं। अग्नि भी उन्हें स्पर्श करके और अधिक पवित्र हो गई है।

कंबन रामायण के रचयिता कवि कंबन के बारे में कहा जाता है—

“कंबन वीडु कट्टुरियुम् कवि पाडुम्”

(कंबन के घर की धान कूटने वाली मूसल भी कविता गाती है।)

यह तमिल की एक प्रसिद्ध कहावत है, जो यह दर्शाती है कि कंबन की काव्य शैली कितनी सहज, मधुर और प्रभावशाली थी। उन्होंने वाल्मीकि रामायण के मूल भाव को बनाए रखते हुए उसमें दक्षिण भारतीय संस्कृति और भक्ति रस का अद्भुत समावेश किया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दोनों ग्रंथों का मूल कथानक समान है, तथापि उनके रचनाकाल, भाषिक परिवेश, सांस्कृतिक संदर्भ और धार्मिक दृष्टिकोण में पर्याप्त अंतर है।

यही कारण है कि आदर्श राजधर्म की अभिव्यक्ति में भी अनेक समानताओं के साथ-साथ उल्लेखनीय भिन्नताएँ दृष्टिगत होती हैं। वाल्मीकि का दृष्टिकोण शास्त्रीय, नैतिक और राजनीतिक है, जबकि कंबन का दृष्टिकोण भक्ति, दर्शन और क्षेत्रीय सांस्कृतिक चेतना से अधिक प्रभावित है। इन दोनों कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारतीय साहित्य में आदर्श शासन की अवधारणा समय, समाज और संस्कृति के अनुसार विकसित होती रही है, परंतु उसके मूल तत्व धर्म, न्याय, सत्य और लोक कल्याण सदैव अपरिवर्तित रहे हैं।

वाल्मीकि रामायण में राजधर्म का स्वरूप अधिक मानवीय, नैतिक और राजनीतिक है। यहाँ राम एक आदर्श मानव और आदर्श राजा के रूप में हैं, जिनका प्रत्येक निर्णय धर्म और न्याय पर आधारित है। उनके शासन की सफलता प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व, निष्पक्ष न्याय, सत्यनिष्ठा तथा लोक कल्याणकारी दृष्टिकोण में निहित है। इसके विपरीत, कंब रामायण को महाऋषि कंबन ने चोल वंश के शासन काल में प्रणयन किया जिसका उद्देश्य यह था कि कंबन चाहते थे कि भगवान राम की कथा तमिल भाषा में ऐसी शैली में उपलब्ध हो जिसे तमिल भाषी सामान्य लोग भी सहजता से समझ और आत्मसात कर सकें। कंबन ने अपनी असाधारण काव्य-प्रतिभा से रामकथा को तमिल काव्य की उत्कृष्ट शैली में प्रस्तुत किया। इस प्रकार कंब रामायण तमिल साहित्य की महानतम कृतियों में गिनी जाने लगी।

12वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में वैष्णव भक्ति का व्यापक प्रभाव था तथा कंबन ने राम को विष्णु के अवतार के रूप में प्रस्तुत कर भक्ति, धर्म और नैतिक मूल्यों का प्रचार किया। उन्होंने मूल कथा का आधार वाल्मीकि रामायण से लिया, लेकिन अनेक प्रसंगों में तमिल संस्कृति, लोक-जीवन, सौंदर्यबोध और अपनी मौलिक कल्पना का समावेश किया। इसलिए कंब रामायण केवल अनुवाद नहीं, बल्कि एक स्वतंत्र महाकाव्य है। कंबन ने “कंब रामायण” की रचना रामकथा को तमिल समाज के निकट लाने, वैष्णव भक्ति का प्रसार करने, तमिल साहित्य को समृद्ध बनाने तथा धर्म, मर्यादा और आदर्श राजधर्म के मूल्यों को स्थापित करने के उद्देश्य से की। यही कारण है कि कंब रामायण को तमिल साहित्य का एक अमर महाकाव्य माना जाता है। कंबन ने अपनी “कंब रामायण” के अन्तर्गत राजधर्म को वैष्णव भक्ति, दैवीय चेतना और तमिल सांस्कृतिक मूल्यों के साथ समन्वित किया गया है। कंबन के राम केवल आदर्श शासक नहीं, बल्कि धर्म की पुनर्स्थापना के लिए अवतरित ईश्वर भी हैं। इसलिए उनके राजधर्म में करुणा, भक्ति, दया और आध्यात्मिक लोकमंगल का स्वर अधिक प्रबल दिखाई देता है।

इसी आधार पर हम यह देख सकते हैं कि दोनों महाकाव्यों में राजधर्म की मूल अवधारणा समान होते हुए भी उसकी अभिव्यक्ति अपने-अपने सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों के अनुसार परिवर्तित हुई है। वाल्मीकि का दृष्टिकोण शास्त्रीय और नैतिक शासन व्यवस्था पर बल देता है, जबकि कंबन उसी आदर्श को भक्तिपरक और सांस्कृतिक आधार पर विकसित करते हैं। यही भिन्नता इन दोनों कृतियों को भारतीय साहित्य की अमूल्य धरोहर बनाती है।

इस प्रकार निसंदेह कहा जा सकता है कि ये दोनों ही ग्रंथ समकालीन संदर्भ में भी प्रासंगिक हैं। आज जब सुशासन, नैतिक नेतृत्व, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और जनकल्याण की अपेक्षा बढ़ रही है, तब रामायण में प्रतिपादित राजधर्म के सिद्धांत

लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था के लिए भी प्रेरणास्रोत सिद्ध होते हैं। इस प्रकार कंब रामायण और वाल्मीकि रामायण केवल धार्मिक या साहित्यिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि भारतीय शासन-दर्शन, नैतिक नेतृत्व और लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीमद् वाल्मीकि रामायण- वाल्मीकि
संपा पं. रामनारायण दत्त शास्त्री, गीता प्रेस, गोरखपुर
2. कंब रामायण- कंबन, हिंदी अनुवाद, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास- बलदेव उपाध्याय शास्त्री चौखंबा प्रकाशन
4. भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन।
5. राजबली पांडे, हिन्दू संस्कार चौखंबा विद्याभवन
6. गोविन्द चन्द्र पाण्डेय। भारतीय संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी, भारतीय संस्कृति के स्वरूप, राजकमल प्रकाशन।
8. बलदेव उपाध्याय भारतीय दर्शन चौखंबा प्रकाशन।
9. वाल्मीकि रामायण में अयोध्या काण्ड के सर्ग 100 गूगल विकीपीडिया।
10. वही, युद्ध कांड के पटल 39

नारायण कालेज शिकोहाबाद
पिनकोड 283135
जिला फीरोजाबाद
मो- 9456253344



भारतीय ज्ञान परम्परा में बौद्ध दर्शन का अवदान

डॉ. सोरन सिंह

भारतीय ज्ञान परम्परा बहुत ही प्राचीन और समृद्धशाली है। इसका मूल वैदिक संस्कृति में है। ज्ञान की सतत प्रवहमान इस दिव्य धारा में अनेक ऋषियों, मुनियों तथा दार्शनिकों ने अपने अपने समय पर योगदान दिया है और इसे समृद्ध बनाया है। ईसा पूर्व छठी शताब्दी में महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म और बौद्ध दर्शन का विकास करके इस परम्परा की समृद्धि में योगदान किया था।

महात्मा बुद्ध के समय समाज में अराजकता थी समाज में कई प्रकार की कुरीतियाँ फैल गयी थीं जिससे लोग दुःखी थे। लोगों को दुःखी देखकर महात्मा बुद्ध के मन में करुणा का उदय हुआ। उन्होंने वैभवशाली जीवन त्यागकर सन्यास ले लिया और दुःख के कारण और निवारण की खोज में निकल पड़े। घोर तपस्या करने के बाद पैंतीस साल की उम्र में उनको बोधि (तत्त्वज्ञान) की प्राप्ति हुई और वे बुद्ध कहलाये। अपना शेष जीवन उन्होंने दूसरों के दुःख दूर करने और उद्धार करने में लगा दिया। उन्होंने मनुष्य जीवन को दुःखों से निवृत्त करके, सुखमय बनाने के लिये चिन्तन किया और उसके लिये उपाय बताये। उन्होंने अपने उपदेशों में चार आर्य सत्त्यों को आचरण में लाने का आग्रह किया। इन आर्य सत्त्यों का दृढ़ता से पालन करने से मनुष्य निर्वाण प्राप्त कर सकता है। चार आर्य सत्य-महात्मा बुद्ध के चार आर्य सत्य हैं—सांसारिक जीवन दुःखों से परिपूर्ण है, दुःखों का कारण है, दुःखों का अन्त संभव है तथा दुःखों के अन्त का उपाय है। उन चार आर्य सत्त्यों को क्रमशः दुःख, दुःख समुदाय, दुःख निरोध, दुःख निरोध मार्ग कहा गया है। महात्मा बुद्ध के सभी उपदेश इन चार आर्य सत्त्यों में निहित हैं।

प्रथम आर्य सत्य-दुःख : बुद्ध ने अपने प्रथम आर्य सत्य में कहा है कि संसार दुःखमय है, सब कुछ दुःखमय है सर्व दुःखं दुःखम्। रोग, मृत्यु, शोक, निराशा, वृद्धावस्था आदि। बुद्ध ने कहा है जन्म में दुःख है, मृत्यु में दुःख है, प्रिय के वियोग तथा अप्रिय से संयोग दुःखमय है पंच स्कन्ध (शरीर, अनुभूति, प्रत्यक्ष, इच्छा, विचार) दुःखमय है। क्षणिक विषयों के लिये आसक्ति ही पुनर्जन्म एवं बन्धन का कारण है। सांसारिक सुख क्षणिक होते हैं उनके नष्ट होने पर भी दुःख होता है अतः सांसारिक सुख यथार्थ सुख नहीं हैं।

द्वितीय आर्य सत्य-दुःख समुदाय- बुद्ध ने अपने द्वितीय आर्य सत्य में दुःख के कारण की विवेचना की है इस सिद्धान्त को प्रतीत्यसमुत्पाद कहा है जिसका अर्थ है किसी वस्तु के उपस्थित होने पर किसी अन्य वस्तु की उत्पत्ति। इस सिद्धान्त का आधार कार्य-कारण नियम है जिसका अर्थ है कि कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है कोई भी घटना, पदार्थ या वस्तु अकारण नहीं होती। दुःख भी एक घटना है जिसे बुद्ध ने जरा मरण कहा है यह समस्त सांसारिक दुःखों का प्रतीक है। उस जरामरण का भी कोई न कोई कारण अवश्य होगा। बुद्ध के अनुसार जरामरण का कारण जाति है। जन्म ग्रहण करना ही जाति कहलाता है जाति का कारण भव है जन्म ग्रहण करने की प्रवृत्ति का नाम भव है। सांसारिक विषयों के प्रति हमारी आसक्ति अर्थात् उपादान ही भव का कारण है। उपादान का कारण तृष्णा है। शब्द, स्पर्श आदि विषयों के भोग की वासना ही तृष्णा है। प्रतीत्यसमुत्पाद के अनुसार तृष्णा का कारण वेदना है। पूर्वइन्द्रियानुभूति ही वेदना कहलाती है।

इन्द्रियों द्वारा मनुष्य को सुख की अनुभूति होती है। वेदना का कारण स्पर्श है। इन्द्रियों का विषयों के साथ सम्पर्क ही स्पर्श है। स्पर्श का कारण षडायतन है। इन्द्रियों और मन के समूह को षडायतन कहते हैं। इन्द्रियों के अभाव में स्पर्श नहीं हो सकता। षडायतन का कारण नामरूप है मन और शरीर के समूह को नामरूप कहते हैं। नामरूप कारण विज्ञान है विज्ञान के कारण ही गर्भावस्था में शिशु का शरीर और मन का विकास होता है। विज्ञान का कारण संस्कार को माना गया है। अतीत जीवन के कर्मों के प्रभाव से संस्कार का निर्माण होता है। इस संस्कार का कारण अज्ञान या अविद्या है। ज्ञान का अभाव ही अविद्या या अज्ञान है। अनात्म को आत्मा समझना, दुःखमय को सुखमय समझना और अवास्तविक को वास्तविक समझना ही अविद्या है। वस्तुओं के वास्तविक रूप को न जानने के कारण ही अविद्या संस्कार का निर्माण करती है। अविद्या समस्त दुःखों का मूल कारण है और कार्य-कारण श्रृंखला की अन्तिम कड़ी भी है। यहां दुःख के कारण के रूप में बारह कड़ियों का विवेचन किया गया है अतः इसे द्वादश निदान भी कहा जाता है। प्रतीत्यसमुत्पाद सिद्धान्त को संसार चक्र, भाव चक्र, जरामरण चक्र, धर्मचक्र के नाम से भी जाना जाता है। बुद्ध ने कहा है कि जो प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञाता है वही धर्म का ज्ञाता है और जो धर्म का ज्ञाता है वही प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञाता है। प्रतीत्यसमुत्पाद या द्वादश निदान भूत, वर्तमान एवं भविष्यत् जीवनों में व्याप्त है। वर्तमान जीवन का कारण अतीत जीवन है तथा वर्तमान से भविष्यत् जीवन का निर्माण होता है। तीनों की एक श्रृंखला है। द्वादश निदान में बारह कड़ियां भूत, वर्तमान और भविष्य जीवन से कुछ इस तरह से जुड़ी हैं—भूत जीवन से अविद्या, संस्कार, वर्तमान जीवन से विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव और भविष्य जीवन से जाति, जरामरण।

तृतीय आर्य सत्य दुःख निरोध-दुःख का कारण है अतः दुःख के कारण का अन्त होने पर दुःख का भी अन्त अनिवार्यतः हो जायेगा। दुःख निरोध को निर्वाण भी कहते हैं। इसकी प्राप्ति जीवन काल में भी हो सकती है। यदि कोई व्यक्ति राग, द्वेषों पर विजय प्राप्त कर शुद्ध आचरण से चार आर्य सत्त्यों का निरन्तर ध्यान करता है तथा समाधि के द्वारा प्रज्ञा प्राप्त कर लेता है उस व्यक्ति का चित्त राग, द्वेष से मुक्त हो जाता है। उसे किसी वस्तु की तृष्णा नहीं रह जाती है वह व्यक्ति मुक्त हो जाता है उसे अर्हत कहते हैं। मोक्ष को ही निर्वाण अर्थात् दुःख निरोध कहा गया है।

निर्वाण शब्द के अर्थ को लेकर दो विचारधारार्य हैं निषेधात्मक और भावात्मक। निषेधात्मक विचारधारा में निर्वाण की तुलना बुझे हुए दीपक से की गयी है। जिस प्रकार दीपक के बुझने पर प्रकाश का अन्त हो जाता है उसी प्रकार निर्वाण प्राप्त होने पर दुःखों का भी अन्त हो जाता है उसी के साथ ही जीवन का भी अन्त हो जाता है लेकिन बुद्ध को निर्वाण की प्राप्ति मृत्यु से पूर्व हुई थी। अतः निर्वाण का अर्थ पूर्ण विनाश नहीं हो सकता। भावात्मक विचारधारा के अनुसार निर्वाण का अर्थ शीतलता है। बौद्ध दर्शन में वासना, मोह, क्रोध आदि को अग्नि के समान माना गया है। अतः निर्वाण प्राप्ति के बाद दुःख रूपी अग्नि शान्त हो जाती है और आनन्द की अवस्था प्राप्त हो जाती है। धम्मपद में कहा गया है कि निब्बानं परं सुखम्। अर्थात् निर्वाण को आनन्दमय अवस्था माना गया है। निर्वाण का स्वरूप अनिर्वचनीय माना गया है जिसका वर्णन विचार और तर्क से परे माना गया है। निर्वाण निष्क्रिय अवस्था नहीं है। निर्वाण प्राप्ति के बाद मनुष्य लोक कल्याण के लिये कार्यशील रह सकता है। अनासक्त कर्म मनुष्य को बन्धन में नहीं डालते। भगवान बुद्ध निर्वाण प्राप्ति के बाद लोगों के दुःख निवारण के लिये पैंतालीस साल तक अनासक्त भाव से काम करते रहे।

चतुर्थ आर्य सत्य दुःख निरोध मार्ग-इस आर्य सत्य में दुःखों से निवृत्ति के मार्ग की चर्चा की गयी है। इस मार्ग पर चलकर साधक निर्वाण को प्राप्त कर सकता है। अष्टांगिक मार्ग बुद्ध के धर्म और नीतिशास्त्र का आधार है इसके निम्नलिखित आठ अंग या सोपान हैं। इसलिये इसे अष्टांगिक मार्ग कहते हैं।

सम्यक दृष्टि : अविद्या के कारण आत्मा और विश्व के सम्बन्ध में मिथ्या दृष्टि का प्रादुर्भाव होता है जिससे मनुष्य अनित्य को नित्य, अनात्म को आत्मा और दुःखद को सुखद मानने लगता है। मिथ्या दृष्टि का परित्याग कर सत और वस्तु का सतत ध्यान करना सम्यक दृष्टि कहलाता है।

सम्यक संकल्प : बुद्ध के चार आर्य सत्त्यों को जीवन में अपनाने का संकल्प करना। राग, द्वेष, हिंसा के परित्याग

और निर्वाण प्राप्त करने का संकल्प लेना ही सम्यक संकल्प है।

सम्यक वाक : यह तीसरा सोपान है सम्यक संकल्प केवल मानसिक ही नहीं बल्कि कार्यरूप में परिणित भी होना चाहिये। मिथ्यावादिता, परनिन्दा, अप्रिय वचन से बचना चाहिये।

सम्यक कर्मान्त

सम्यक संकल्प को केवल वचन में ही नहीं बल्कि कर्म में भी परिणित होना चाहिये। बुरे कर्मों का परित्याग ही सम्यक कर्मान्त कहलाता है। अहिंसा, अस्तेय और इन्द्रिय संयम ही सम्यक कर्मान्त है। सम्यक आजीविकारू बुरे कर्म और वचन के परित्याग के साथ ही मनुष्य को अच्छे और शुभ साधन के द्वारा जीविकोपार्जन करना चाहिये। आजीविका के लिये उचित साधन का उपयोग और निषिद्ध साधन का परित्याग ही सम्यक आजीविका है। सम्यक व्यायामरू मनुष्य को चाहिये कि वह पुराने कुसंस्कारों का परित्याग करे और अच्छे विचारों को धारण करे। सम्यक व्यायाम के द्वारा अशुभ मनःस्थिति का अन्त होता है और शुभ मनःस्थिति का उदय होता है। सम्यक स्मृतिरू यह अष्टांगिक मार्ग का सातवां सोपान है। जिन विषयों का ज्ञान प्राप्त हो चुका है उनको स्मरण करते रहना चाहिये। वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप के बारे में जागरूक रहना चाहिये। साधक को शरीर को शरीर और मन को मन समझना चाहिये। शरीर, मन और संवेदना को क्षणिक और दुःखदायी समझना ही सम्यक स्मृति है।

सम्यक समाधि

उपर्युक्त सात मार्गों का अनुसरण करके साधक अपनी बुरी चित्तवृत्तियों को दूर कर लेता है और सम्यक समाधि में प्रविष्ट होने के योग्य हो जाता है तत्पश्चात् वह क्रमशः चार अवस्थाओं को पार करके निर्वाण को प्राप्त कर लेता है। प्रथम अवस्थारू इस अवस्था में साधक शान्त मन से आर्य सत्त्यों का चिन्तन करता है और अपूर्व आनन्द तथा शान्ति का अनुभव करता है वह संशयों का स्वयं निवारण करता है। द्वितीय अवस्थारू इस अवस्था में सारे संशय मिट जाते हैं। आर्य सत्त्यों का प्रगाढ़ चिन्तन करता है। चित्त में स्थिरता बढ़ जाती है और ज्ञान का अभ्युदय होता है। तृतीय अवस्थारू इस अवस्था में साधक आनन्द और शान्ति से मन हटाकर स्वयं में उपेक्षा का भाव लाने का प्रयाश करता है इस समय चित्त की साम्यावस्था एवं दैहिक सुख का भाव रहता है परन्तु समाधि के आनन्द के प्रति उदासीनता रहती है। चतुर्थ अवस्थारू इस अवस्था में चित्त की साम्यावस्था, दैहिक सुख एवं ध्यान के आनन्द किसी की भी चेतना नहीं रहती है। यहां चित्तवृत्तियों का निरोध हो जाता है। यह पूर्ण शान्ति, पूर्ण निरोध और पूर्ण विराग की अवस्था है। यह अवस्था दुःख सुख से रहित है। दुःखों का सर्वथा निरोध हो जाता है तथा निर्वाण की प्राप्ति हो जाती है। यह पूर्ण प्रज्ञा की अवस्था है और इसे प्राप्त कर लेने पर अर्हत हो जाता है।

अष्टांगिक मार्ग को प्रज्ञा, शील और समाधि इन तीन भागों में बांटा गया है। प्रज्ञा के अन्तर्गत सम्यक दृष्टि और सम्यक संकल्प है। शील के अन्तर्गत सम्यक वाक, सम्यक कर्मान्त, सम्यक अजीविका और सम्यक व्यायाम आते हैं। समाधि के अन्तर्गत सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि हैं। भगवान बुद्ध द्वारा बताये हुए अष्टांगिक मार्ग का अनुकरण करके तथा उनका दृढ़तापूर्वक पालन करके मनुष्य दुःखों से आत्यन्तिक छुटकारा पा सकता है और निर्वाण को प्राप्त करके अपने जीवन के परम पुरुषार्थ को सफलता पूर्वक प्राप्त कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. भारतीय दर्शन, डॉ. उमेश मिश्र एम. ए. डी. लिट. उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, सन् 2003।
2. भारतीय दर्शन, चन्द्रधर शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कोलकता, बंगलोर, वाराणसी, पुणे, पटना, सन् 2004।

3. भारतीय दर्शन, श्रीमती रूपाली श्रीवास्तव एम0ए0 एम0एड0, संजय पब्लिकेशन्स, गढ़ैया हकीमान, हॉस्पिटल रोड, आगरा -3
4. संजय धर्म का समाजशास्त्र, प्रो0 धर्मेन्द्र कुमार मिश्रा एम0ए0 नेट, नवीन संस्करण, संजय पब्लिकेशन्स, आनन्द कॉम्प्लैक्स, किदवई पार्क राजा मण्डी आगरा-2
- 5 यू जी सी नेट/सेट दर्शनशास्त्र, अखिलेश मणि त्रिपाठी, संस्करण 2008, दैनिक पब्लिशिंग कं0, 4352/4सी, अंसारी रोड, दर्यागंज, नई दिल्ली-110002।

ए-35, अंसल टाउन, शमशाबाद रोड,
आगरा (उ0 प्र0) 282004
मो0 8979538293



विश्वास के राम : एक अध्ययन

ज्योति मित्तल, प्रो. चंद्रशेखर शर्मा

“कॉक्रीट के जंगल हैं नदियों की रवानी खो गई
झूले, मेले, बचपन की सारी निशानी खो गई
अपनी-अपनी चिंता में सब घर-आँगन हैं बाँट लिए
राम-कृष्ण वाली नानी-दादी की कहानी खो गई”

शोध-सार- अति आधुनिक व दिन-प्रतिदिन संवेदन हीन होते जा रहे समाज को मानवीय संवेदना से जोड़ना, पौराणिक कथाओं व पात्रों का वैज्ञानिक विवेचन करके उन्हें आज के संदर्भ में प्रासंगिक सिद्ध करना, कवि कुमार विश्वास के वक्तृत्व व कविताओं की विशेषता है। वह अपनी विद्वता व स्मरण-शक्ति के चलते युगीन प्रासंगिक विषयों को पौराणिक पात्रों से जोड़कर परंपरा व आधुनिकता के समन्वय को सिद्ध करते हैं। यह शोध उनके कार्यक्रम के माध्यम से मानवीय मूल्यों, श्रम की महत्ता और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसे विषयों पर रामकथा की प्रासंगिकता का अध्ययन करता है।

बीज-शब्द - मानवीय रिश्तों का मूल्य, वैज्ञानिक-विवेचन, श्रम-महत्ता आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आदि।

प्रस्तावना- प्रस्तुत शोध आलेख में कुमार विश्वास के ‘अपने अपने राम’ कार्यक्रम के माध्यम से आधुनिक युवा पीढ़ी में सनातन मूल्यों के पुनर्जागरण का विश्लेषण किया गया है।

विश्वास के राम : एक अध्ययन- औद्योगिक क्रांति व डिजिटल युग के बाद आज समय सोशल मीडिया व आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का समय आ चुका है। तकनीकीकरण हमारे रिश्तों व मूल्यों पर हावी होकर अपने पैर पसार चुका है। आज हमारा शहर, प्रदेश व देश विदेशी आक्रांताओं से तो किसी हद तक सुरक्षित है पर अपने भीतर के रावण रूपी दानव से न ही लड़ पा रहा है और न ही जीत पा रहा है। लोगों के मानवीय मूल्यों में लगातार गिरावट आ रही है। संयुक्त परिवार लगभग खत्म होने की कगार पर हैं और सिर्फ संयुक्त परिवार ही नहीं एकल परिवार भी धीरे-धीरे अपना अस्तित्व खोने की ओर हैं। आने वाली नई पीढ़ी इस परिवार नाम की व्यवस्था के खिलाफ है, जिसका ताजा उदाहरण है ‘मी टाइम’ ‘माय स्पेस’ और सबसे ज्यादा भयानक उन्मुक्त ‘लिविंग रिलेशनशिप’। कहते हैं कि आप बाहर के भूत से लड़ सकते हैं परंतु घर का भूत बहुत भारी होता है। हमारे संस्कार, हमारे परिवार, हमारी परंपरा व संस्कृति का लगातार हास करता यह रावण रूपी दानव लगातार अपने पाँव पसार रहा है। ऐसी स्थिति में पूरा जीवन दर्शन अपने-आप में समेटे हमारे रामायण-महाभारत जैसे पौराणिक ग्रंथ आज भी प्रासंगिक हैं। इन पौराणिक ग्रंथों के पात्रों से हमने समयानुसार आचार-विचार व संस्कार सीखा है।

‘वैश्विक स्तर पर देखेंगे तो पाएंगे कि ऐसा नहीं है कि सिर्फ एक सम्प्रदाय या धर्म की ही राम में आस्था है, दूसरे धर्मों के भी बहुत लोग हैं जो राम की तरह बनना चाहते हैं, उनके कई-कई रूपों में उनकी सराहना करते हैं, तो कई मायनों में रामायण, राम के जीवन की कथा, भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रही है।’¹ हमारे पौराणिक ग्रंथ रामायण के मूल नायक प्रभु श्री राम हम सब के आराध्य हैं। हम सब के नायक हैं। उनके जीवन से प्रेरणा लेकर हम अपने मन रूपी दानव रावण का सामना कर पाते हैं। ‘राम की कहानी हमारी जड़ों में यूरिया का काम करती है, यह हमें एक भाई की तरह, एक पिता

की तरह, एक पुत्र की तरह व एक नागरिक की तरह मजबूत करती है।² यह आज के समय की विडंबना है कि हमारी युवा पीढ़ी को यह राम और श्याम की कहानी जो हमें अपनी नानी-दादी के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हुए सुनने को मिलती थी, तकनीकीकरण व सहूलियत के नाम पर निजता का अनुसरण करने के कारण नदारद है। आज यदि किसी छोटे बच्चे से रामायण-महाभारत के पात्रों के नाम पूछे जाएँ तो वह नहीं बता पाएगा। (उदाहरणार्थ-जब बच्चों से पूछा गया तो कई बच्चों ने रामायण का रचयिता टेलीविजन पर प्रसारित सीरियल रामायण के निर्देशक रामानंद सागर को बताया।) 'राम नाम सत्य है' मृत्योपरांत बोले जाने वाले इस वाक्य का मृत शरीर से कोई संबंध नहीं रहता, फिर भी राम नाम ही सत्य है इसका आभास, एहसास व इसकी सार्थकता जन्म लेते ही कराने की जगह मृत्यु उपरांत का प्रावधान है। क्यों? क्योंकि जो लोग उस मृत शरीर के साथ उस वक्त हैं, उन्हें यह समझाया जा सके कि सत्य यही है बाकी सब मृग मरीचिका है। पर आज किसके पास समय है जो इन शब्दों की सार्थकता पर गौर करे। अरे! शव यात्रा में भी तो हम लोग समय पूछ कर जाते हैं कि "मृत शरीर को अंतिम संस्कार के लिए कब ले जाया जाएगा?" ताकि हमारा कम समय खराब हो, हमारे पास अभी बहुत सारे जरूरी कार्य हैं जो कुछ समय पहले तक हमारे साथ-साथ उस मृत शरीर के पास भी थे।

जिस राम नाम की, उसके व्यवहार व आदर्श की बात मृत शरीर और त्रयोदशी संस्कार के तहत तेरह दिवस तक की जाती है, क्या उसे जन्म लेने के उपरांत इस दुनिया में नए-नए पदार्पण करने वाले बालक या युवा के लिए जरूरत नहीं! राम नाम के मर्म को, उनके संपूर्ण जीवन को आदर्श मानकर उनसे जुड़े प्रासंगिक किस्सों, कहानी के साथ यदि किसी बच्चे का लालन पालन और पोषण किया जाए तो निरुसंदेह उस बच्चे का व्यक्तित्व 'राम नाम सत्य है,' को सार्थक करता नजर आएगा। 'राम नाम सत्य है' ये अटल सूर्य और चंद्र की तरह हमारे बीच दैदीप्यमान है। बस जरूरत है इस राम नाम के विचार को विस्तार देने की, प्रसार देने की, जिसे अपनी मोहक शैली और युवाओं के लिए ग्रहण करने योग्य भाषा में परोस रहे हैं डॉ.कुमार विश्वास।

जनजीवन की भलाई व मानवीय मूल्यों के संचार के लिए नई युवा पीढ़ी को राम के चरित्र से अवगत कराना आज के समय की आवश्यकता है, जिसे अपने पूर्ण मनोयोग से डॉ. कुमार विश्वास 'अपने-अपने राम' कार्यक्रम के माध्यम से देश-विदेश में कर रहे हैं। 'राम की कहानी ने सदियों से विकास के विभिन्न स्तरों से गुजरती हुई मनुष्यता को सदा ही एक सुन्दर सहारा सौंपा है। इसी रामकथा की वैचारिकी को व्यावहारिकता से जोड़कर अपने-अपने राम सत्रों द्वारा कवि कुमार प्रेषित कर रहे हैं।'³

वे रामायण के प्रसंग को आज के जन जीवन से जोड़कर युवा पीढ़ी को उन्हीं की भाषा में समझाने का कार्य कर रहे हैं। वह कहते हैं— 'पश्चिम के जाल में फँसकर वामपथ पर निकलने को आतुर युवाओं को मैं रामपथ पर लाने के प्रयास में लगा हूँ...'।⁴ 'अपने-अपने राम' कार्यक्रम के माध्यम से वह देश के उस अभिजात्य वर्ग को संस्कारित करने का प्रयास कर रहे हैं जिस पर साधन और समय की सुलभता के चलते पाश्चात्य संस्कृति में रंगने के अवसर अन्य की अपेक्षा ज्यादा हैं। "मधुर हँसी अधरों पर लेकिन भाव सभी निष्काम मिले हैं/धनुष हाथ में लिए खड़े हैं फिर भी ललित ललाम मिले हैं/कंधे तक कुंतल आंखों में निश्चय मन में मर्यादा है/नमन करो सब बड़े भाग से हमको अपने राम मिले हैं।"⁵ रामचरितमानस की पंक्तियों को आधार बनाकर उनका गूढ़ अध्ययन कर अपनी स्मरण शक्ति के चलते वह इस नई युवा पीढ़ी के लिए ऐसी भाषा तैयार करते हैं जिसे आज का युवा आसानी से समझ सकता है। वह भगवान राम के सुंदर व मनोहारी रूप का वर्णन करते हुए उन्हें विनय, मर्यादा व अखण्ड निश्चय के साथ सरल व सादगीपूर्ण बताते हैं। वे बताते हैं कि हमें भी जीवन में ऐसे ही सरलता, सहजता और विनम्रता के साथ व्यवहार करना चाहिए। 'मनुजोचित विशेषताओं में विनम्रता एक ऐसा सशक्त गुण है कि इसके आगे हिंसक जीव तथा हिंसक मनुष्य भी कई बार अपनी वृत्ति से विमुख हो कर मित्रवत् व्यवहार करने लगते हैं। शौर्य की जो रंगत विनय की संगत से निखरती है, उसकी तुलना अन्यत्र कहीं मिल पाना थोड़ा कठिन है।'⁶

कोई शबरी खिलाये तो वो झूठे बेर खा जाए/कोई साथी हो संकट में तो वह बालि से टकराये/वो जिसके नाम का पत्थर समंदर पार कर जाए/वो जिसके दम पे तीनों लोक में संध्या सवेरे हैं/वही एक राम राम तेरे हैं, वही एक राम मेरे हैं।'⁷ कुमार

विश्वास श्री राम व शबरी प्रसंग से लोगों में प्रेम व भक्ति भाव का संचार करते हैं। वह इस प्रसंग के अर्थ द्वारा समझाते हैं कि मन में एक दूसरे के प्रति समर्पण और विश्वास का भाव होना चाहिए। जैसे शबरी के मन में था कि वह श्री राम को मीठे बेर खिलाए और उसने यह भी नहीं सोचा कि चखने से यह झूठे हो रहे हैं। वहीं श्री राम ने उन झूठे बेरों को उसके प्रेम और समर्पण के भाव को देखकर सहजता से ग्रहण किया। उनके मन में एक बार भी नहीं आया कि यह बेर चखे हुये हैं, झूठे हैं। सहायता व समरसता का भाव यदि मन में उतर जाए तो समाज किन ऊँचाइयों को छू जाएगा, इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। प्रेम, समर्पण व निष्ठा का विश्वास हम सभी के मन में होना चाहिए। कवि कुमार विश्वास रामचरितमानस के बाली प्रसंग से समझाते हैं कि मुसीबत में आपसे कोई सहायता माँगे तो हर हाल में उसकी सहायता करनी चाहिए। शरणागत को कभी नहीं ठुकराना चाहिए। हर जगह लाभ और हानि के विषय में न सोचकर आपसी सद्भाव के बारे में भी सोचना चाहिए। ‘अर्थ का संदर्भ लेते हुए कवि जीवन के भौतिक पहलुओं को महत्व देते हैं, यह समझाते हुए कि सुख-समृद्धि का संकलन केवल भौतिक वस्तुओं में नहीं, बल्कि जीवन के सार्थक अनुभवों में भी होता है।’⁸ “जब जब घिरे अँधेरे गहरे जग ने तुम्हें पुकारा राम, एक तुम्हारे होने भर से जग भर में उजियारा राम! धन दौलत की या ताकत की जिन पर लंका हैं उनके, होंगे लाख सहारे, दुखियों का बस एक सहारा राम ..!”⁹ कवि कुमार विश्वास इन पंक्तियों के माध्यम से कहते हैं—आज जीवन में विश्वास की बहुत कमी है। हम दूसरों पर तो क्या खुद पर भी विश्वास नहीं करते। हर वक्त डरे-सहमे से रहते हैं। आशंकित रहते हैं। राम एक विचार हैं। राम एक भाव हैं। यदि हम राम रूपी विचार को अपने मन में बैठा लें व अपने सत्कर्मी पर विश्वास करें तो सब अच्छा ही होगा, क्योंकि करने वाले प्रभु हैं। अतरु हमें आत्मविश्वासी और जुझारू होना चाहिए। हर परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

रामायण चुनौतियों से बचना नहीं बल्कि आँखें मिलाना सिखाती है।¹⁰ कंपटीशन का जमाना है। जीवन चुनौतियों से भरा हुआ है। अक्सर हम चुनौतियों से डर कर एक ऑप्शन चुन लेते हैं ‘स्कूप’। डॉ. कुमार विश्वास का कहना है आप रामायण का अध्ययन कीजिए। आप स्कूप ऑप्शन चुनना भूल जाएँगे। आप चुनौतियों से लड़ना सीख जाएँगे। श्री राम के जीवन से प्रेरणा लेकर आप चुनौतियों से हारना नहीं बल्कि उन्हें जीतना सीख जाएँगे।

मानवीय रिश्तों का मूल्य- दांपत्य जीवन हो, भातृ प्रेम हो, पितृ प्रेम हो या मातृ सेवा। परिवार व समाज के कल्याण के लिए इन महनीय रिश्तों की परिभाषा, मर्यादा, त्याग और संयम से निभाने की कला, एकजुटता, समरसता व परस्पर सहयोग की भावना डॉ. कुमार विश्वास के अपने-अपने राम कार्यक्रम के माध्यम से जन-जन में प्रसारित होते देखी जा सकती है। डॉ. कुमार विश्वास के दांपत्य-बोध का सुंदर सा गीत ‘चलो अब लौट चलें रघुराई’ स्त्री का अपने परिवार के प्रति भाव-समर्पण की अनूठी व्याख्या है। कवि कुमार विश्वास के अनुसार श्री राम अपने हर रिश्ते को सादगी और संयम से निभाते हैं। उनका सम्मान करते हैं। और यही आज के व्यक्ति को सीखने की आवश्यकता है। वह कहते हैं— ‘अब हमारी जिम्मेदारी है कि मनुष्यता को मानक की ओर ले जाने का प्रयास करें। हम नीचे गिरते जा रहे हैं, मनुष्यता नीचे गिरती जा रही है, इसे ठीक करना हमारी जिम्मेदारी है और इसमें हमारी मदद करेंगे श्री राम। राम मनुष्यता के इम्यूनिटी बूस्टर हैं। राम एक ऐसे भगवान हैं, जो दुख से दूर होने की कोरी कल्पनाओं को पुष्ट करने के बजाय दुःख जैसी मनःस्थिति के कुशल प्रबंधन का मार्ग प्रशस्त करते हैं। रामकथा मनुष्यता की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक इम्यूनिटी को बढ़ाती है।’¹¹

वैज्ञानिक विवेचन- डॉ. कुमार विश्वास राम कथा के माध्यम से रामायण का वैज्ञानिक विवेचन करते नजर आते हैं। वे इंद्र के बेटे जयंत की सरकंडे को गोल-गोल घूमते रहने को सेंसर्ड ड्रिविन मिसाइल से मिलाते हैं जो दुश्मन को ढूँढ़ कर उसको मार कर ही आती है।¹² डॉ. विश्वास का यह वैज्ञानिक विवेचन युवाओं को पसंद आता है और राम कथा का रस ग्रहण करवाने में सहायक सिद्ध होता है। ‘आधुनिक तुलसी के रूप में “अपने अपने राम” के माध्यम से मानस पीठ पर डॉ. कुमार विश्वास जी प्राचीन भारत के विज्ञान को रामकथा से जोड़कर वैज्ञानिक व्याख्या करते हैं तब विज्ञान पर विश्वास रखने वाले विश्व के लाखों युवाओं की आध्यात्मिक चेतना श्रवण मात्र से स्वतः जाग्रत होते हुए अपनी सनातन संस्कृति पर गौरवान्वित होने लगती है।’¹³

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस- अभी-अभी आयी ए-आई तकनीक को भी डॉ. कुमार विश्वास रामायण के गौतम ऋषि के अहिल्या प्रसंग से जोड़ते हैं। वे कहते हैं। 'इंद्र ने ए-आई तकनीक का प्रयोग कर गौतम ऋषि का रूप धर अहिल्या के साथ दुराचार किया। ए-आई माया है तो राम मायावती। रावण मायावी है। आप मायावी नहीं, माया पति बनिए। ए-आई का प्रयोग अपने लिए नहीं विश्व के मंगल के लिए कीजिए। जिससे भारत विश्व गुरु बने।' ¹⁴

राजनीति का ज्ञान- डॉ. विश्वास राम कथा के माध्यम से आज की भ्रष्ट राजनीति पर भी तंज करते नजर आते हैं। वह उन लोगों की भरपूर भर्त्सना करते हैं जो राम को काल्पनिक कहते हैं और राम के होने के साक्ष्य माँगते हैं। डॉ. विश्वास के अनुसार राजा राम एक कुशल राजनीतिज्ञ हैं। वे कहते हैं कि हमारे नेताओं को उनसे राजनीति सीखनी चाहिए। विदेश नीति सीखनी चाहिए। इसके लिए वह रामायण के उस प्रसंग को आधार बनाते हैं जिसमें रावण द्वारा लंका से निष्कासित विभीषण जब प्रभु श्री राम की शरण में आते हैं और प्रभु श्री राम उन्हें 'लंकेश' कहकर पुकारते हैं। प्रभु श्री राम सत्य का अनुसरण करने वाले विभीषण को गले लगाकर लंका का पूरा भेद जान लेते हैं। इससे उन्हें लंका विजय में सहयोग मिलता है।

श्रम की महत्ता- कवि कुमार विश्वास 'अपने-अपने राम' कार्यक्रम के माध्यम से श्रम के महत्व पर भी जोर देते हैं। रामायण के ही एक प्रसंग-जिसमें मिथिला नरेश राजा जनक जनता को बेहाल देखकर स्वयं खेतों में हल चलाते हैं, के माध्यम से कुमार विश्वास लोगों को श्रम की महत्ता समझाते हुए मालिक और नौकर एवं राजा और प्रजा के भेदभाव मिटाने की सलाह देते हैं। वह कहते हैं राम ने पंचवटी में खुद अपनी कुटिया तैयार की थी। जब राम महलों के राजकुमार होकर और राजा जनक, राजा होकर भी कार्य कर सकते हैं तो हम क्यों काम करते समय यह देखते हैं यह काम छोटा है या बड़ा। हम क्यों देखते हैं कि हमारे करने के लायक है या नहीं।

उपसंहार- कवि कुमार विश्वास द्वारा संचालित भगवान राम और भगवान कृष्ण की दिव्यकथा एक ओर सेवानिवृत्त लोगों और हर दिन को भजन-पूजन व सत्संग द्वारा व्यतीत करने के इच्छुक बड़े-बुजुर्गों के लिए लाभदायक सिद्ध हुई है। वहीं दूसरी ओर चौटिंग, सेटिंग और बैटिंग के साथ सोशल मीडिया के भ्रमजाल और पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण में डूबी-भटकी युवा पीढ़ी को भारतीयता व सनातन संस्कृति के रंग में रंगने के लिए प्रभु के चरित्र कारगर सिद्ध हुए हैं। निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है आज के समय में रामायण के सूत्रों की समाज को परम आवश्यकता है। इसके बिना परिवार व समाज मूल्य विहीन हैं। राम के चरित्र को चित्त में लाना परम आवश्यक है। जहाँ संयुक्त परिवार का विघटन, शिक्षा में संस्कृत व हिंदी भाषा का कमतर प्रयोग, पौराणिक ग्रंथों की अनभिज्ञता युवाओं में राम के मूल्य व संस्कारों को पहुँचाने में असमर्थ है, वहीं डॉ. कुमार विश्वास के सूत्र जोड़ने की कला, अद्भुत भाषा कौशल, चुटीला अंदाज, इन सभी पौराणिक ग्रंथों की गहरी समझ के साथ विवेचन व विश्लेषण परिवार व समाज में प्रभु श्री राम के मूल्यों को पुनः स्थापित करने में सहायक सिद्ध रहा है। 'जब वे कथा कहते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो ज्ञान, तर्क और भाषा की त्रिवेणी बह रही हो। यही कारण है कि वे न केवल काव्य मंचों के, बल्कि कथा वाचन के भी अद्वितीय सितारे बन चुके हैं।' ¹⁵

संदर्भ सूची

1. नीतू शर्मा, मनहर वर्ष 1, अंक 1, पेज 3.
2. विश्वास के विचार, मनहर, वर्ष 1, अंक 8, पेज 4.
3. नीतू शर्मा, मनहर वर्ष 1, अंक 1, पेज 3.
4. मनहर वर्ष 1, अंक 1, आमुख
5. [https://www-instagram-com/reel/DRM39pTkpbzAigsh\(MXByMHU0NmhzbdU2Zg\)](https://www-instagram-com/reel/DRM39pTkpbzAigsh(MXByMHU0NmhzbdU2Zg))
6. वृंदा, मनहर, वर्ष 2, अंक 3, पेज 5.

7. <https://youtube-com/shorts/HBGiUhW8npw\si%34SnqAWmRjUJ9SuC-w>
8. सुदीप भोला, मनहर, वर्ष 1, अंक 11, पेज 3.
9. <https://www.facebook-com/share/1EcqiuT2qA/>
10. <https://www-amarujala-com/uttarakhand/rishikesh/ramayana-teaches-not-to-avoid-challenges-but-to-meet-the-rishikesh-news-c-5-1-dm1046-434278-2024-06-14>
11. विश्वास के विचार, मनहर, वर्ष 1, अंक 4, पेज 7.
12. <https://youtu-be/mlME6Kgft34\si%34MCIKT-cLPMGCWava>
13. कुशल कुशलेन्द्र, मनहर, वर्ष 2, अंक 6, पेज 4.
14. <https://youtu-be/NYyJ-dOxnvM\si%34-t0dWb1EVMckEZ5J>
15. चंदन राय, मनहर, वर्ष 2, अंक 2, पेज

27/ए, सीताराम कॉलोनी फेस-2 बल्केश्वर 282004 आगरा

मो- 9412812902



आगरा की श्रीरामबरात : भारतीय संस्कृति का अमृत-कलश

कामना सिंह

उत्तर भारत का ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महोत्सव है श्रीरामलीला और इसका भव्य आयोजन है आगरा की सुप्रसिद्ध श्रीरामबरात। इस तीन दिवसीय आयोजन में पूरा आगरा ब्रज से अवध में परिवर्तित हो जाता है। दिव्यता की अकथनीय धारा आगरा के बच्चे-बच्चे को मिथिलेश्वर के प्रांगण में पहुँचने की प्रतीति कराती है। यह समारोह शरद नवरात्र से पूर्व आयोजित होता है।

इस महोत्सव का शुभारंभ आज से लगभग 138 वर्ष पूर्व 1885 में भगवान राम के भक्त लाला कोकामल, एक प्रतिष्ठित व्यवसायी, ने किया था। उन्होंने पुराने शहर रावतपाड़ा के अन्य व्यापारियों के साथ रामलीला और रामबरात की परिकल्पना की। वर्ष 1885, लाला चन्मोमल की बारहदरी, श्री मनरूकामेश्वर मंदिर गली, में पहली बार रामलीला का मंचन हुआ। कुछ साक्ष्यों के अनुसार प्रथम बार 1875 में इस लीला का शुभारंभ हुआ था। इस मत को मानने वालों के अनुसार इस वर्ष आगरा की रामलीला 149 साल की गौरवशाली परंपरा पूरी कर 150वें वर्ष में प्रवेश कर रही है।

रामलीला महोत्सव की लोकप्रियता बढ़ी, इससे लाला चन्मोमल की बारहदरी से निकलकर श्रीरामलीला रावतपाड़ा चौराहा पर पहुँच गई। 1930 में छावनी परिषद से रामलीला मैदान को श्रीरामलीला कमेटी ने लिया और लीला के लिए मंच तैयार कराये गये। तब से आज तक रामलीला का मंचन वहीं होता है। श्रीरामलीला का सामान रखने में असुविधाओं से बचने के लिए 1940 में बारहदरी में भवन बनाया गया, जहाँ लीला का सामान रखा जाता है।

पहले यह बरात हंडों की रोशनी में बैलगाड़ी पर निकलती थी। इसके बाद हाथी पर निकलने लगी। भरतपुर नरेश के हाथी आते थे। इन हाथियों पर प्रभु श्रीराम के साथ चारों भाई बैठकर निकलते थे। 2010-11 में हाथियों को रामबरात में शामिल करने पर प्रतिबंध लगा दिया गया, इसके बाद रथ पर सवारी निकलने लगी। रत्नजटित रथ पर प्रभु श्रीराम निकलते हैं और साथ में दसियों बैंड के साथ सौ से अधिक झाँकियाँ होती हैं।

समय के साथ यह महोत्सव और अधिक भव्य रूप पाता रहा है। श्रीरामलीला कमेटी द्वारा 1973-74 में चाँदी का रथ बनवाया गया। इस रथ पर भगवान विष्णु की सवारी निकलती है। बेशकीमती रथ को देखने के लिए लोगों की भीड़ जुटती है। इस रथ पर की गयी नक्काशी दुर्लभ है।

श्रीरामबरात सवा सौ साल से अधिक के इतिहास में बस दो बार ही नहीं निकल सकी है। पहले भारत-पाक युद्ध के समय एक बार और दो साल लगातार कोविड के कारण रोक दिया गया था यह आयोजन। 145 बार रामलीला महोत्सव मनाया जा चुका है। लाला कोकामल के वंशज-परिवारीजन आज भी इस आयोजन में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

एक ओर रावतपाड़ा क्षेत्र में श्रीरामबरात मार्ग पर लीलाएँ होती हैं, दूसरी ओर रामलीला मैदान में लीलाएँ चलती रहती हैं। साथ ही साथ पूर्व-निर्धारित क्षेत्र में जनकपुरी आकार लेती जाती है। जनकपुरी का स्थान प्रतिवर्ष अलग-अलग होता है। राजा जनक और रानी सुनयना निर्धारित होने वाले सुपात्र अपने सौभाग्य पर फूले नहीं समाते हैं।

जनकपुरी तैयार करने के लिए आगरा के बाहर से कारीगर और कलाकार बुलाये जाते हैं। राजा जनक का महल बनाकर

जनकपुरी को सजाने का उत्साह देखते ही बनता है। रावतपाड़ा से जनकपुरी तक पहुँचाने का मार्ग भी पूर्णरूपेण सजाया जाता है।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम भगवान की बरात का अवसर है तो परिधान भी उसी तरह होंगे। ऐसे आकर्षक परिधान कि अपलक निहारते रहो। स्वरूप को जरी-गोटे के जयपुरिया कोट से सजाया जाता है तो कभी वह बनारसी धोती-कुर्ता धारण करते हैं। इंदौर के मोतियों की माला, विशेष रूप से तैयार करी गई पादुकाएँ उनके स्वरूप को निखारती है। उनके स्वरूप को दिव्य बनाने के लिए श्रीरामलीला कमेटी की महिला शक्ति अपनी पूरी कला लगा देती है।

लीला के एक माह में सर्वप्रथम बारादरी में मुकुटपूजन होता है। जिसके साथ ही श्रीरामचरितमानस का पारायण आरंभ हो जाता है। कुछ दिन बाद गणेशजी की शोभा यात्रा निकाली जाती है। इसके अगले दिन रावण की 'दुहाई लीला' होती है।

उसके बाद आगरा के रामलीला मैदान में भगवान विष्णु, लक्ष्मी जी, गणेश जी व अन्य स्वरूपों की आरती उतारकर लीला का शुभारंभ किया जाता है। कुछ प्रमुख मनोहारी लीलाएँ हैं—श्रीरामजन्म, जनकनंदिनी जन्म, मुनि विश्वामित्र का अयोध्या पहुँचकर अपने यज्ञ की रक्षा के लिए राजा दशरथ से श्रीराम और लक्ष्मण को माँगना, दोनों भाइयों का मुनि विश्वामित्र के साथ जाना, मार्ग में ताड़का का वध आदि।

श्रीरामलीला में गौरा मंदिर और अहल्या-उद्धार के प्रसंग मनमोहक हैं। श्रीसीता जी का पुष्प वाटिका में जाना, श्रीराम का लक्ष्मण सहित वहाँ से अश्व पर सवार होकर निकलना श्रद्धालुओं को मंत्रमुग्ध कर देता है। शिव जी के धनुष का टूटने और सीताजी के स्वयंवर की लीलाओं के पूर्ण होते ही आकाश का मंगलगीतों से गुंजायमान हो उठना सिया-राम विवाह के उत्सव का शुभारंभ है।

तदुपरांत एक ओर प्रभु श्रीराम के निवास पर मेंहदी तथा अन्य मांगलिक कार्य संपन्न होते हैं, वहीं दूसरी ओर जनकपुरी भी प्रभु के स्वागत में सज-धजकर तैयार होती है। वैदेही के हाथों में श्रीराम के नाम की मेहंदी रचती है। कार्यक्रम में सम्मिलित नगरवासी इस शुभ अवसर पर अपने हाथों में मेंहदी लगाते हैं। संगीत का कार्यक्रम होता है। भजन-लोकगीत गायन के साथ भक्ति में डूबे उपस्थित जन तन्मय होकर नृत्य करते हैं।

मंत्रोच्चारण के बीच पीली चिट्ठी विघ्नविनाशक श्री गणेश जी को अर्पित करने के बाद जनकपुरी से राजा दशरथ को विवाह का निमंत्रण भेजा जाता है। मिथिला नरेश बेटी जानकी और प्रभु श्रीराम के विवाह का न्योता देने निकलते हैं। राजा जनक का इस प्रकार आमंत्रित करना जन-जन को इस महोत्सव से जोड़ देता है। उनके आगे विघ्नहर्ता श्रीगणेश जी की सवारी रहती है। आमंत्रण यात्रा के मार्ग में पुष्प वर्षा होती रहती है।

श्रीरामबरात के प्रथम दिन सायंकाल मन्तरूकामेश्वर महादेव मंदिर की लाला चन्नोमल बारहदरी से श्रीराम की वरयात्रा का आरंभ होता है। बरात के आगे ऊँटों और अश्वों के आरोही बरात के आगमन का संदेश देते हुए चलते हैं। बैड पाटी भी साथ होती है। विघ्नहर्ता गणेश जी की सवारी बरात में आगे ही रहती है। दर्शकों के नेत्रों में यह नयनाभिराम दृश्य जैसे टँक-सा जाता है -

रामबरात के लिए भगवान श्रीराम और उनके अनुजों के स्वरूपों का राजसी श्रृंगार हुआ है। उन्होंने जयपुर से विशेष रूप से मँगवाई रजत-स्वर्ण जरी की लाल-सुनहरे रंग की रेशमी पोशाक धारण की है। प्रभु के शीश पर रत्नजड़ित साढ़े पाँच किलो का रजत मुकुट सुशोभित है, जिसमें भगवान विष्णु के चारों आयुध शंख, पद्म, गदा और चक्र के साथ सूर्य की आभा बहुत सुंदर लग रही है। वह देवराज इंद्र के दिव्य रथ पर सवार हैं। शेषनाग अवतार लक्ष्मण ने पाँच किलो का रत्नजड़ित मुकुट पहना है, जिस पर शेषनाग की आकृति अंकित है। उनके रथ पर बनी शेषनाग की आकृति रथ की शोभा बढ़ा रही है। भरत और शत्रुघ्न साढ़े तीन-तीन किलो के मुकुट पहने हैं, जिसमें कमल पुष्प की सुन्दर आकृति अंकित है। उनके रथ भी अतीव शोभाशाली हैं।

अनुपम, अलौकिक दृश्य हैं। मार्ग के दोनों ओर बने घर-दुकान बिजली की रोशनी से जगमगा रहे हैं। रात गहरा आई है, किंतु धरा पर चकाचौंध इतनी कि समय का पता ही नहीं चल रहा। श्री सियाराम-प्रेम से पगे आगरावासी अपलक बरात

की प्रतीक्षा करते हैं। बग्गी पर सवार राजा दशरथ रास्ते में दिखने वाले हर नगरवासी को बरात में चलने का न्योता देते रहते हैं। यह दृश्य इस उत्सव के साधारणीकरण का बोधक है।

श्रीराम के अनुज शत्रुघ्न, भरत और लक्ष्मण के रथ पीछे होते हैं और सबसे अंत में प्रभु श्री राम अपने दिव्य रथ पर सवार होते हैं। प्रत्येक मनुष्य जन-जन के आराध्य प्रभु श्रीराम की मनोहारी छवि निहारने को आतुर दिखाई देता है। श्रीराम के दिव्य रथ के चमकते सूर्य और सूर्यवंश की पताका का दर्शन पाते ही दर्शक पुष्प वर्षा आरंभ कर देते हैं। जय श्रीराम के नारों से आकाश गूँज उठता है।

सृष्टिस्वामी भगवान विष्णु के अवतार श्री रामचंद्र जी मंत्रोच्चार के साथ महिमामयी श्री सीता जी से विवाह रचाने जा रहे हों, तो वातावरण अपूर्व अलौकिक हो ही जायेगा। बरात के निकलते ही निरंतर मंगलकारी शुभ शकुन होने लगते हैं— बनइ न बरनत बनी बराता। होहिं सगुन सुंदर सुभदाता।¹

कभी-कभी इस समय बारिश की हल्की बूँदें आसमान से नीचे आती हैं तो आभास होता है कि इंद्रदेव भी आगरा की श्रीरामबरात का दर्शन कर रहे हैं। भक्तों को आकाश से नीचे आते जलबिंदु सुमन सरीखे प्रतीत होते हैं— हरषे बिबुध बिलोकि बराता। बरषहिं सुमन सुमंगल दाता॥²

इधर बरात नगर के चक्कर लगाती है, उधर जनकपुरी में जानकी श्रीराम को वर रूप में पाने की कामना के साथ डोले में सवार हो गौरा पूजन को निकलती हैं। जानकीजी का डोला जनकपुरी क्षेत्र में घुमाया जाता है, जहाँ जगह-जगह लोग उनकी आरती उतारते हैं। भोर तक सियाराम के जयकारों से जनकपुरी गूँजती रहती है। राजा जनक और रानी सुनयना समेत समस्त मिथिलावासी श्रीरामबरात की अगवानी की तैयारी में जुटे रहते हैं। मन का एक भाग जनकपुरी में तो दूसरा भाग बरात में रमा रहता है। बरात इस समय कहाँ होगी, क्या कर रही होगी सोचते ही पल-पल बीतता है।

रावतपाड़ा स्थित लाला चन्मोल की बारादरी से प्रारंभ हुई बरात रावतपाड़ा, जौहरी बाजार, सुभाष बाजार, दरेसी नंबर एक व दो, छत्ता बाजार, कचहरी घाट, बेलनगंज, पथवारी, धूलियागंज, सिटी स्टेशन रोड, घटिया, छिली ईट रोड, फुलड़ी, सेब का बाजार, किनारी बाजार, कसेरठ बाजार होते हुए रावतपाड़ा पहुँचती है। मार्ग भर श्रद्धालुओं की भीड़ जय-जयकार करती है। झाँकियों के साथ सेल्फी ली जाती है। जगह-जगह स्वरूपों पर पुष्प-वर्षा होती है व आरती से भव्य स्वागत किया जाता है। बरात के साथ चलते नागरिक बरात का ही अंग बन जाते हैं।

रात भर नगर का भ्रमण करने के बाद बरात अगली सुबह रावतपाड़ा से जनकपुरी पहुँचती है। यहाँ राजा जनक और जनकपुरी महोत्सव के पदाधिकारी बरात का भव्य स्वागत करते हैं। यहाँ स्वरूपों का विश्राम और पुनः श्रृंगार होता है। फिर जनकपुरी में वरयात्रा निकलती है। मिथिलानगरी श्रजय श्रीरामश के उद्घोष से गुंजायमान हो उठती है। श्रीराम को वरवेश में देख देवता भी अपना जीवन सफल जान रहे हैं। - अवलोकि रघुकुल कमल रबि छबि सुफल जीवन लेखहीं॥³

सायंकाल प्रभु श्रीराम और सीता जी के विवाह के प्रतीक रूप में तुलसी जी और शालिग्राम जी का विवाह संपन्न कराया जाता है। - करि होमु बिधिवत गाँठि जोरि होन लागीं भाँवरी॥⁴

सतरंगी फूलों से सजे जनवासे में गूँजते मंत्रोच्चारण के बीच दोनों को सात फेरे दिलाकर विवाह के मंगलसूत्र में बाँधा जाता है।

श्रद्धा से भरे लोग अपनी पुलक छिपा नहीं पाते। उन्हें सृष्टि के कण-कण में अपने प्रभु के ही दर्शन होने लगते हैं। - राम सीय सुंदर परछाहीं। जगमगात मनि खंभन माहीं॥⁵

गठजोड़ के बाद श्रीराम और सिया जनकपुरी का भ्रमणकर जनकमहल पहुँचते हैं। साथ में घोड़े और रथों पर सवार राजा दशरथ, गुरु वशिष्ठ, विश्वामित्र, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न की सवारी होती है। श्री रामचंद्र-सिया, लक्ष्मण-उर्मिला, भरत-मांडवी, शत्रुघ्न-श्रुतिकीर्ति जनकमहल के मंच पर विराजमान होते हैं, वहाँ उनकी दिव्य और अलौकिक आभा हर किसी को आकर्षित करती है। यहाँ भी आरती उतारी जाती है। मंच पर स्वरूपों के पहुँचने के बाद उनके दर्शनों के लिए श्रद्धालुओं के भीड़ उमड़ने लगती है। कोई दूर से स्वरूपों के संग सेल्फी लेता दिखता है तो कोई हाथ जोड़कर अपनी आस्था प्रकट करता दिख जाता

है। बुजुर्ग महिलाएँ स्वरूपों की बलाएँ लेती दिखाई पड़ती हैं।

श्रद्धा-भक्ति से आपूर्ण जनकपुरी में तीन दिन तक सायं होते न होते लाखों बतियाँ झिलमिला उठती हैं। बिजली की झालरों का रंग-संयोजन मन को मुग्ध कर देता है। हवा में निरंतर गूँजती संगीत लहरियाँ बताती हैं कि आस्था बिन बाधा प्रवहमान है। दिन भर श्रीरामचरितमानस की चौपाइयाँ, दोहे और भजन गूँजते रहते हैं। जनकपुरी क्षेत्र में विविध झाँकियाँ सजाई जाती हैं। इन झाँकियों में सामाजिक समस्याओं से लेकर वैश्विक उपलब्धियों तक का उल्लेख होता है। धार्मिक झाँकियाँ भी दिखाई देती हैं। शिव तांडव, माँ काली द्वारा राक्षसों का वध, श्रीराधा-कृष्ण महारास, विघ्न विनाशक गणपति और वीर हनुमान आदि की झाँकियाँ प्रति वर्ष अलग-अलग रूपों में प्रस्तुत की जाती हैं। झूले, चाट-पकौड़ी, खिलौने-गुब्बारेवालों का जमघट इस आयोजन को और भी गहरा रंग देता है। ऐतिहासिक रामबरात और जनकपुरी में पूरा शहर उमड़ पड़ता है। ऐसा लगता है मानो जन-जन ने स्वयं को श्रीराम के रंग में रँग लिया है।

सीता जी और श्रीराम विवाहोत्सव में दो दिन तक उल्लसित रहने के बाद जब जनकनंदिनी की विदाई की बेला आती है तो जनकपुरवासियों का अश्रुओं पर नियंत्रण नहीं रहता। राजा जनक सिसकते हुए अपनी पुत्री को धर्म और कुलधर्म की रीति सिखाते हैं। श्रीराम विवाहोत्सव के हर्ष और जनकदुलारी की विदाई की वेदना के बीच श्रीरामबरात सीताजी को लेकर मनःकामेश्वर की ओर प्रस्थान करती है -

चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई॥

रामहि निरखि ग्राम नर नारी। पाइ नयन फलु होहिं सुखारी॥⁶

एक ओर अवध में उल्लास की लहर, दूसरी ओर लाखों बतियों से झिलमिलाती जनकपुरी का उदास दिखना। इस जगह आकर श्रीरामबरात हमें जीवन दर्शन से जोड़ देती है। उल्लास और उत्साह के बाद शांति की लहर जीवन का रूप है और शांति से एक उल्लासमय भविष्य जुड़ा रहता है, यह भी जीवन हमें सिखाता है। श्रीराम के सीता जी के संग अवधपुरी लौटने और उसके बाद की रामायण की सारी लीलाएँ आगे के कुछ दिनों तक रामलीला मैदान में होती हैं।

भक्ति और प्रेम के रंग में रँगी श्रीरामबरात आगरा की पहचान है। मनुष्य को संस्कृति और धर्म से जोड़ता यह महोत्सव कुछ दिनों के लिए पूरे आगरा को एक सूत्र में बाँध लेता है। समय के साथ श्रीरामबरात का रूप बदला तो वह और अधिक मनोहरी होती चली गई। यह उत्सव मुख्य रूप से भगवान राम और सीता जी के विवाह और श्रीराम के भाइयों के राजकुमारियों के साथ विवाह को समर्पित है। इसके साथ यह महिलाओं की सुरक्षा, जानवरों की सुरक्षा आदि सामाजिक संदेश भी देता है।

धर्म की, आध्यात्मिकता की लौ को प्रज्वलित रखते हुए श्रीरामबरात के साथ नये-नये प्रयोग किया जा रहे हैं। भजन संध्याएँ आयोजित की जाती हैं जिनका आनंद श्रद्धालु लोग रुचिपूर्वक उठाते हैं। बरात में हर ओर समयानुकूल झलकियाँ दिखाई देती हैं। झोने से हुई पुष्प वर्षा से श्रद्धालु अभिभूत हो जाते हैं। कुछ लोग स्वयं को दिव्य भावनाओं से आबद्ध पाते हैं तो कुछ इस दृश्य को अपने मोबाइल में कैद करने लगते हैं।

नवीनतम रामलीला 2025 में एक सौ पच्चीस झाँकियाँ, रोड शो और सुर-लहरियाँ बिखेरते विश्वप्रसिद्ध बैंड ने बरात की भव्यता बढ़ाई। बरात में सम्मिलित झाँकियों ने विभिन्न सामाजिक विषयों द्वारा लोगों को जागरूक किया है। झाँकियों में नवीन प्रयोग आकर्षण का केंद्र रहे हैं। इनमें ऑपरेशन सिंदूर से लेकर बारह ज्योतिर्लिंग की झाँकी भी शामिल रही। जी-20 में पीएम मोदी और जो बाइडेन, इंडिया गेट, टी-20 विश्वकप खेलते बच्चे, चन्द्रमा पर भारत, उड़ते मोर पर गणेशजी, राजराजेश्वरी माँ कैला देवी का छप्पन भोग, धारा 370, खुशहाल कश्मीर, पुलवामा के शहीदों को श्रद्धांजलि आदि झाँकियाँ प्रमुख थीं।

जनकपुरी में श्रीराम दर्शन गैलरी सजाई गई, जिसमें भगवान राम के जीवन से जुड़े चित्रों की रिप्लिका प्रस्तुत की गई। भगवान श्रीराम के जीवन से जुड़े ग्रंथ का निर्माण किया जा रहा है, जिसमें विविध आलेखों और श्रीरामलीला के विविध चित्रों का संग्रह होगा। श्रीरामबरात कमेटी के पदाधिकारियों ने अंगदान का संकल्प लिया है।

प्रतिवर्ष भगवान श्रीराम की लीला महोत्सव के दिन जैसे-जैसे नजदीक आते हैं, प्राणी मात्र का मन राम-काज करने को

आतुर हो उठता है और रामलीला महोत्सव के समाप्त होने तक सभी तन-मन और आत्मा से श्रीराम के चरणों में समर्पित रहते हैं। सोशल मीडिया के इस युग में भी आगरावासी जिस तरह से इन लीलाओं से जुड़ते हैं, उसे देखकर कहीं से भी नहीं लगता कि आज का मनुष्य अपनी संस्कृति और जड़ों से दूर हुआ है।

अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए यूनेस्को ने 2008 में रामायण के पारंपरिक प्रदर्शन रामलीला को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची में शामिल किया। आगरा की श्रीरामबरात राष्ट्रीय या यूनेस्को की सांस्कृतिक विरासत सूचियों में अलग से सूचीबद्ध नहीं है, लेकिन यह मान्यता प्राप्त रामलीला का एक अभिन्न अंग है।

मनुष्य ही मनुष्य के साथ जुड़कर इस दिव्य लीला को करता है। यहाँ धर्म और जाति आड़े नहीं आती। एक-दूसरे के प्रति स्नेह-सम्मान भाव ही प्रबल होता है। इसमें भाग लेने वाला हर मनुष्य स्वयं को रामबरात के उत्सव का अंग मानकर उत्साहपूर्वक नाच-गाना, सजना-सँवना करता है। व्यस्ततम-संघर्षमय जीवन में यह स्पृहणीय है। सामूहिकता, जनभागीदारी, सर्वकल्याण, धैर्य, दृढ़ता, न्याय, उदारता सहित अनेक मानवीय मूल्यों का उदाहरण है श्रीरामबरात।

मन में उल्लास, हर्ष अपार और प्रभु को अपलक निहारते श्रद्धालुओं का ज्वार। रथ पर सवार जन-जन के आराध्य के स्वागत को आतुर अयोध्यावासियों की मनुहार। और फिर श्रीराम-सिया विवाह के बाद बरात की विदाई पर जिस तरह लोगों की आँखें भीग उठती हैं, उससे दिखाई देता है कि भावनाओं का ज्वार मनुष्य के अंतर में प्रतिपल उमड़ता रहता है। आज के भौतिकतावादी, यांत्रिक जीवन में मानव के संवेदनशील होने के ये क्षण अलग ही अर्थ रखते हैं।

श्रीरामबरात एक महत्वपूर्ण आयोजन है। यह भारतीय संस्कृति और इतिहास के प्रति लोगों की आस्था को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। प्रभु की बरात के साक्षी बनने और परंपरा से स्वयं को जोड़े रखने के लिए दूर-दराज के गाँवों से लोग सपरिवार आते हैं। जिसे जहाँ जगह मिलती है, वह वहीं ठहरकर बारात देखता है। दुकानों और घरों की छतों पर भी भीड़ दिखाई देती है। प्रवासी भीड़ को समायोजित करने के लिए सिनेमा-थिएटर पूरी रात फिल्म शो चलाते हैं। बैंड वाले बरात में संगीत बजाने का पैसा नहीं लेते।

उत्सव को पूरे आगरा में लाखों लोगों के साथ-साथ राजस्थान और मध्य प्रदेश के पड़ोसी जिलों से आने वाले लोग भी देखते हैं। इस समय आगरा में पहुँचे विदेशी भी जनकपुरी देखने का मोह नहीं छोड़ पाते और अपने मोबाइल में इन अविस्मरणीय क्षणों को कैद करते रहते हैं।

इन तीन दिनों को एक बड़े कार्निवल के रूप में देखा जा सकता है, जहाँ सभी क्षेत्रों के लोग एक साथ मिलकर आयोजन को सफल बनाते हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण संदेश यही है कि मर्यादा, सत्य, प्रेम, विश्वास मनुष्य को परम तत्व से जोड़े रखते हैं तो अत्याचार, अन्याय, अनाचार की सदैव पराजय होती है। बुराई पर भलाई की विजय, दानव पर मानव की विजय, अधर्म पर धर्म की विजय का प्रतीक है आगरा की श्रीरामलीला। उसका एक अत्यन्त भव्य अंग है आगरा की श्रीरामबरात, जिसे भारतीय संस्कृति का अमृत-कलश कह सकते हैं।

संदर्भ

1. बालकाण्ड, श्रीरामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास (1/303)
2. वही (2 /302)
3. वही (5/319)
4. वही (4/324)
5. वही (2/325)
6. वही (4 /343)

फ्लैट नं. 903, ब्लॉक-1, टाइप-बी, पॉकेट-बी, मोतियाखान, नयी दिल्ली - 110055
मो- 82876 87712



भारत-श्रीलंका पर्यटन संबंध : सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य

सामु केराई

सारांश- भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन संबंध केवल दो पड़ोसी देशों के बीच यात्राओं तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह दोनों देशों की साझा ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विरासत का महत्वपूर्ण प्रतीक है। प्राचीन काल से ही समुद्री मार्गों के माध्यम से दोनों देशों के बीच व्यापार, संस्कृति और धर्म का आदान-प्रदान होता रहा है। यही कारण है कि आज भी भारत और श्रीलंका के पर्यटन संबंध अत्यंत मजबूत और जीवंत हैं। भारत बौद्ध धर्म की जन्मभूमि है, जबकि श्रीलंका बौद्ध धर्म के संरक्षण और विकास का प्रमुख केंद्र रहा है। इस कारण श्रीलंका से बड़ी संख्या में श्रद्धालु बोधगया, सारनाथ, कुशीनगर, राजगीर और वैशाली जैसे पवित्र बौद्ध स्थलों की यात्रा करते हैं। दूसरी ओर, भारतीय पर्यटक अनुराधापुर, कैंडी, दंबुला, मिहिल्ले और अन्य बौद्ध धरोहर स्थलों का दर्शन करने के लिए श्रीलंका जाते हैं। इसी प्रकार रामायण से जुड़े स्थलों के कारण भी श्रीलंका भारतीय पर्यटकों के लिए विशेष महत्व रखता है। नुवारा एलिया, सीता अम्पन मंदिर, अशोक वाटिका तथा रावण से जुड़े अनेक स्थल धार्मिक पर्यटन को नई पहचान प्रदान करते हैं। धार्मिक पर्यटन के साथ-साथ सांस्कृतिक और प्राकृतिक पर्यटन भी दोनों देशों के संबंधों को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दोनों देशों की कला, साहित्य, संगीत, नृत्य, भाषा, भोजन और लोक परंपराओं में अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। श्रीलंका के समुद्र तट, चाय के बागान, राष्ट्रीय उद्यान और विश्व धरोहर स्थल भारतीय पर्यटकों को आकर्षित करते हैं, जबकि भारत की ऐतिहासिक धरोहरें, विविध प्राकृतिक स्थल और धार्मिक केंद्र श्रीलंकाई पर्यटकों के लिए विशेष आकर्षण का विषय हैं। भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन संबंध केवल आर्थिक लाभ तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे दोनों देशों की सांस्कृतिक एकता, धार्मिक आस्था, ऐतिहासिक विरासत और पारस्परिक मैत्री को भी सुदृढ़ करते हैं। भविष्य में यदि दोनों देश सतत पर्यटन, विरासत संरक्षण, समुद्री पर्यटन और संयुक्त पर्यटन परियोजनाओं पर अधिक ध्यान दें, तो पर्यटन दोनों देशों के बीच सहयोग, विकास और सांस्कृतिक सद्भाव का और भी प्रभावी माध्यम बन सकता है।

बीज शब्द- सांस्कृतिक, आर्थिक, परिप्रेक्ष्य, विरासत, पर्यटन।

बौद्ध पर्यटन भारत और श्रीलंका के बीच धार्मिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंधों का सबसे महत्वपूर्ण आधार है। भगवान गौतम बुद्ध का जन्म, ज्ञान प्राप्ति, प्रथम उपदेश और महापरिनिर्वाण भारत और नेपाल की भूमि पर हुआ, जबकि बौद्ध धर्म के संरक्षण, संवर्धन और प्रसार में श्रीलंका की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र (महिन्द) और पुत्री संघमित्रा द्वारा श्रीलंका में बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार ने दोनों देशों के बीच धार्मिक और सांस्कृतिक संबंधों को नई दिशा दी। प्राचीन समुद्री व्यापार मार्गों के माध्यम से भारतीय व्यापारी, विद्वान और यात्री श्रीलंका आते-जाते रहे। यही ऐतिहासिक संपर्क आज धार्मिक और सांस्कृतिक पर्यटन का आधार बना हुआ है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों—विशेषकर रामायण और महाभारत—में श्रीलंका का उल्लेख मिलता है। रामायण में वर्णित लंका और भगवान श्रीराम की यात्रा भारतीय जनमानस में श्रीलंका के प्रति विशेष आस्था का भाव उत्पन्न करती है। रामेश्वरम्, धनुषकोडी, आदम सेतु (रामसेतु), नुवारा एलिया, सीता

अम्मन मंदिर, अशोक वाटिका तथा रावण से जुड़े अनेक स्थान आज धार्मिक और सांस्कृतिक पर्यटन के महत्वपूर्ण केंद्र बन चुके हैं। इन स्थलों का दर्शन करने के लिए प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में भारतीय पर्यटक श्रीलंका की यात्रा करते हैं। इस प्रकार महाकाव्य परंपरा दोनों देशों के पर्यटन संबंधों को ऐतिहासिक आधार प्रदान करती है। प्राचीन काल में समुद्री व्यापार भी दोनों देशों के संबंधों का प्रमुख आधार था। भारत के दक्षिणी तटों—विशेषकर तमिलनाडु, केरल और ओडिशा—से व्यापारी श्रीलंका के बंदरगाहों तक पहुँचते थे। व्यापार के साथ-साथ भाषा, कला, स्थापत्य, धर्म, रीति-रिवाज और जीवन-पद्धति का भी आदान-प्रदान हुआ। इसी कारण दोनों देशों की सांस्कृतिक परंपराओं में अनेक समानताएँ देखने को मिलती हैं। यह साझा विरासत आज सांस्कृतिक पर्यटन के रूप में विकसित हो चुकी है। मध्यकाल और औपनिवेशिक काल में भी भारत और श्रीलंका के संबंध पूरी तरह समाप्त नहीं हुए। औपनिवेशिक शासन के दौरान दोनों देशों के बीच श्रमिकों, व्यापारियों, धार्मिक नेताओं और विद्वानों का आवागमन जारी रहा। विशेष रूप से भारतीय मूल के तमिल समुदाय का श्रीलंका में बसना दोनों देशों के सामाजिक और सांस्कृतिक संबंधों का महत्वपूर्ण अध्याय है। स्वतंत्रता के बाद भारत और श्रीलंका ने मैत्रीपूर्ण संबंधों को आगे बढ़ाते हुए सांस्कृतिक सहयोग, पर्यटन विकास और धार्मिक यात्राओं को प्रोत्साहित किया। भारत और श्रीलंका धार्मिक आधार से सबसे महत्वपूर्ण है। श्रीलंका विश्व के प्रमुख बौद्ध देशों में से एक है, इसलिए वहाँ के लाखों श्रद्धालु भगवान बुद्ध से जुड़े भारत के पवित्र तीर्थस्थलों—बोधगया, सारनाथ, कुशीनगर, राजगीर, वैशाली और श्रावस्ती की यात्रा करते हैं। दूसरी ओर, भारत के श्रद्धालु श्रीलंका के अनुराधापुर, कैंडी स्थित दंत मंदिर दंबुला गुफा मंदिर, मिहंतले तथा अन्य बौद्ध धरोहर स्थलों का दर्शन करते हैं। इस प्रकार बौद्ध पर्यटन दोनों देशों के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संबंधों को निरंतर सुदृढ़ बना रहता है। साथ ही साथ रामायण से जुड़े स्थलों के कारण श्रीलंका भारतीय पर्यटकों के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र है। नुवारा एलिया, सीता अम्मन मंदिर, अशोक वाटिका, दिवुरुमपोला, रावण गुफा, रावण जलप्रपात तथा त्रिंकोमाली का कोनेश्वरम मंदिर जैसे स्थान भारतीय श्रद्धालुओं और पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। इसी प्रकार श्रीलंका से अनेक श्रद्धालु भारत के रामेश्वरम्, अयोध्या, वाराणसी, तिरुपति, म्दुरै तथा अन्य प्रमुख हिंदू तीर्थस्थलों की यात्रा करते हैं। यह धार्मिक पर्यटन दोनों देशों के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संबंधों को और अधिक सशक्त बनाता है।

सांस्कृतिक पर्यटन से भी भारत और श्रीलंका संबंधों का महत्वपूर्ण पक्ष है दोनों देशों की लोक परंपराओं, नृत्य, संगीत, साहित्य, भाषा, खान-पान और कला में अनेक समानता दिखाई देती है। भारतीय शास्त्रीय नृत्य, योग, आयुर्वेद तथा भारतीय सिनेमा का श्रीलंका में व्यापक प्रभाव है, जबकि श्रीलंका की बौद्ध कला, पारंपरिक नृत्य, हस्तशिल्प और सांस्कृतिक विरासत भारतीय पर्यटकों को आकर्षित करती है। सांस्कृतिक महोत्सव, कला प्रदर्शनकारी, साहित्यिक सम्मेलन तथा शैक्षिक आदान-प्रदान कार्यक्रम दोनों देशों के पर्यटन को नई ऊर्जा प्रदान करते हैं। कला और स्थापत्य की दृष्टि से भी दोनों देशों में गहरा संबंध दिखाई देता है। श्रीलंका के प्राचीन स्तूप, विहार, गुफा मंदिर और बौद्ध मूर्तिकला भारतीय कला परंपरा से प्रभावित हैं। वहीं भारतीय मंदिर वास्तुकला, बौद्ध स्मारक और शिल्पकला श्रीलंकाई पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। अनुराधापुर, पोलोन्नारुवा, सिगिरिया और दंबुला जैसे विश्व धरोहर स्थल तथा भारत के साँची, अजंता, एलोरा, महाबोधि मंदिर और नालंदा जैसे सांस्कृतिक केंद्र दोनों देशों के सांस्कृतिक पर्यटन को समृद्ध बनाते हैं। साहित्य, भाषा और शिक्षा भी सांस्कृतिक पर्यटन के महत्वपूर्ण आयाम हैं। भारत और श्रीलंका के विद्वानों के बीच प्राचीन काल से बौद्ध ग्रंथों, संस्कृत, पाली और तमिल साहित्य का आदान-प्रदान होता रहा है। आज भी विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों और सांस्कृतिक संगठनों के माध्यम से दोनों देशों के विद्यार्थी, शोधार्थी और विद्वान एक-दूसरे के देश का भ्रमण करते हैं। इससे शैक्षणिक पर्यटन और सांस्कृतिक संवाद को बढ़ावा मिलता है। भारतीय संगीत, योग, आयुर्वेद, शास्त्रीय नृत्य और भारतीय सिनेमा का श्रीलंका में व्यापक प्रभाव है। इसी प्रकार श्रीलंका की पारंपरिक नृत्य शैलियाँ, बौद्ध कला, हस्तशिल्प, लोकसंगीत और पारंपरिक भोजन भारतीय पर्यटकों के लिए आकर्षण का विषय हैं। दोनों देशों में आयोजित सांस्कृतिक महोत्सव, कला प्रदर्शनियाँ, पुस्तक मेले, साहित्यिक सम्मेलन और अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियाँ सांस्कृतिक पर्यटन को नई दिशा प्रदान करती हैं। सांस्कृतिक पर्यटन का आर्थिक महत्व भी अत्यंत व्यापक है। इससे होटल उद्योग, परिवहन, हस्तशिल्प, स्थानीय बाजार, पारंपरिक कला, लोक कलाकारों और पर्यटन सेवाओं को बढ़ावा

मिलता है। स्थानीय समुदायों को रोजगार प्राप्त होता है तथा सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण के लिए आर्थिक संसाधन उपलब्ध होते हैं। साथ ही, सांस्कृतिक पर्यटन दोनों देशों की सॉफ्ट पावर को भी सशक्त बनाता है और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनकी सांस्कृतिक पहचान को मजबूत करता है। वर्तमान समय में भारत और श्रीलंका सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए अनेक संयुक्त प्रयास कर रहे हैं। सांस्कृतिक समझौते, पर्यटन सहयोग, धार्मिक यात्रा सुविधाएँ, प्रत्यक्ष हवाई सेवाएँ, विरासत संरक्षण परियोजनाएँ और सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम दोनों देशों के संबंधों को और अधिक मजबूत बना रहे हैं। भविष्य में यदि दोनों देश संयुक्त सांस्कृतिक पर्यटन सर्किट, डिजिटल विरासत संरक्षण, संग्रहालय सहयोग और शोध कार्यक्रमों को बढ़ावा दें, तो सांस्कृतिक पर्यटन नई ऊँचाइयों तक पहुँच सकता है। श्रीलंका अपनी प्राकृतिक सुंदरता के कारण विश्व के प्रमुख पर्यटन स्थलों में गिना जाता है। यहाँ के स्वच्छ समुद्र तट, हरित पर्वतीय क्षेत्र, चाय के बागान, झरने, वन्यजीव अभयारण्य तथा राष्ट्रीय उद्यान पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। बेंटोटा, मिरिसा, उन्नावालुना, अरुगम बे, पासिकुडा और नीलावेली जैसे समुद्र तट अपने शांत वातावरण, स्वच्छ जल और जलक्रीड़ाओं के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ पर्यटक तैराकी, स्कूबा डाइविंग, स्नॉर्कलिंग, सर्फिंग, व्हेल एवं डॉल्फिन दर्शन तथा नौका विहार जैसी गतिविधियों का आनंद लेते हैं। विशेष रूप से मिरिसा विश्व के प्रमुख व्हेल-वॉचिंग स्थलों में से एक माना जाता है। भारत और श्रीलंका के बीच समुद्री पर्यटन सहयोग की भी व्यापक संभावनाएँ हैं। दोनों देशों के बीच क्रूज़ पर्यटन, नौका यात्राएँ, तटीय पर्यटन तथा समुद्री विरासत के संरक्षण की दिशा में निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। रामेश्वरम् और श्रीलंका के उत्तरी तटीय क्षेत्रों के बीच ऐतिहासिक एवं धार्मिक महत्व होने के कारण भविष्य में समुद्री पर्यटन को और अधिक विकसित किया जा सकता है। इससे दोनों देशों के बीच पर्यटकों की आवाजाही बढ़ेगी तथा स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी लाभ होगा। प्राकृतिक एवं समुद्री पर्यटन का आर्थिक महत्व भी अत्यंत व्यापक है। इससे होटल उद्योग, परिवहन, हस्तशिल्प, स्थानीय बाजार, मत्स्य उद्योग और पर्यटन सेवाओं को बढ़ावा मिलता है। लाखों लोगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिलता है तथा विदेशी मुद्रा अर्जित होती है। इसके साथ ही पर्यटन स्थानीय संस्कृति, पारंपरिक कला और पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता भी बढ़ाता है। आर्थिक दृष्टि से पर्यटन दोनों देशों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। होटल उद्योग, परिवहन, विमान, हस्तशिल्प, स्थानीय बाजार, रेस्तराँ तथा लघु उद्योगों को पर्यटन से प्रत्यक्ष लाभ प्राप्त होता है। पर्यटन के माध्यम से विदेशी मुद्रा अर्जित होती है, रोजगार के अवसर बढ़ते हैं तथा स्थानीय समुदायों की आय में वृद्धि होती है। विशेष रूप से भारत और श्रीलंका के बीच बढ़ती हवाई संपर्क व्यवस्था, पर्यटन समझौते, ई-वीज़ा सुविधाएँ, क्रूज़ पर्यटन तथा संयुक्त पर्यटन प्रचार कार्यक्रम इस क्षेत्र में सहयोग को निरंतर मजबूत कर रहे हैं। हाल के वर्षों में दोनों देशों ने सतत पर्यटन, विरासत संरक्षण, समुद्री पर्यटन, बौद्ध पर्यटन सर्किट तथा रामायण पर्यटन सर्किट के विकास पर विशेष ध्यान दिया है। डिजिटल पर्यटन, ऑनलाइन बुकिंग, स्मार्ट पर्यटन सेवाएँ और पर्यटन अवसंरचना में निवेश ने यात्रियों के लिए यात्रा को अधिक सरल और सुविधाजनक बनाया है। भविष्य में यदि दोनों देश संयुक्त पर्यटन पैकेज, समुद्री संपर्क, पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन तथा सांस्कृतिक विरासत संरक्षण पर और अधिक सहयोग करें, तो दक्षिण एशिया में पर्यटन विकास का एक आदर्श मॉडल स्थापित किया जा सकता है। भारतीय पर्यटक इस विकास का एक अहम हिस्सा हैं और वे चुपचाप श्रीलंका के पर्यटन परिदृश्य को नया रूप दे रहे हैं। राष्ट्रीय एयरलाइन को सहारा देने से लेकर हवाई संपर्क को नई परिभाषा देने तक, यह बाज़ार की आर्थिक परिपूर्ण करने में अहम भूमिका निभा रहे हैं। उन्होंने देश को हनीमून के लिए एक प्रमुख पर्यटन स्थल बना दिया है और इस क्षेत्र में नए रुझान स्थापित कर रहे हैं। यह पहल भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन सहयोग को नए आयाम देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

निष्कर्ष- इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन संबंध केवल दो देशों के बीच होने वाली यात्राओं तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह उनके साझा इतिहास, संस्कृति, धर्म और मानवीय संबंधों का सशक्त प्रतिबिंब है। दोनों देशों के बीच सदियों से चले आ रहे सांस्कृतिक और धार्मिक संपर्क ने पर्यटन को एक मजबूत आधार प्रदान किया है। बौद्ध धर्म का प्रसार, रामायण से जुड़े ऐतिहासिक स्थल, समुद्री संपर्क तथा सांस्कृतिक समानताएँ आज भी दोनों देशों के पर्यटन संबंधों को निरंतर सुदृढ़ कर रही हैं। भारत और श्रीलंका के पर्यटन संबंधों में धार्मिक पर्यटन, सांस्कृतिक पर्यटन,

प्राकृतिक एवं समुद्री पर्यटन तथा विरासत पर्यटन की महत्वपूर्ण भूमिका है। इन सभी माध्यमों से दोनों देशों के लोगों को एक-दूसरे की सभ्यता, परंपराओं, जीवन-शैली और सांस्कृतिक मूल्यों को निकट से समझने का अवसर मिलता है। इससे न केवल पर्यटन को बढ़ावा मिलता है, बल्कि दोनों देशों के बीच आपसी विश्वास, मैत्री और सहयोग भी मजबूत होता है। इसके माध्यम से रोजगार के नए अवसर उत्पन्न होते हैं, स्थानीय उद्योगों और हस्तशिल्प को प्रोत्साहन मिलता है तथा पर्यटन से जुड़े अनेक क्षेत्रों का विकास होता है। साथ ही, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण के प्रति लोगों में जागरूकता भी बढ़ती है। मेरे विचार से भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन सहयोग की संभावनाएँ भविष्य में और अधिक व्यापक हैं। यदि दोनों देश पर्यटन अवसंरचना को सुदृढ़ बनाने, विरासत स्थलों के संरक्षण, पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन को बढ़ावा देने तथा संयुक्त पर्यटन योजनाओं पर मिलकर कार्य करें, तो इससे दोनों देशों की अर्थव्यवस्था के साथ-साथ सांस्कृतिक और मानवीय संबंध भी अधिक मजबूत होंगे।

संदर्भ ग्रंथ

1. बाशम, ए. एल. द वंडर दैट वाज़ इंडिया, पिकाडोर इंडिया, 2004
2. डी सिल्वा, के. एम. ए हिस्ट्री ऑफ़ श्रीलंका, पेंगुइन बुक्स, 2005
3. की, जॉन, इंडिया, ए हिस्ट्री, ग्रोव प्रेस, 2010
4. भाटिया, ए. के. टूरिज्म डेवलपमेंट, प्रिसिपल एंड प्रैक्टिसेज़, स्टर्लिंग पब्लिशर्स, 2011
5. चंद, मोहित/मोहींदर, ट्रेवल एजेंसी मैनेजमेंट, एन इंट्रोडक्टरी टेक्स्ट, अनमोल पब्लिकेशन्स, 2009
6. कूपर, क्रिस, एवं अन्य, टूरिज्मरू प्रिसिपल एंड प्रैक्टिस, 7वाँ संस्करण, पियर्सन, 2022
7. हॉल, सी. माइकल, टूरिज्म, रीथिंकिंग द सोशल साइंस ऑफ मोबिलिटी, पियर्सन एजुकेशन, 2005
8. होलोवे, जे. क्रिस्टोफ़र, एवं क्लेयर हम्फ्रीज़, द बिज़नेस ऑफ टूरिज्म, 11वाँ संस्करण, पियर्सन, 2022
9. भारत सरकार, पर्यटन मंत्रालय, इंडिया टूरिज्म स्टैटिस्टिक्स 2024, भारत सरकार, 2025
10. श्रीलंका पर्यटन विकास प्राधिकरण, वार्षिक सांख्यिकीय प्रतिवेदन 2024, एसएलटीडीए, 2025
11. संयुक्त राष्ट्र विश्व पर्यटन संगठन (यूएन टूरिज्म), टूरिज्म हाइलाइट्स, यूएन टूरिज्म, 2024
12. वर्ल्ड ट्रेवल एंड टूरिज्म काउंसिल, श्रीलंका 2024, आर्थिक प्रभाव रिपोर्ट, डब्ल्यूटीटीसी, 2024
13. भारत सरकार, विदेश मंत्रालय, भारत-श्रीलंका संबंध, भारत सरकार
14. नवनीता चट्टा बेहरा, भारत-श्रीलंका संबंध, मुद्दे और परिप्रेक्ष्य, रूटलेज इंडिया, 2011
15. सिंह, एस. भारत में पर्यटन, नीति, नियोजन और विकास, कनिष्का पब्लिशर्स, 2008

शोधार्थी, हिन्दी विभाग
कलिंग इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल
साइंसेज मानित विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर, ओडिशा
मो- 8328964885



सीता और शबरी की संवेदनशील भूमिकाएं

कु. ममता

प्रस्तावना- भारतीय वाङ्मय और जनमानस में 'रामायण' केवल एक धर्म ग्रन्थ या महाकाव्य नहीं है, बल्कि यह मानवीय चेतना, संवेदना, नीति और अन्तः सम्बन्धों का एक विराट दर्शन है। रामकथा के केन्द्र में राम का चरित्र नायकत्व के रूप में प्रतिष्ठित है, किन्तु इस सम्पूर्ण आख्यान को संवेदनात्मक गहराई, आत्मिक विस्तार और नैतिक उत्कर्ष प्रदान करने में नारी चरित्रों की भूमिका अतुलनीय रही है। इस सन्दर्भ में ये वैदेही (सीता) और शबरी दो ऐसे केन्द्र बिन्दु हैं, जो दो भिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक ध्रुवों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जहाँ सीता राजप्रसाद से निकली 'उत्कृष्ट अभिजात संवेदनशीलता' और त्याग की प्रतिमूर्ति है, वहीं शबरी अरण्य (वन) संस्कृति से जुड़ी 'निश्छल लोक-भक्ति' और सर्वसमावेशी आतिथ्य की प्रतीक हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में सीता और शबरी के चरित्रों में विद्यमान संवेदनशीलता उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक भूमिका तथा रामकथा के मानवीय पक्ष को आकार देने में उनके योगदान का गहन विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

आत्म-सम्मान की प्रतिमूर्ति- सीता चरित्र केवल एक पतिव्रता स्त्री तक सीमित नहीं है, बल्कि वह मानवीय गरिमा, प्राकृतिक, संवेदना और अन्याय के विरुद्ध मूक प्रतिरोध का पर्याय है।

(क) अरण्य-संस्कृति और प्रकृति से तादात्म्य - सीता राजमहल के ऐश्वर्य को त्याग कर जब वन गमन करती है, तो वे अपनी संवेदनशीलता से प्रकृति के साथ एक एकात्म सम्बन्ध स्थापित करती हैं। वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस दोनों में सीता का वन-जीवों नारियों और वृक्षों के प्रति अगाध प्रेम परिलक्षित होता है। उनकी यह संवेदनशीलता केवल सौंदर्यबोध तक सीमित न होकर प्राणि मात्र के प्रति करुणा से पोषित है।

(ख) रावण-सभा और अशोक वाटिका : प्रतिरोध की संवेदनात्मक शक्ति -अशोक वाटिका में बंदी होने पर भी सीता का चरित्र भय या अधीनता स्वीकार नहीं करता। रावण के वैभव और शक्ति के अहंकार के समक्ष सीता का एक तृण (तिनके) को ओट में रखकर संवाद करना उनके आंतरिक बल और आत्म-सम्मान को दर्शाता है। यहाँ उनकी संवेदनशीलता दुर्बलता नहीं, बल्कि एक अजेय नैतिक शक्ति के रूप में प्रकट होती है।

(ग) सामाजिक मर्यादा और त्याग का चरम -अग्नि परीक्षा और तत्पश्चात् राम द्वारा लोकापवाद के कारण किए गए सीता-त्याग के प्रसंगों में सीता की संवेदनशीलता अपने उत्कर्ष पर पहुँचती है। वाल्मीकि रामायण में, वन में छोड़े जाने पर भी वे राम के प्रति विद्वेष नहीं रखती, बल्कि अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में लव-कुश का संवर्धन करती हैं। अंतरू, पृथ्वी-प्रवेश के माध्यम से वे अपने सतीत्व और आत्म-सम्मान का जो आख्यान रचती है, वह सत्ता और समाज के दोहरे मानदंडों के प्रति एक मौन किन्तु तीव्र प्रतिवाद है।

3. शबरी : लोक-चेतना, जाति-निरपेक्षता और निश्छल भक्ति :

शबरी (श्रमणा) का प्रसंग रामायण का वह संवेदनात्मक क्षण है, जहाँ भक्ति और प्रेम के समक्ष सामाजिक रूढ़ियाँ, जातिगत पदानुक्रम और बाह्य आडंबर धराशायी हो जाते हैं।

(क) **सामाजिक संरचना और शबरी का स्थान-** प्राचीन वैदिक-पौराणिक समाज में वनवासी या जनजाति वर्ग को प्रायः हाशिये पर रखा गया। शबरी का चरित्र उस हाशिये के समाज की संवेदनात्मक विजय का प्रतीक है। मातंग ऋषि के आश्रम में निवास करने वाली शबरी का प्रतीक यह सिद्ध करता है कि ज्ञान, योग और भक्ति पर केवल उच्च वर्गों का एकाधिकार नहीं है।

(ख) **‘झूठे बेर’ और आतिथ्य की संवेदनात्मक पराकाष्ठा-** शबरी और राम का मिलन मानवीय संवेदना का वह अनुपम उदाहरण है, जहाँ शास्त्रगत नियमों को पीछे छोड़ दिया जाता है। राम को अर्पण करने से पूर्व बेरों का स्वाद चखना-ताकि कोई खट्टा बेर प्रभु को न मिले-शबरी के वात्सल्य और निष्काम प्रेम का परिचायक है।

नवधा भक्ति का सन्देश- रामचरितमानस में राम शबरी को ‘नवधा भक्ति’ का उपदेश देते हैं और स्पष्ट कहते हैं—

“जाति-पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुण चतुराई।।

भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।।”

यह प्रसंग सिद्ध करता है कि संवेदनशीलता जब भक्ति में परिणत होती है, तो वह समस्रता का महान सामाजिक संदेश बन जाती है।

4. सीता और शबरी : संवेदनात्मक तुलनात्मक अध्ययन

रामायण में सीता और शबरी दोनों ही नारी शक्ति, भक्ति, धैर्य और समर्पण का अनूठा उदाहरण है। यद्यपि दोनों की पृष्ठभूमि, सामाजिक स्थिति और जीवन-परिस्थितियाँ अत्यन्त भिन्न थीं, फिर भी संवेदनात्मक (भावनात्मक) धरातल पर दोनों का श्रीराम के प्रति प्रेम और निष्ठा अद्वितीय है।

(i) भक्ति एवं समर्पण का भावन-

माता सीता का समर्पण सहचारिणी (अर्धांगिनी) और पति-भक्ति के भाव से परिपूर्ण है। वे राम के साथ केवल सुख की भागीदार नहीं बनी, बल्कि उनके धर्म, वनवास और संघर्षों की भी बराबर की संगिनी बनी। उनका प्रेम अधिकार और एकात्मकता का संवेदनात्मक रूप है।

माता शबरी : शबरी का समर्पण दास्य और वात्सल्य भाव का अनुपम मिश्रण है। अपने गुरु (मातंग ऋषि) के वचनों पर पूर्ण विश्वास रखते हुए, उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन को प्रभु राम के आगमन की तैयारी में ही साधना का लिया।

(ii) प्रतीक्षा और धैर्य की पराकाष्ठा :

आयाम	माता सीता	माता शबरी
प्रतीक्षा का कारण	अशोक वाटिका में रावण के बन्धन से	गुरु वचन पर निष्ठा और जीवन में एक बार प्रभु
संवेदनात्मक स्थिति	मुक्ति और श्रीराम द्वारा धर्म स्थापना	श्रीराम के दर्शन की अभिलाषा
	वियोग और पीड़ा से भरा धर्म रावण के	साधना और आशा से भरा धैर्य
	त्रास के बीच भी अपने सतीत्व और राम	वृद्धावस्था तक प्रतिदिन मार्ग बुहारना और जाते
	पर अटूट विश्वास की परीक्षा	मीठे फल चुनना।

(iii) दुःख, संघर्ष और सामाजिक स्थिति : -

सीता का संवेदनात्मक संघर्ष : जनकपुर की राज कुमारी और अयोध्या की कुल वधू होकर भी सीता जी जीवन

त्याग, वनवास, अपरहण, लांछन और अग्नि परीक्षा जैसे अति-गंभीर दुःखों से घिरा रहा। उनका संवेदनात्मक जीवन करुणा, सहनशीलता और स्वाभिमान का प्रतीक है।

शबरी का संवेदनात्मक संघर्ष : शबरी सामाजिक रूप से उपेक्षित और शील समाज से थीं। उन्होंने समाज के कर्मकांडों को त्यागकर एकांत में प्रभू भक्ति चुनी। उनका जीवन बाहरी आडंबरों से दूर अत्यन्त सरल, निश्छल और भावुक भक्ति का प्रतीक है।

(iv) श्रीराम के साथ भावनात्मक सम्बन्ध –

“कह रघुपति सुन बामिनी बता।

मानऊँ एक भगति कर नाता।”

(श्रीराम शबरी से कहते हैं कि केवल एक भक्ति का ही सम्बन्ध मानता हूँ।)

सीता-राम सम्बन्ध-यह सम्बन्ध आत्मा और परमात्मा (पति और पत्नी) का सम्बन्ध है, जहाँ परस्पर सम्मान, वियोग का दर्द और अगाध प्रेम है। राम-सीता के बिना अधूरे हैं और सीता राम के बिना।

शबरी-राम सम्बन्ध- यह भक्ति और भगवान का सर्वोत्कृष्ट संवेदात्मक सम्बन्ध है। जब श्रीराम शबरी के आश्रम आते हैं, तो जाति, कुल और पद के सारे भेद मिट जाते हैं। शबरी का जूठे बेर खिलाना और राम का उन्हें सहर्ष स्वीकारना भावुकता और प्रेम की उच्चतम पराकाष्ठा है।

5. समकालीन संदर्भ में सीता और शबरी की प्रासंगिकता

आज के आधुनिक, तकनीकी और विखंडित समाज में सीता और शबरी की संवेदनात्मक भूमिकाएँ अत्यधिक प्रासंगिक हैं –

1. लैंगिक न्याय और स्त्री-विमर्श : सीता का चरित्र यह सिखाता है कि सहनशीलता और मर्यादा का अर्थ अधीनता नहीं है। अन्याय के विरुद्ध आत्म-सम्मान के साथ खड़े होना सीता के चरित्र का वास्तविक सार है।

2. सामाजिक समरसता और समावेशिता : शबरी का प्रसंग आज के खंडित समाज को जाति, वर्ग और लिंग से परे जाकर मनुष्यता और करुणा को अपनाने की प्रेरणा देता है।

3. पर्यावरण और प्रकृति-चेतना : दोनों चरित्र अरण्य संस्कृति से गहराई से जुड़े हैं, जो वर्तमान वैश्विक पर्यावरण संकट के दौर में प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व का संदेश देते हैं।

निष्कर्ष - निष्कर्षतः सीता और शबरी केवट रामकथा के दो पात्र मात्र नहीं हैं, बल्कि वे भारतीय संस्कृति की संवेदनात्मक आत्मा हैं। सीता जहाँ दुःख, वियोग और सामाजिक आघातों के बीच भी अपनी नैतिक गरिमा और करुणा को जीवित रखती हैं, वहीं शबरी सादगी, समर्पण और निष्कलंक आतिथ्य से ईश्वर को भी अभिभूत कर देती है। यदि रामकथा को एक विशाल वृक्ष माना जाए, तो राम उसकी शक्ति और न्याय के तने हैं, जबकि सीता और शबरी उस वृक्ष की वे जड़ें और छाया हैं जो करुणा, संवेदनशीलता और सर्व-समावेशी मानवीय चेतना का जल प्रदान करती हैं। इन दोनों चरित्रों का अध्ययन हमें सिखाता है कि प्रेम, त्याग और संवेदना ही वे मूल्य हैं जो किसी भी सभ्यता को अमर बनाते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. तिवारी, पं. रामचन्द्र (2012) रामचरितमानस में लोक चेतना और नारी पात्र, नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
2. द्विवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद (2018) कालिदास की साहित्य-योजना एवं रामकथा का विकास, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
3. पांडेय, डॉ. श्यामनारायण (2015) वाल्मीकि रामायण का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन।

4. बुलेभ, फादर कामिल (2010), रामकथा : उत्पत्ति और विकास, प्रयागराज, हिन्दी परिषद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय।
5. मिश्र, विद्यानिवास (2008), भारतीय संस्कृति की जीवन दृष्टि, नई दिल्ली, प्रभात प्रकाशन।
6. शर्मा, डॉ. रामविलास, (2005), भारतीय संस्कृति और हिन्दी साहित्य में लोक-चेतना, नई दिल्ली, किताबघर प्रकाशन।
7. सिंह, नामवर (2014), दूसरी परंपरा की खोज, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
8. अग्रवाल, डॉ. वासुदेश शरण (2002), भारत की मौलिक एकता और रामयाण, वारासी, पृथ्वी प्रकाशन।

शोधार्थी

कु. ममता

प्रवक्ता श्रीमती सुमित्रा देवी इण्टर कॉलेज,
नगला छाहरी, सैया, आगरा



वैश्विक परिप्रेक्ष्य में डॉ. अमिता दुबे का कथा-साहित्य : एक आलोचनात्मक अध्ययन

रविन्द्र चौधरी, प्रो.(डॉ.) निधि शर्मा

शोध सारांश- साहित्य, समाज और संस्कृति यद्यपि भिन्न अर्थ और प्रकृति वाले शब्द भले ही हों, तथापि इनका मूल एक-दूसरे पर अन्योन्याश्रित है, जहाँ एक ओर समाज संस्कृतियों का मूर्त रूप होता है, वहीं साहित्य समाज का। इस दृष्टि से साहित्य और समाज एक दूसरे के दर्पण प्रतिबिंब कहे जा सकते हैं। यथार्थ के धरातल पर साहित्य में जो कुछ भी दृष्टिगत होता है, वह सब समाज का ही शब्दरूप है; जिसमें तात्कालिक परिस्थितियों, उनके प्रभाव से उत्पन्न वैचारिक तंत्र, विचारों में समाहित द्वंद और फिर उस द्वंद से उत्पन्न भविष्य की बहुआयामी सम्भावनाएँ आदि सबका प्रतिबिंब मौलिक रूप से उस समय के साहित्य में ही दृष्टिगत होता है। इस परिप्रेक्ष्य में डॉ. अमिता दुबे का कथा-साहित्य यथार्थ के धरातल पर इतना मौलिक है कि वह समकालीन समाज का वास्तविक प्रतिबिंब बनकर पाठक के हृदय पटल पर एक चिरस्थायी चित्र खींच देता है। डॉ. अमिता दुबे की कहानियाँ मानवीय संवेदना, समकालीन यथार्थ बोध, नैतिकता का वास्तविक मूल्यांकन, सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक संघटकों के पैमाने पर मानवीय अवचेतना का कलात्मक चित्र प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों में समय की संवेदना, विज्ञान एवं प्रादौगिकी का समन्वय, कल्पना का सामंजस्य तथा यथार्थ का वास्तविक चिंतन साकार हुआ है। वर्तमान हिंदी साहित्य जगत में महिला लेखिकाओं में कथा-साहित्य की दृष्टि से डॉ. अमिता दुबे का नाम उन महनीय लेखिकाओं की शृंखला में परिगणित किया जाता है, जिन्होंने भारतीय संस्कृति, साहित्य तथा सांस्कृतिक अस्मिता को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस दृष्टि से डॉ. अमिता दुबे का कथा-साहित्य वर्तमान युग के वास्तविक यथार्थ का मौलिक एवं संवेदनशील स्वरूप सिद्ध हुआ है।

प्रस्तावना- डॉ. अमिता दुबे ने कथा- साहित्य के क्षेत्र में एक ऐसा चिरस्थायी स्थान सुनिश्चित किया है जो उन्हें हिंदी साहित्य के क्षेत्र में तो स्थापित करता ही है साथ ही भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा उसके बहुआयामी संस्कार को यथार्थ के धरातल पर कलात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के महत्वपूर्ण आभामंडल की समन्वित संरचना को मूर्त रूप प्रदान करने में भी सहयोगी सिद्ध हुआ है। उनकी कहानियों में जहाँ एक ओर नारी अस्मिता के संरक्षण के लिए विद्रोही स्वर मुखरित हुआ है वहीं दूसरी ओर पुरुष अस्मिता को भी उतनी ही संवेदनशीलता के साथ महत्व दिया गया है। जहाँ एक ओर उनकी कहानियों में वर्तमान समय के बाजारवाद के दूरगामी भविष्य का चिंतन है वहीं दूसरी ओर मानव सभ्यता के लाखों वर्षों के इतिहास और संवेदना का पारंपरिक स्वर भी। उनकी कहानियों में भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों का समवेत समन्वय उनके कथा-साहित्य को विशिष्ट बनाता है। इस दृष्टि से डॉ. अमिता दुबे की कहानियों में जहाँ एक ओर समकालीन यथार्थबोध है वहीं दूसरी ओर पारंपरिक आदर्श भी।

बीज शब्द : यथार्थ बोध, संवेदना, आभामंडल, बाजारवाद।

मूल शोध-पत्र - वर्तमान हिंदी साहित्य में एक ओर जहाँ गद्य तथा पद्य विविध विधाओं में भाव तथाकला दोनों ही पक्षों की दृष्टि से एक से एक श्रेष्ठ कृतियों तथा रचनाओं का सृजन हो रहा है वहीं दूसरी ओर प्रत्येक विधा में भी अनेक

महनीय विषयों, बिंदुओं तथा विमर्शों आदि को ध्यान में रखकर उत्कृष्ट कोटि की रचनाएं रची जा रही हैं। इस प्रकार हिंदी साहित्य के विस्तृत आकाश में अनेक विधाओं, रचनाकारों, विमर्शों, आदर्शों, मूल्यों, संभावनाओं, संवेदनाओं आदि का अपना स्थान है तथापि कुछ रचनाकार अपनी सृजनात्मक क्षमता के बल पर ऐसी उत्कृष्ट स्वीकृति को प्राप्त कर चुके हैं जिन्हें उनकी अविस्मरणीय योग्यताओं, क्षमताओं, रचनाधर्मिता तथा सामाजिक सरोकारों से उनकी संबद्धता के प्रति समर्पण के लिए कभी भी विस्मृत नहीं किया जा सकता। इस दृष्टि से कथा-साहित्य के क्षेत्र में दृष्टिपात करें तो महिला साहित्यकारों का विशिष्ट स्थान रहा है। महिला साहित्यकारों में प्रगतिवादी चेतना के प्रादुर्भाव से लेकर वर्तमान समय के बहुआयामी कथा संसार में अनेक महिला लेखिकाओं के नाम उल्लेखनीय रहे हैं। अमृता प्रीतम, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, शिवानी, मन्नू भंडारी जैसी कालजयी महिला कथाकारों से लेकर अनामिका, गीतांजलि, मैत्रेयी पुष्पा, ममता कालिया, मृदुला गर्ग आदि अनेक समकालीन महिला कथाकारों ने हिंदी कथा-साहित्य को अपनी सृजनात्मक सोच तथा बहुआयामी वैचारिकी के माध्यम से अत्यंत सशक्त तथा संवेदनशील बनाया है।

इन महिला रचनाकारों ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से समाज, राष्ट्र, मानव प्रकृति तथा सैद्धांतिक वैचारिकी आदि को नवीन आयाम प्रदान किए हैं। इस दृष्टि से नारी स्वातंत्र्य चेतना, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, मानव-मूल्यों के अस्तित्व का संरक्षण, जातीय संघर्ष, लिंगभेद, तृतीय लिंग की संवेदना, गरीब, दलित, आदिवासी तथा पिछड़े समाज के उत्थान हेतु आवाज उठाने जैसे महनीय विषय महिला साहित्यकारों के कथा-साहित्य के केंद्र में रहे हैं। इस दृष्टि से इसी शृंखला का एक महत्वपूर्ण नाम डॉ. अमिता दुबे भी है जिन्होंने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से इन सभी विषयों को यथार्थ के धरातल पर नियोजित करते हुए एक महनीय कथा-जगत का सृजन किया है वह असीम संभावनाओं की लेखिका हैं, अर्थात् वे प्रत्येक परिस्थिति में हल की संभावना के प्रति आस्वस्थ बनी रहती हैं ‘संभावना के जुगनू’ नामक कहानी-संग्रह में डॉ. अमिता दुबे लिखती हैं— “जीवन है तो संभावना है, संभावना है तो जीवन है।” निराशा के गर्त में डूबने वाले व्यक्ति को भी कभी-कभी तिनके का सहारा मिल जाता है और यह ‘तिनके का सहारा’ जीवनाधार बन जाता है जीवन में संभावनाएं सदा बनी रहें यह प्रयास हमें निरंतर करते रहना चाहिए।”¹ अर्थात् लेखिका का स्पष्ट मत है कि किसी भी परिस्थिति में व्यक्ति को यह विचार नहीं करना चाहिए कि किसी विषय विशेष की सभी संभावनाएं समाप्त हो चुकी हैं क्योंकि जब व्यक्ति के मन में संभावनाओं के समापन का दृढ़ विश्वास स्थापित हो जाता है तो वह एक गहन अंधकार में प्रवेश कर जाता है। जिसे अवसाद की स्थिति कहा गया है। इस स्थिति में पहुंचकर व्यक्ति को न तो जीवन जीने का कोई आधार दिखाई देता है और न ही जिंदा रहने की कोई ठोस वजह परिणामस्वरूप ऐसी स्थिति को प्राप्त व्यक्ति बहुधा या तो अपना जीवन समाप्त कर देने का मूर्खतापूर्ण निर्णय ले लेता है अथवा किसी ऐसे अनिष्टकारी मार्ग पर बढ़ जाता है जो उसे जीवित होते हुए भी मृत प्रायरू बना देता है। अतः कभी भी व्यक्ति को ऐसा विचार नहीं करना चाहिए कि सभी संभावनाएं पूरी तरह से समाप्त हो चुकी हैं।

इस प्रकार लेखिका ने अपने वक्तव्य के माध्यम से वर्तमान समय में अवसाद में डूबती हुई युवा पीढ़ी को सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने का एक महत्वपूर्ण उपागम सुझाया है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है की डॉ. अमिता दुबे असीम संभावनाओं तथा सकारात्मक चिंतन की यथार्थ अभिव्यक्ति को संपोषित करने वाली कथाकार हैं। यदि डॉ. अमिता दुबे के कहानी संसार के उदय की चर्चा करें तो यह ज्ञात होता है कि उनकी कहानियों का मूल आधार तथा लेखन की प्रेरणा उनके बचपन में उनके द्वारा सुनी गई दादी तथा नानी की कहानियों की पृष्ठभूमि पर आधारित है। ‘सुखमनी’ कहानी- संग्रह में वे लिखती हैं— “बचपन के वे सुनहरे दिन जहां अम्मा(नानी) श्रीमती सुंदरी देवी एवं मां श्रीमती पुष्पलता कहानियां सुनाती थीं - नानी की, नेमिन धरमिनद की कहानी, ‘नकदी महाराजिन’ की कहानी का भाव ‘जैसे उनके दिन बहुरे वैसे सबके बहुरे’ का था यह तो बाद में जाना ये कहानियां परोक्ष रूप में कितने संस्कार स्वरूप ही दे जाती हैं। मां के द्वारा सुनाई गई उदात्त चरित्रों के जीवन से जुड़ी कहानियां निश्चय ही प्रेरणादायक थी।”² अर्थात् लेखिका के कथन से स्पष्ट होता है कि लेखिका के लेखन में उनके बचपन में सुनी गई कहानियों का चित्र आज की वर्तमान परिस्थितियों में भी उसी प्रकार दृष्टिगत होता है जैसा कि कभी उनके स्वयं के मस्तिष्क पटल पर।

डॉ. अमिता दुबे की कहानियों के विषय मानवीय संवेदना का यथार्थ परिचय कराते हुए जीवन के धरातल को सदैव पकड़े रहते हैं। उनकी कहानियों में भारतीय परंपराओं, मूल्य का स्थानांतरण, मानवीय प्रवृत्तियों का उद्घाटन, सांस्कृतिक चेतना तत्व का विचारोपण बाल्यकाल की गतिविधियों के केंद्र में होता दिखाई देता है। चूंकि बाल्यकाल में सुनाई गई कहानियों का उद्देश्य नैतिक आचरण का विकास करना, सामाजिक परंपराओं से परिचय करना, संवेगात्मक रूप से मजबूत बनाना और श्रेष्ठ चरित्र का निर्माण करना रहा है। यद्यपि साहित्यिक लेखन के संदर्भ में अनेकानेक विद्वानों ने इस कार्य के संबंध में अपने बहुमूल्य विचार प्रस्तुत किए हैं तथापि समन्वित रूप में प्रत्येक विद्वान का यही मत है कि साहित्य लेखन हृदय की स्वानुभूत कल्पनात्मक अभिव्यक्ति होती है। इस परिप्रेक्ष्य में दिल्ली नगर निगम में प्रशासनिक अधिकारी के रूप में सेवारत रहीं श्रीमती सरोज शर्मा जी अपने कविता संग्रह - 'मैं अभिव्यंजना' में लिखती हैं—“रचना किसी भी लेखक के मन का प्रतिरूप होती है और जब नैसर्गिक संवेदनशीलता के सौंदर्य, मनोवैज्ञानिक धरातल पर आत्मीय मनोभाव इस तरह से प्रस्तुत हो कि आपके साथ परस्पर संवाद करने की स्थिति उत्पन्न हो जाए तो उससे रचना की पूर्णता होती है।”³ अर्थात् लेखिका का मानना है कि लेखक की रचनाधर्मिता स्वयं के मनोयोग और संवेदना का मूर्त रूप होती है। जहां लेखक स्वयं अनुभूत विषयों की धारा के सहज प्रवाह में बहता जाता है, और आत्मीय संवेदन के चिरस्थायी संवाद को प्रायः पाठक के अनंत प्रज्ञाकोश में संजोकर उससे चर्चा करना चाहता है। इसी संदर्भ में डॉ. रमेश तिवारी केंद्रीय हिंदी संस्थान के अंतरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण विभाग की त्रैमासिक पत्रिका 'प्रवासी जगत' में प्रकाशित अपने आलेख-“जीवन की क्षणभंगुरता एवं संघर्षों का दस्तावेज है उपन्यास 'गरीबा'।” में लिखते हैं “लेखक जब-जब विचलन भरे रास्ते पर जाता है, वह स्वयं अपने आपको सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने और उस पर अग्रसर होने के प्रेरक माध्यमों की तलाश करता है।”⁴ अर्थात् लेखक का मत है कि जीवन की आपाधापी में जब-जब मानवीय चेतना में सन्मार्ग की ओर अग्रसर मानवी को देखा जाता है तो उसके पूर्व के जीवन की उथल-पुथल में इस मार्ग का बीज अंकुरित होता दृष्टिगत होता है। हम प्रायः पाते हैं कि जब तक व्यक्ति को वक्त की ठोकरें नहीं मांझती तब तक उसका स्वयं का सौंदर्य और कनकजणित आभामंडल निखर कर नहीं आता।

अतः कहा जा सकता है कि विचलनशीलता के सार तत्व के रूप में सामान्य मनुष्य युग चेतना के प्रतिबिंब के रूप में परिणित होता है शर्त इतनी है कि उसका मार्ग निर्माण आधारित हो, विध्वंस आधारित नहीं। इसी संदर्भ में डॉ. रश्मि जोशी जी लिखती हैं - “हर भाषा, हर राष्ट्र तथा हर प्रांत का साहित्य उसके परिवेश, उसके रीति-रिवाजों, संस्कृति एवं भाषा की अंतर्निहित विशिष्टता को स्वाभाविक एवं मनोहर रूप से अभिव्यक्त करता है। साहित्य की कोई भी विधा हो- काव्य, उपन्यास, नाटक, कहानी आदि ये सब साहित्यकार की अनुभूति तथा कल्पना की कृति हैं, जिनमें उसकी सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।”⁵ अर्थात् लेखिका ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि किसी भी राष्ट्र को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि पहले उस राष्ट्र को पढ़ा जाए, तब कहीं जाकर हम उसके विभिन्न आंगिक पक्षों को समझ सकने का कार्य संपन्न कर पाएंगे। चूंकि इसी बात को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपनी अमर कृति 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि- 'साहित्य जनता की चित्रवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है।' इस दृष्टि से डॉ. अमिता दुबे की कहानियों में जो मौलिक यथार्थ का धरातल उभर कर सामने आता है वह उन्हें हिंदी साहित्य जगत के महनीय कथाकारों की शृंखला में अग्रिम पंक्ति में स्थान दिलाता है। प्रो.(डॉ.)अजय कुमार पटनायक साहित्य के सृजन की आधार भूमि को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि- “किसी भी देश के धर्म और संस्कृति को लेकर ही उस देश के साहित्य का सृजन होता है।”⁶ अर्थात् लेखक का मत है कि साहित्य के सृजन को किसी भी राष्ट्र की विभिन्न सांस्कृतिक धाराएं, जीवन दर्शन, आध्यात्मिक दृष्टिकोण के साथ-साथ विभिन्न भाषायी, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियां समन्वित रूप से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभावित करती हैं तब कहीं जाकर साहित्यकार वैयक्तिक विभिन्नताओं के आधार पर पृथक-पृथक रूपों में साहित्य की कसौटी पर स्वयं को कसते हुए साहित्य का सृजन करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यदि डॉ. अमिता दुबे की कहानियों पर दृष्टिपात किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि वैश्विक परिप्रेक्ष्य में उनका कथा-साहित्य यथार्थ के धरातल पर श्रेष्ठ साहित्यिक प्रतिमान स्थापित करने वाला है। जब एक

व्यक्ति परिस्थितियों के वशीभूत होकर अकेला पड़ जाता है तो वह अनिश्चितता के घोर अंधकार में डूब जाता है परंतु जब वह अपनी परिस्थितियों को स्वीकार कर उस कठिन दौर से बाहर निकलने के लिए प्रयत्न करता है तो निश्चित ही उसे एक नया पथ मिल ही जाता है। 'संभावना के जुगनू' नामक कहानी-संग्रह में संकलित कहानी 'मी टू' वर्तमान यथार्थ को उकेरती हुई एक ऐसी कथा है जिसमें मानवीय संवेदना के हास से उत्पन्न परिस्थितियों के कारण अकेलेपन की शिकार हुई एक स्त्री सुलभा स्वयं को विकट परिस्थितियों में भी संभाले हुए हैं इस कहानी का एक अंश देखें- "कुशल ने दरवाजा भेड़ते हुए उसे हाथ पकड़कर अपने पास खींचने की कोशिश की- 'सुलभा! ऐसी बातें क्यों करती हो मैं तुम्हें कभी अकेला नहीं छोड़ूंगा, तुम्हारी जिंदगी में रंग भरने हैं मुझे, क्योंकि तुम मेरी जिंदगी हो।' कहते हुए कुशल ने उसे आलिंगनबद्ध करना चाहा। सुलभा को न जाने कहाँ से ताकत आ गयी उसने कुशल के बढ़ते हुए हाथ को मरोड़ दिया और बहुत सदे हुए शब्दों में कहा- 'मिस्टर कुशल! आपने मुझे समझ क्या रखा है, मैं आपके मरे हुए दोस्त की बीवी हूँ। कोई रास्ते का पत्थर नहीं जिसे कोई भी उठा ले और मन चाहे ढंग से खेले। मेरी और कुत्सित भावना से देखने-सोचने से पहले आपको असित नहीं याद आये जिनसे गहरी दोस्ती का दंभ भरते आप थकते नहीं। अच्छा होगा आप यहां से अभी चले जायें और फिर कभी इधर दिखाई न दें। अन्यथा मुझे आपकी शिकायत करनी पड़ेगी।'"⁷ उपर्युक्त पंक्तियां लेखिका के यथार्थ परक लेखन कौशल की विलक्षण प्रतिभा और सामाजिक यथार्थ की कुत्सित मानवीय प्रवृत्ति, चरित्रहीनता, हठधर्मिता, मौकापरस्ती, निम्नस्तरीय सोच एवं चरित्र की पवित्रता, स्वाभिमान की व्यक्तित्व, स्त्री चेतना के उच्च स्तरीय मानक को समाज के सम्मुख रखने का यथार्थयुक्त प्रयास है। चूंकि समाज में प्रायः ऐसे धिनौने उदाहरण समय-समय पर दृष्टिगत होते ही हैं विभिन्न संचार माध्यमों तथा समाज में ऐसे कृत्यों की प्रत्यक्ष न जाने कितनी स्मृतियां प्रत्येक मनुष्य के जीवन की स्मृति संगिनी बनकर चलती ही हैं।

उपर्युक्त उद्धरण में जहां कुत्सित भावना से ग्रस्त कुशल निम्नस्तरीय आचरण करते हुए जहां एक ओर दरवाजे को भेड़ता हुआ जबरदस्ती सुलभा को आलिंगनबद्ध करने का असफल प्रयास करता है वहीं दूसरी ओर सुलभा का प्रतिकार श्रेष्ठ भारतीय नारी के गुणों को सामने रखता है। उसकी भाषा में जहां एक ओर सदा हुआ व्यवहार है वहीं दूसरी ओर गहरा प्रतिकार और संबंधों की परिचयात्मक दृष्टि तथा चारित्रिक चुनौती भी। डॉ. अमिता दुबे का यथार्थपरक चिंतन उनके कथा-साहित्य की बेजोड़ मानवीय संवेदना के साथ जब जोड़ता है तो निःसंदेह ही हृदय को आह्लादित कर देता है। उनकी रचनाधर्मिता और लेखन व्यवहार उच्च श्रेणी की यथार्थ भूमि पर जीवंत संवेदनाओं का वट वृक्ष बनकर सामने आता है। उनके 'पाषाणी' नामक कहानी-संग्रह में संकलित कहानी 'विडंबना' एक ऐसी कहानी है जो निशीथ की मनस्व चेतना को झकझोर देती है। इस कहानी का एक अंश देखें- "ध्विनय सुबह-सुबह बदहवास सा आया उसका स्वर कांप रहा था- 'जानते हो, अणिमा ने आत्महत्या कर ली।' 'आत्महत्या' निशीथ जड़ हो गया। वह इतनी डरपोक लड़की तो नहीं थी। उसकी खनकदार हंसी उसके मस्तिष्क में कौंध गयी। हाय! तो उसने सच ही कहा था। विनय के साथ वह हॉस्टल आया था। उसका पार्थिव शरीर हॉस्टल के आंगन में सफेद चादर से ढका हुआ था। सुरक्षा के लिए दो चौकीदार मुस्तेदी से तैनात थे। निशीथ ने मुंह से कपड़ा हटाना चाहा तो उसे चेतावनी भरी आवाज सुनायी दी - 'आप इसे छू नहीं सकते। यह हॉस्टल की संपत्ति है।' निशीथ गुस्से से बोला जब तक जिंदा थी तब तक हॉस्टल की संपत्ति थी अब मरने के बाद हॉस्टल इसकी लाश का क्या करेगा।' चौकीदार ने उसे जबरन बाहर करते हुए प्रश्न दागा - 'आप उसके कौन हैं घर वाले या और कोई—'। आपको क्या लेना-देना इसकी लाश से।' निशीथ चिल्लाया 'मैं पुलिस में रिपोर्ट करूंगा' शौक से करिये थाना पास में ही है।' जवाब मिला था। वह जान गया था कि मामला सब तय हो गया है।

अणिमा के घर वाले सीधे श्मशान घाट पर पहुंच पाये थे उन्हें बताया गया था की अणिमा ने ज़हर खा लिया हमने डॉक्टर को दिखाया पर कोई फायदा नहीं हो सका। निशीथ ने अणिमा की मृत्यु के बारे में अपनी शंका प्रकट की। सीधे-साधे पिता का कहना था अब कोर्ट कचहरी करने से क्या फायदा। जाने वाली तो अब वापस आ नहीं सकती। बेकार झमेला करके क्या होगा भगवान उन्हें खुद समझेगा।' निशीथ हाथ मलता रह गया। वह आगे बढ़ता भी तो किस हैसियत से? आखिर कौन थी अणिमा उसकी।"⁸ उपर्युक्त उदाहरण में लेखिका ने मानवीय संवेदना के यथार्थ के उस पक्ष को सामने लाने का प्रयास किया

है जहां एक मध्यमवर्गीय परिवार की विवशता सब कुछ जानते हुए भी उसे मूक बना देती है और वही देखा भी जाता है। जहां एक और निशीथ अणिमा की हत्या या आत्महत्या की गुत्थी को सुलझाने का प्रयास करना चाहता है और इस घटना के पीछे के कारणों की तह तक जाना भी किंतु वहीं दूसरी ओर अणिमा के परिवार की उदासीनता उसे कुछ करने भी नहीं दे रही। चूंकि वह न तो उस परिवार का निकट संबंधी है और न ही अणिमा के साथ उसका कोई प्रत्यक्ष संबंध। कहानी का यह अंश गहरी मानवीय संवेदना पर चोट है तो वहीं अणिमा की आत्महत्या हॉस्टल की सामाजिक चेतना का धिनौना रूप।

इसी प्रकार डॉ. अमिता दुबे की कहानियों में पारिवारिक संवेदना तथा अपने पूर्वजों के प्रति लगाव जैसे भावुक विषयों को आधार बनाकर लिखी गई कहानियों के माध्यम से भारतीय समाज की सांस्कृतिक विरासत को उकेरने का सफल प्रयास किया गया है। कहानी-संग्रह 'पुनर्नवा' में संकलित कहानी 'अप्रत्याशित' का एक अंश देखें- "इस 'संज्ञा सदन' में मेरा भी हिस्सा है। यह मकान मेरे पापा ने बनवाया है और बड़े लाडप्यार से इसका नाम 'संज्ञा सदन' रखा था। इसको बेचने से पहले तुम लोगों को वह हिस्सा मेरे लिए छोड़ना पड़ेगा जिस हिस्से में मैं आराम से रहती हूँ।" संज्ञा ने मां और कामिनी की ओर बिना देखे हुए कहा।⁹ उपर्युक्त अंश के माध्यम से लेखिका ने स्पष्ट किया है कि घर की बड़ी बेटी संज्ञा में पुरखों की निशानी एवं विरासत को संभाले रखने की प्रबल इच्छाशक्ति है साथ ही परिवार को एकजुट रखने की सामाजिक मर्यादा भी। वह उस समय से परिवार के खर्च में सहयोग करती है जब उसके पिता जीवित थे। और छोटी बहन की शादी तथा भाई की पढ़ाई की जिम्मेदारी को बड़ी होने के कारणवश कर्तव्यपरायण होकर जीवन का आदर्श बना लिया वहीं उसने पिता द्वारा बनाए गए घर को घर बनाए रखने के लिए अपने आधुनिक दृष्टिकोण के साथ अपने अधिकार की बात भी की। यही कारण है कि वह अपने पिता द्वारा बनाए गए घर के बेचे जाने पर दृढ़तापूर्वक उसका विरोध प्रदर्शित करती है और अपने हिस्से की भी मांग करती है। अतः स्पष्ट है कि लेखिका ने प्रस्तुत कहानी के माध्यम से उन पारिवारिक मानवीय संवेदनाओं को मूर्त रूप प्रदान किया है जो नारी अस्मिता के संरक्षण, पारंपरिक मर्यादाओं के रखरखाव तथा स्त्री अधिकारों के मूल्य को प्रतिबिंबित करता है।

'सुखमनी', कहानी-संग्रह में 'सौत' नामक कहानी के माध्यम से लेखिका ने स्त्री मन की उस चिरसुपरिचित संवेदना को प्रकट किया गया है, जो यह कभी नहीं चाहती कि उस स्त्री का पति अथवा प्रेमी किसी अन्य स्त्री की ओर दृष्टिपात भी करें तथापि वर्तमान संदर्भों में समाज में बढ़ते विवाहेतर संबंधों के परिणामस्वरूप अनेक स्त्रियों या तो उसके पति द्वारा इस धोखे में रखी जाती है कि वह किसी जरूरी काम से या तो कहीं बाहर जा रहा है अथवा उसे अपने कार्य स्थल से वापस लौटने में देरी हो जाती है। वहीं दूसरी ओर अनेक स्त्रियां ऐसी भी हैं जो यह सब कुछ जानती हैं कि उनका पति अथवा प्रेमी किसी अन्य स्त्री के साथ महत्वपूर्ण समय खर्च कर रहा है किंतु वह अपनी पारिवारिक परिस्थितियों अथवा किसी विशिष्ट स्थिति के कारण चाहते हुए भी उसका विरोध नहीं कर पाती। इस कहानी का एक अंश दृष्टतव्य है— "अजंता को अनायास याद आ गई अपनी दादी की। जब पापा टूर पर कहीं बाहर जाते थे तो वह अगले दिन से उनके आने का दिन गिनना शुरू कर देती थीं। तब अजंता कहती थी क्या दिन गिनने से समय कम हो जाता है। दिन चौबीस घंटे की जगह कम समय का हो जाता है। आज उसे लग रहा है वास्तव में दिन गिनने से समय कम हो जाता है। उत्कर्ष को गए अभी दस घंटे हुए हैं लेकिन लग रहा है एक दिन बीत गया। एक दिन छोड़कर अगले दिन सुबह वह लौट आएगा। दोपहर तक वह उससे मिल लेगी क्योंकि उत्कर्ष उन्नति को लेकर आएगा इसलिए वह बेधड़क उससे मिलने उसके घर चली जाएगी। यद्यपि उत्कर्ष के मम्मी-पापा उनके रिश्ते के बारे में सब कुछ जानते हैं लेकिन न जाने क्यों उत्कर्ष के घर की देहरी लांघते हुए उसे संकोच हो आता है और वह वहां जाने से बचा करती है।"¹⁰ उपर्युक्त अंश में स्पष्टतः लेखिका बताना चाहती हैं कि मनुष्य के जीवन में कुछ संबंध इस प्रकार बन जाते हैं जिन्हें किसी भी प्रकार आधार दे पाना संभव नहीं हो पता चूंकि पारिवारिक परिवेश में हमें उस घर से संबंध स्थापित करना होता है जबकि सामाजिक ढांचे में यह संभव नहीं होता। यद्यपि अजंता के हृदय की स्थिति उपर्युक्तांश से स्पष्ट हो तो जाती है किंतु सामाजिक मर्यादाएं उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। यही कारण है कि वह मन ही मन इस संबंध पर संकोच करती है।

इस प्रकार डॉ. अमिता दुबे के संपूर्ण कथा-साहित्य में मानवीय संवेदना, पारंपरिक तथा पारिवारिक एवं मानवीय मूल्य, स्त्री अस्मिता के संरक्षण का अभाव, संबंधों में स्थापित होती हुई विकृतियों तथा बाजारवाद के प्रभाव से बदलते सामाजिक सरोकार आदि यथार्थपरक महत्वपूर्ण बिंदुओं को बड़े ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत कर लेखिका ने हिंदी साहित्य जगत को अत्यंत समृद्ध किया है।

निष्कर्ष- डॉ. अमिता दुबे का कथा-साहित्य वैश्विक दृष्टि से यथार्थ के धरातल पर समसामयिक संदर्भों, मूल साहित्यिक विमर्शों, चेतनाओं, अभिव्यक्ति तथा संवेदनाओं की आधार भूमि पर सृजित हुआ है। जिस प्रकार विश्व भर की भाषाओं के साहित्य में मानवीय चेतना को उत्कृष्टता का मार्ग प्रदान करने के लिए उच्च आदर्शों की स्थापना हेतु काल्पनिक कथाओं, विचारों, अभिव्यक्तियों आदि को प्रस्तुत किया जाता है ठीक उसी प्रकार डॉ. अमिता दुबे का भी प्रयास सराहनीय तथा अन्य कथाकारों के लिए अनुकरणीय रहा है तथापि भिन्नता की दृष्टि से डॉ. अमिता दुबे जी का कथा-साहित्य आदर्शों की स्थापना हेतु मात्र काल्पनिक नहीं है अपितु यथार्थ की पृष्ठभूमि पर सृजित हुआ कल्पना मिश्रित कलात्मक अभिव्यक्ति का श्रेष्ठतम प्रस्तुतीकरण है। इस दृष्टि से उनके संपूर्ण कथा-साहित्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि वे वर्तमान हिंदी साहित्य के विविध विमर्शों, आदर्शों, संकल्पनाओं आदि के क्षेत्र में अपनी कहानियों के माध्यम से जीवंत उपस्थित तो बनाती ही हैं साथ ही उनकी कहानियां भारतीय सांस्कृतिक विरासत, स्त्री स्वातंत्र्य तथा अस्तित्व, मर्यादा, अधिकार आदि के प्रति सकारात्मक प्रेरणा, मानवीय मूल्यों का दृढ़तापूर्वक पुनर्स्थापना तथा साहित्यिक गरिमा, वैचारिक प्रतिबद्धता एवं मौलिक अभिव्यक्ति जैसे गुणों की संवाहक सिद्ध हुई हैं। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वर्तमान हिंदी साहित्य में डॉ. अमिता दुबे का कथा- साहित्य सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक के साथ-साथ विविध मानवीय संदर्भों में विशिष्टता के साथ अग्रिम पंक्ति में खड़ा दिखाई देता है। यही कारण है कि वर्तमान हिंदी साहित्य के क्षेत्र में डॉ. अमिता दुबे का स्थान अद्वितीय है।

संदर्भ

1. डॉ. अमिता दुबे : संभावना के जुगनू ; पृष्ठ संख्या-03, के0एल0पचौरी, प्रकाशन, डी0-8, इंद्रापुरी, लोनी, गजियाबाद-201102 ; प्रथम संस्करण : 2021 ई.
2. डॉ. अमिता दुबे : सुखमनी ; पृष्ठ संख्या-04, राजेश प्रकाशन, जी-5/62, अर्जुन नगर, दिल्ली-110051 ; प्रथम संस्करण : 2017 ई.
3. आ. सरोज शर्मा : मैं अभिव्यंजना ; पृष्ठ संख्या-06, साहित्यश्री प्रकाशन, आर0जेड0-149/4 मंगोलपुरी खुर्द, दिल्ली-110083 ; प्रथम संस्करणरू 2026 ई.
4. सं. डॉ. जोगेंद्र सिंह मीणा : प्रवासी जगत, डॉ. रमेश तिवारी, “जीवन की क्षणभंगुरता एवं संघर्षों का दस्तावेज है उपन्यास ‘गरीबा’।” ; पृष्ठ संख्या-55, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल प्रकाशन, अंतरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान आगरा, 282005 ; खंड-05, अंक- 4, आषाढ-भाद्रपद 2079/ जुलाई-सितंबर : 2022 ई.
5. सं. मा. रघुवीर शर्मा, आ0 भावना सक्सैना : भारतीय भाषाएं और राजभाषा हिंदी : अनुवाद के आयाम, डॉ. रश्मि जोशी, “अनुवादता” ; पृष्ठ संख्या-285, राजभाषा विभाग प्रकाशन गृह मंत्रालय भारत सरकार, एम0डी0 सी0सी- 1। भवन, नई दिल्ली-110001 ; प्रथम संस्करणरू 2025 ई.
6. सं. मा. रघुवीर शर्मा, आ. भावना सक्सैना : भारतीय भाषाएँ और राजभाषा हिंदी : सह-अस्तित्व की गाथा, प्रो.(डॉ.) अजय कुमार पटनायक, “ओड़िआ और हिंदी भाषा में अंतर्संबंध” ; पृष्ठ संख्या-58, राजभाषा विभाग प्रकाशन गृह मंत्रालय भारत सरकार, एन. डी.सी.सी.-1। भवन, नई दिल्ली-110001 ; प्रथम संस्करणरू 2025 ई.
7. डॉ. अमिता दुबे : संभावना के जुगनू ; पृ. सं.-33, के0 ए0पचौरी प्रकाशन, डी.-8, इंद्रापुरी, लोनी, गजियाबाद-201102;

- प्रथम संस्करण : 2021 ई.
8. डॉ. अमिता दुबे : पाषाणी; पृष्ठ संख्या-01-02, अविरल प्रकाशन, नारायण आश्रम (पिकप भवन के पीछे), विभूतिखण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ-226010 ; प्रथम संस्करण : 2000 ई.
 9. डॉ अमिता दुबे : पुनर्नवा पृष्ठ संख्या- 46, साहित्य भंडार, 50 चाहचंद, इलाहाबाद- 211003; प्रथम संस्करण : 2014 ई.
 10. डॉ अमिता दुबे : सुखमनी; पृष्ठ संख्या- 20 ,राजेश प्रकाशक, जी-5/62, अर्जुन नगर, दिल्ली-110051 ; प्रथम संस्करण : 2017ई.

संपर्क : रविन्द्र चौधरी
ग्राम-जगतपुर, पोस्ट-नहल
अतरौली, अलीगढ़ (202131)
मो-8077117875



वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लोक साहित्य का यथार्थ स्वर : गीत-नवगीत

कृष्ण कुमार यादव 'कनक'

सारांश - किसी भी देश, प्रदेश, भू-भाग अथवा क्षेत्र की पहचान वहाँ के निवासियों से होती है; वे मनुष्य हों अथवा जानवर। और फिर जहाँ ये दोनों ही न हों तो ऐसे स्थानों का यथार्थ संवेदना के धरातल पर स्थान ही कहाँ! जहाँ मनुष्य बसते हैं, वहाँ का संपूर्ण सौष्ठव, सौंदर्य, साहचर्य एवं सहानुभूति जिस संसार का सृजन करती है, वही तो लोक है। लोक का आशय मनुष्य के साहचर्य से निर्मित उस वातावरण से है, जो उसे जीवन जीने की प्रेरणा देता है, जीवन के अर्थ की अभिव्यक्ति करता है और उसके महत्व को प्रतिपादित करता है। इस दृष्टि से लोक किसी भी व्यक्ति की समग्र चेतना का मूल होता है। इसी प्रकार जहाँ जानवरों का निवास स्थान है, वहाँ उनका लोक है, संस्कृति है और संस्कार है। इस दृष्टि से प्रत्येक जीवधारी का अपना लोक है, जो उसे संवेदनाओं के संसार का सशक्त एवं सहयोगी सदस्य बनाया है। यद्यपि इस धरती का प्रत्येक जीवधारी श्वसन, उत्सर्जन, प्रजनन तथा परिसंचलन जैसी मूलभूत क्रियाओं के क्रमिक विकास का ही प्रतिफल होने के कारण समान है, तथापि मनुष्य अपनी मानवीय विशेषताओं जैसे, संवेदना, सभ्यता, संस्कृति, परंपरा, बौद्धिक चिंतन, विवेक आदि के प्रभाव से अन्य से भिन्न है। अतः उसका लोक भी सबसे उत्कृष्ट और सुसंस्कृत है। यह लोक अपने साहित्य के माध्यम से पारंपरिक स्वरूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता है। यही लोक साहित्य है जो गतिशीलता, नवीनतम और परंपरा सभी को साथ लेकर चलता है। गीत लोक साहित्य की आत्मा है और नवगीत उसका आधुनिक संस्कार। इसी संस्कार को अनेकानेक कवियों ने पुष्पित व पल्लवित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्हीं कवियों में एक हैं प्रो. सोम ठाकुर। वे ब्रज लोक साहित्य की मौलिक चेतना को अपने नवगीतों में पिरोकर नवीन चेतना के साथ प्रस्तुत करने में सर्वाधिक सफल कवियों में अग्रगण्य हैं।

प्रस्तावना- मानव सभ्यता के उदय से लेकर वर्तमान समय तक इस लोक के स्वरूप ने नित्य नूतन आकार प्राप्त किया है। यह क्रम अतीत के किसी भी कालखंड में न रुका है और न भविष्य में कभी रुकेगा। ऐसे में जो तत्व इस चिरकालिक प्रक्रिया को भारतीय संदर्भों में जीवंत बनाए हुए हैं वह है लोकी का साहित्य। यद्यपि यह मौखिक रूप में ही उपस्थित रहा है, तथापि यही बात लोक साहित्य की जीवंत महत्ता का प्रमाण है। लोक साहित्य में सबसे महत्वपूर्ण विधा कोई है तो वह है गेय काव्य। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि लोक साहित्य के शीर्षस्थ शिखर पर गीत की ही प्रतिष्ठा रही है। समय के विविध सोपानों पर जैसे-जैसे परिस्थितियों का प्राकट्य हुआ, वैसे-वैसे लोक गीतों ने भी नवीन स्वरूप धारण किया और फिर यह यात्रा नवगीत तक पहुँची। नवगीतों में सोम ठाकुर जैसे प्रतिष्ठित गीतकार ने ब्रज के लोक साहित्य को जो नवीनता प्रदान की वह अत्यंत श्लाघनीय, प्रशंसनीय तथा अनुकरणीय है।

बीज शब्द : लोकाचार, लोक मंगल, मार्गदर्शन, मनोरंजन, मानवता।

मूल शोध-पत्र - लोक साहित्य युग-युगांतर में मानवीय चेतना, संवेदना, परंपरा, संस्कार तथा संस्कृति जैसे महनीय तत्वों का संवाहक रहा है। लोक साहित्य में जन-मानस की संपूर्ण वैचारिक, सैद्धांतिक, भावात्मक तथा कलात्मक अभिव्यक्ति समाहित होती है। लोक साहित्य ही है, जो अनेकानेक, पौराणिक कथाओं, प्रसंगों, पद्धतियों, प्रविधियों, परंपराओं आदि को

श्रुति परंपरा के माध्यम से एक के बाद दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करता आ रहा है। लोक साहित्य में समाज का वास्तविक प्रतिबिंब दिखाई देता है। प्रत्येक परिस्थिति में मानव सभ्यता के संरक्षण का कार्य लोक साहित्य की ही जिम्मेदारी रहा है। और लोक साहित्य ने अपनी इस जिम्मेदारी को पूरी तरह निभाया भी है। यदि किसी समाज में लोक साहित्य ने हो तो उस समाज को अराजकता की ओर अग्रसर होने से रोक पाना असंभव हो जाएगा। यह अराजकता इसी बात पर निर्भर होगी कि मार्गदर्शन का कोई प्रतिरूप ही समाज में उपस्थित नहीं है। अतः लोक साहित्य किसी भी समाज की अनिवार्य आवश्यकता है, जिसे न तो अस्वीकार किया जा सकता है और न इसकी महत्ता को कम करके मूल्यांकित किया जा सकता है। यह बात भिन्न है कि लोक साहित्य वर्तमान अथवा पूर्व के प्रतिष्ठित आचार्यों द्वारा स्थापित साहित्य के मानकों पर खरा न भी उतरता हो, तब भी लोक साहित्य की अपनी साहित्यिक प्रतिष्ठा है, जिसे किसी भी प्रकार के बौद्धिक अनुमोदन की आवश्यकता कभी भी नहीं रही है।

साहित्य के मर्मज्ञ आचार्यों ने लोक, लोक साहित्य, लोक संस्कृति तथा लोक जीवन आदि पर अनेक प्रकार से अपने विचारों की अभिव्यक्ति की है। इस दृष्टि से अग्रलिखित अभिकथन उल्लेखनीय है “डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के मतानुसार ‘फोकलोर’ के लिए ‘लोक संस्कृति’ शब्द का प्रयोग नितान्त उपयुक्त एवं समीचीन है। लोक संस्कृति के अंतर्गत जनजीवन से संबंधित जितने आचार-विचार, विधि-निषेध, विश्वास, प्रथा, परंपरा, धर्म, मूढ़ग्रह, अनुष्ठान आदि हैं वे सभी आते हैं। ‘फोकलोर’ के अंतर्गत भी ये ही विषय समाविष्ट हैं। अतः ‘लोक संस्कृति’ शब्द ‘फोकलोर’ के व्यापक तथा विस्तृत अर्थ को प्रकाशित करने में सर्वथा समर्थ है। कोई भी परिभाषा या नवनिर्मित शब्द अव्याप्ति दोष से रहित होना चाहिए। ‘फोकलोर’ के अर्थ में ‘लोक-संस्कृति’ का प्रयोग इन दोषों से मुक्त है। ‘लोकायन’ तथा ‘लोकयान’ की भाँति इसमें अवाचक दोष भी नहीं है। दूसरी बात यह भी है कि हिंदी में ‘लोकसंस्कृति’ चिरपरिचित शब्द है। इसके उच्चारण मात्र से ही जनजीवन का चित्र, उनकी संस्कृति की झाँकी हमारी आँखों के सामने उपस्थित हो जाती है। जब हिंदी में यह शब्द पहले से विद्यमान है तब लोकवार्ता, लोकयान और लोकायतन जैसे अप्रचलित शब्दों का निर्माण कर उन्हें प्रचारित करने का प्रयास करना करने का प्रयास करना कहाँ तक संगत है? कुछ लोग यह कह सकते हैं ‘लोक संस्कृति’ शब्द ‘फोक-कल्चर’ का पर्याय हो सकता है फोकलोर का नहीं। परंतु डॉ. उपाध्याय के सिद्धांतानुसार ‘फोक-कल्चर’ तथा ‘फोकलोर’ में कोई विशेष अंतर नहीं है। दोनों की सीमाएँ एक दूसरे के छोर को छूती हुई दिखाई पड़ती हैं।

हिंदी के सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी ‘फोकलोर’ के अर्थ में ‘लोकसंस्कृति’ शब्द को ग्रहण करने का सुझाव उपस्थित किया है।¹ इस कथन के माध्यम से स्पष्ट होता है कि अंग्रेजी के ‘फोकलोर’ शब्द के लिए हिंदी में सही शब्द के संदर्भ में अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने बताया है कि अंग्रेजी के ‘फोकलोर’ के लिए हिंदी में कई नए शब्द बनाए जा रहे थे - जैसे लोकवार्ता, लोकायन, लोकयान, लोकायतन आदि; जबकि वास्तविकता में तो कोई नया शब्द बनाने की जरूरत ही नहीं है, क्योंकि हिंदी में तो पहले से सटीक शब्द ‘लोक संस्कृति’ उपस्थित है, जो कि सबसे सही और पूरी तरह परिपूर्ण शब्द है।

अंग्रेजी के शब्द ‘फोकलोर’ में आचार-विचार, रीति-रिवाज, विश्वास, धर्म, टोना-टोटका, व्रत-अनुष्ठान आदि को समाहित किया गया है, वह सब ‘लोक संस्कृति’ में भी समाहित है। संस्कृत में परिभाषाओं का महत्वपूर्ण नियम यह भी है कि परिभाषा में ‘अव्याप्ति’ (अर्थ बहुत छोटा हो जाना) का दोष नहीं होना चाहिए। ‘लोक संस्कृति’ में यह दोष नहीं है। इस दृष्टि से ‘लोकायन’ जैसे शब्दों में ‘अवाचक’ (जो ठीक से अर्थ न बताए) दोष है, पर ‘लोक संस्कृति’ में ऐसा बिल्कुल भी नहीं है, क्योंकि ‘लोक संस्कृति’ बोलते ही व्यक्ति के मन में गाँव, मेले, गीत, रीति-रिवाज, परंपरा आदि की पूरी झाँकी सामने आ जाती है। उपाध्याय जी का स्पष्ट मानना है कि जब इतना सुंदर, समझा-बूझा शब्द पहले से है, तो फिर ‘लोकायन’ जैसे कठिन और अप्रचलित शब्द के निर्माण का कोई अर्थ नहीं बनता। हाँ यह बात भिन्न है कि कोई यह अवश्य कह सकता है कि ‘लोक संस्कृति’ तो अंग्रेजी के ‘फोक कल्चर’ शब्द का अनुवाद है, ‘फोकलोर’ का नहीं। तो इस दृष्टि से भी देखने पर यही ज्ञात होता है कि ‘फोक कल्चर’ और ‘फोकलोर’ शब्दों के अर्थ में कोई बड़ा अंतर नहीं है, दोनों की सीमाएँ एक-दूसरे को

छूती हैं, इस दृष्टि से ये दोनों अंग्रेजी भाषा के पर्यायवाची ही हैं, इसलिए 'लोक संस्कृति' दोनों के लिए चल सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने भी इसी बात का समर्थन करते हुए कहा कि 'फोकलोर' शब्द के लिए 'लोक संस्कृति' शब्द ही अपनाना उचित है। अर्थात् अंग्रेजी भाषा में 'फोकलोर' और 'फोक कल्चर' जैसे शब्द लोक की जिस गरिमा को लिए हुए हैं, उसे लोक संस्कृति चिर काल से संग्रहीत किए हुए है। लोक साहित्य इस लोक संस्कृति के समूचे विग्रह को स्थायित्व प्रदान करता है, जो किसी भी साहित्यिक विधा की महत्वपूर्ण विशेषता होती है। इस दृष्टि से भी लोक साहित्य लोक का वास्तविक संरक्षक है।

लोक साहित्य का एक बड़ा स्वरूप लोक गीतों के रूप में उभरकर सामने आता है। इन लोक गीतों के माध्यम से अनेकानेक विषयों को बड़ी ही सहजता से प्रस्तुत करने की परंपरा रही है। जिनमें व्यंग्य गीतों का अपना ही विशिष्ट महत्व है। यद्यपि लोक गीतों को पुरुष गाएँ या महिलाएँ इस बात पर कोई विवाद कभी नहीं रहा तथापि लोक संस्कृति के चिर संरक्षक लोक साहित्य के इन लोक गीतों की पृष्ठभूमि में स्त्रियों का वर्चस्व सदैव से ही रहा है। इसी प्रकार व्यंग्य गीतों में भी स्त्रियों का ही पक्ष भारी रहता है। इस दृष्टि से से ब्रज के लोक गीतों में व्यंग्य प्रधान गीतों की भरमार है। जो कि इन के रसीलेपन को और भी अधिक रसीला बना देते हैं। व्यंग्य के संबंध में श्री यज्ञ शर्मा जी लिखते हैं “व्यंग्य साहित्य में सरसता का हामी है। उसका साहित्यिक स्वभाव बड़ा ही मिलनसार होता है।”² अर्थात् साहित्य में जो कुछ भी व्यंग्य के रूप में कहा गया होता है, वह अत्यधिक तीखा होने पर भी हृदय में चुभता तो है, किंतु उसकी यह चुभन कभी भी व्यक्ति को आक्रोशित नहीं करती, अपितु उसे एक विशिष्ट आनंद की अनुभूति कराती है। ब्रज लोक में ऐसे अनगिनत गीत हैं जो सास-बहू, देवर-भाभी, ननद-भौजाई आदि के संबंधों पर आधारित हैं। एक ब्रज लोक गीत की कुछ पंक्तियाँ देखें—

“बलमा तेरी ऊँची अटरिया,
मिलवौ कैसें होइ, मिलवौ कैसें होइ।

दिन भर बलम न परे लखाई,
राति कौं चढ़ि गए अटरिया।
मिलवौ कैसें होइ, मिलवौ कैसें होइ।

दुबकि छुपकि मैं चली अटा कौं,
तौलों बजि गई पाँव पंसुरिया।
मिलवौ कैसें होइ, मिलवौ कैसें होइ।

पहलौ पाँव धरौ सीढ़ी पै,
सोई जगि गई बूढ़ी डुकरिया।
मिलवौ कैसें होइ, मिलवौ कैसें होइ।

दबे पाँव मैं अटा पै चढ़ि गई,
पीछें आइगई ननद छिनरिया।
मिलवौ कैसें होइ, मिलवौ कैसें होइ।

मन बहलाइ मैंने ननद भगाई,
तौलों बलमा कौं आइ गई निंदरिया।

मिलवौ कैसें होइ, मिलिवौ कैसें होइ।

जैसे-तैसे मैंने बलमा जगायौ,

तब ताकि हैगई उजिरिया।

मिलनौ कैसें होइ, मिलनौ कैसें होइ।” (श्रुति परंपरा से उद्धृत)

उपर्युक्त लोक गीत में एक नवविवाहिता स्त्री उन सभी कारणों से अत्यंत दुखी है, जो उसके पति से मिलने में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं। पहला संकट तो यही है कि वह पूरे दिन में एक बार भी अपने पति को नहीं देख पाई है और फिर जैसे ही रात हुई तो उसका पति अट्टे पर जाकर लेट गया। अब वह स्त्री पहले तो सबके सो जाने की प्रतीक्षा करती रही और जब सब सो गए तो जैसे ही उसने पहला कदम सीढ़ी पर रखा वैसे ही उसके पैरों की पाजेब की आवाज से उसकी बूढ़ी दादी सास जाग गई। फिर कुछ देर बाद वह स्त्री वे सभी आभूषण उतार कर रख आई जो किसी प्रकार आवाज कर सकते थे तभी उसने देखा कि उसकी छोटी ननद भी उसके पीछे-पीछे चली आ रही है। वह उस ननद को समझा बुझाकर वहाँ से किसी तरह सो जाने के लिए ए भेजकर अपने पति के पास पहुँचती है तब तक वह देखती है कि उसका पति गहरी नींद में सो चुका है। वह बड़ी देर तक प्रयास करके अपने पति को जगाती है तब तक देखती है कि सबेरा हो चुका है और उजाला अपने पैर फैलाने लगा है। इस प्रकार एक नवविवाहिता स्त्री पूरी रात प्रतीक्षा करने के बाद भी अपने पति से मिल नहीं पाती। इस लोक गीत में ननद के लिए ‘छिनरिया’ शब्द का प्रयोग हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ है ‘चरित्र हीन बालिका’। यदि यह शब्द सामान्य रूप से किसी के लिए प्रयोग कर दिया जाए तो खून-खराबा भी हो सकता है किंतु लोक गीत में इसे व्यंग्य के रूप में प्रयोग किया गया है, जिसे सुनकर कोई बुरा नहीं मानता। इसी प्रकार विवाह के समय में अनेक व्यंग्य गीत गाए जाते हैं, जिनके अर्थ अत्यंत आपत्तिजनक होते हैं तथापि उन्हें हास्य-विनोद के रूप में ही स्वीकार किया जाता है।

लोक साहित्य में जिन महत्वपूर्ण बिंदुओं की चर्चा की जा सकती है, उनमें उसका बिंब विधान भी एक महत्वपूर्ण बिंदु है। साहित्य में बिंब विधान पर विचार करते हुए सुप्रसिद्ध आलोचक साहित्य-भूषण डॉ. रामसनेही लाल शर्मा ‘यायावर’ लिखते हैं— “साहित्य में बिंब-विधान अमूर्त के मूर्तीकरण की प्रक्रिया है, अरूप को रूपायित करने का प्रयास है इंद्रियातीत संवेदनों को इंद्रियगम्य बनाने की चेष्टा है। काव्य को संगीत और चित्रकला के निकट तथा दर्शन और विज्ञान से बिलग करने का प्रयत्न है। काव्य को अनुभव की बिंबात्मक अभिव्यक्ति भी कहा गया है, क्योंकि बिंबों की सर्जना और उनका समुचित प्रयोग काव्य-रचना को अधिक संवेद्य और ग्राह्य बनाता है।”-3 इसका आशय यह है, कि बिंब के माध्यम से ही कविता में किसी विशिष्ट बात को संकेतिक रूप में समझाने तथा अनुभव कराने का प्रयास किया जाता है। लेखक के अनुसार ‘बिंब’ के महत्वपूर्ण कार्य अग्रलिखित हैं— पहला है अमूर्त को मूर्त बनाना अर्थात् यहाँ अमूर्त का आशय है ‘जिसे छू नहीं सकते अथवा जिसे आँखों से देख नहीं सकते।’ जैसे - प्यार, घृणा, दर्द, स्मृति आदि। उसी प्रकार ‘मूर्त’ का आशय है जिसे देखा भी जा सके और उसे छुआ भी जा सके। इस आधार पर जब नायिका कहती है “बैरिन है गई उजिरिया, जैसे कि मेरी ननदिया।” तो यहाँ नायिका अमूर्त उजिरिया को मूर्त ननद के माध्यम से प्रकट कर रही है। इसी प्रकार जब कोई कवि कहे कि ‘तेरा प्यार सावन की घटा जैसा है’ तो यहाँ स्पष्ट होता है कि कवि ने अमूर्त ‘प्यार’ को एक ‘सावन की घटा’ जैसी मूर्त वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया है, यही बिंब का महत्वपूर्ण कार्य है। इसे ही बिंब-विधान कहा जाता है। इसी प्रकार बिंब विधान का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है अरूप को रूप देना अर्थात् जिसका कोई आकार नहीं है उसे आकार दे देना। और तीसरा कार्य है, इंद्रियातीत को इंद्रियगम्य बनाना। यहाँ इंद्रियातीत का अर्थ है जो हमारी 5 इंद्रियों (आँख, नाक, कान, जीभ, त्वचा) से परे है और इंद्रियगम्य का अर्थ है जो इंद्रियों के माध्यम से अनुभूत हो सके। जैसे ‘उदासी’ को देखा नहीं जा सकता, परंतु जब कोई किसी लोक गीत में यह कहा जाए कि - “एक उदासी बुझे दिया सी, दुबकी परी उसारे में।” तो यहाँ एक बूढ़ी स्त्री जो घर के किसी कोने में लेटी हुई है, उसके माध्यम से उदासी का दृष्य रूप आसानी से देखा जा सकता है। इसी प्रकार ‘ननद जरूली नाक सिकोड़े, पिय ढिंग जान न देइ।’ लोकगीत की इस पंक्ति में जलन या ईर्ष्या के भाव को नाक सिकोड़ने

की स्थिति से स्पष्ट करते हुए ऐंद्रिक बनाया गया है। वहीं बिंब विधान का चौथा और सबसे महत्वपूर्ण कार्य कविता को संगीत तथा चित्रकला के करीब लाना है इस प्रकार बिंबों के प्रयोग से कविता में चित्र बन जाता है और मन को भाने वाली लय तथा संगीतात्मकता आ जाती है। इस प्रकार कविता को दार्शनिक चिंतन या विज्ञान के शुष्क तर्क से पृथक हो जाती है। साहित्य का यही वह पक्ष है जो कि हृदय को गहरे जाकर स्पर्श करता है। इस दृष्टि से बिंब-विधान का मुख्य अर्थ है - “जो बात सिर्फ सोची जा सकती है, उसे ऐसी भाषा में कहना कि वह आँखों से दिखाई देने लगे और कानों से सुनाई देने लगे, यानी कि नाक से उसकी खुशबू महसूस कर सके। यही कारण है कि लेखक ने काव्य को मानव द्वारा किए गए अनुभव की बिंबात्मक अभिव्यक्ति कहा है, क्योंकि कोई भी श्रेष्ठ कवि कभी भी निजी अनुभव को सीधे व्यक्त नहीं करता बल्कि एक चित्र (बिंब) बनाकर कहता है, ताकि पाठक उसे तुरंत अनुभव कर सके।

डॉ. यायावर जी अपनी एक और आलोचनात्मक कृति ‘गीत से नवगीत तक’ में बिंब विधान पर चर्चा करते हुए इसी तथ्य को स्पष्ट करने हेतु लिखते हैं—“बिंब वस्तुतः पाठक हृदय के मस्तिष्क में कवि संवेदना का चित्र बनाते हैं। बिंबों का विभाजन आनेक प्रकार से किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिक और सौन्दर्यशास्त्रियों ने भी बिंबों के अनेक भेद किये हैं। वे केवल इंद्रिय ग्राह्य ही नहीं होते, अपितु ऊष्मा और दबाव के भी हो सकते हैं, स्थिर और गतिशील भी हो सकते हैं, एकल भी हो सकते हैं और मिश्रित भी, रुढ़ित भी हो सकते हैं और नवीन भी तथा बँधे और मुक्त तथा संश्लिष्ट भी हो सकते हैं।”⁴ इस प्रकार लोक साहित्य पर दृष्टि डालें तो ज्ञात होता है कि विविध प्रकार के बिंबों के माध्यम से लोक साहित्य भरा पड़ा है। यही कारण है कि लोक साहित्य आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना कि अतीत में।

लोक साहित्य समय के साथ-साथ गतिशील बना रहता है, क्योंकि वय श्रुति परंपरा से आगे बढ़ता है। यही कारण है कि उसमें नित्य नूतनता आती रहती है। इस दृष्टि से जिस प्रकार हिंदी साहित्य में गीत के बाद नवगीत की स्थापना एक सोची-समझी रणनीति के अनुसार हुई, परंतु लोक गीतों में नवगीत के सभी महत्वपूर्ण तत्व स्वतः समाहित हुए हैं। यही लोक साहित्य की महत्वपूर्ण विशेषता है कि यहाँ कुछ भी सायास नहीं होता बल्कि सब कुछ समाज और लोक के प्रभाव से ही उत्पन्न हुआ होता है। आज जिस प्रकार स्त्री शिक्षा को महत्व देते हुए समाज आगे बढ़ा है, उसका सकारात्मक परिणाम समाज में स्पष्ट दिखाई देता है। इस संबंध में सुश्री अनीता देवी लिखती हैं—“आधुनिक युग की शिक्षित नारी स्व के अस्तित्व तथा अधिकारों के प्रति जागृत है। अपना जीवन सुखमय बनाने के लिए वह प्रयत्नशील है। इस कार्य की पूर्ति हेतु उसका घर से बाहर निकलकर कार्य करना अनिवार्य है। घर के बाहर उसका जीवन संघर्षमय रहता है। ‘वह उसे क्यों पसंद करती है’ क्योंकि आज के समय में अकेले व्यक्ति की कमाई से घर चला पाना संभव नहीं है। अतः वह अपने घर को चलाने के लिए प्राइवेट कंपनी में नौकरी भी करती है और घर के कामकाज भी। काम में ही उसे दिन से रात हो जाती है फिर भी वह खुश है क्योंकि वह हर सुख-दुख में अपने पति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी रहना चाहती है।”⁵ इस कथन में लेखिका का स्पष्ट मत है कि वर्तमान समय की परिस्थितियाँ वैसी बिल्कुल भी नहीं रह गई हैं, जहाँ स्त्रियाँ घर की दीवारों के अंदर रहने के लिए विवश हुआ करती थीं। इसके लिए पहले के समय में उनपर सामाजिक व पारिवारिक दबाव एवं परंपराओं आदि का बोझ भी हुआ करता था किंतु शिक्षा के प्रसार ने समाज की समस्त रुढ़ियों को छोड़कर स्त्रियों को अपनी प्रगति का भागीदार बनाया है। इस के प्रभाव से समाज भी बदला है और साहित्य भी परिणाम स्वरूप लोक गीतों की भाषा और संस्कार दोनों में नवीनता आई है। इस नवीनता ने लोक गीतों को नवगीत की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है। इसी तरह का एक लोकगीत देखें-

“मैं हूँ लड़की पढ़ी लिखी, मुझे मॉल घुमा दो राजा जी।

कितने दिन हो गए न साड़ी सूट न कोई मेकप है।

घर का खाना बहुत हुआ, होटल का खिला दो राजा जी।

ननद, जिठानी, घोराणी, सब पर भर झोली गहने हैं।
मुझे नहीं कुछ पता, मुझे कॉलर बनबा दो राजा जी।

मम्मी जी की किच-किच बाजी चुप रह कर सुन लेती हूँ।
तुमसे भी न कहूँ मन की, तो किसे बता दो राजा जी।

तुम तो राजा जॉब कर रहे, पर घर तो चलता ही नहीं।
मैं भी जॉब करूँगी अब, स्कूटी दिला दो राजा जी।” (श्रुति परंपरा से उद्धृत)

उपर्युक्त लोकगीत में एक ओर एक पढ़ी-लिखी लड़की का स्वाभिमान भी और परंपराओं से प्राप्त संस्कार भी। अतः वह वर्तमान समय के साथ जुड़कर भी रहना चाहती है और अपने संस्कारों के अनुरूप अपने परिवार के संस्कारों के साथ भी। यही कारण है कि वह स्वीकार करती है कि सासू माँ की दिन भर की किच-किच भले ही उसे न भाती हो, किंतु फिर भी वह सब कुछ बिना बोले सुनती रहती है, परंतु अपने पति के समक्ष वह अपने हृदय के प्रत्येक भाव को खुलकर लगती है। यह वर्तमान समय के लोकगीतों की नवगीतात्मकता का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

भारत में लोक साहित्य में वैदिक काल से वर्तमान तक की अनगिनत कहानियों, लोक कथाओं आदि को विविध साहित्यिक विधाओं के रूपों में देखा जा सकता है। ये सभी रूप क्षेत्रियता का प्रभाव लेकर एक दूसरे से भिन्न भी होते हैं, तथापि संपूर्ण विश्व में लोक साहित्य का कमोवेश यही स्वरूप दृष्टिगत होता है। इस संबंध में ब्रज क्षेत्र की महत्वपूर्ण लोक साहित्य विधा के रूप में रसिया की प्रतिष्ठा है, तथापि, आल्हा, ढोला, फाग, मल्हार, जिकड़ी भजन, जबाबी दंगल आदि अनेक लोक विधाएँ हैं। ऐसे ही भारत के विभिन्न क्षेत्रों में वहाँ के लोक साहित्य का स्वरूप भी वैसा ही देखने को मिलता है।

लोक साहित्य में ब्रज के फाग गायन की परंपरा अति प्राचीन और समृद्ध है। चूँकि ब्रज क्षेत्र के अंतर्गत उत्तर प्रदेश राजस्थान और हरियाणा के कुछ महत्वपूर्ण जिले आते हैं, अतः वहाँ अलग-अलग जिलों में प्रस्तुतिकरण तथा भाषाई उच्चारण का अंतर तो रहता ही है किंतु ब्रज के सभी जनपदों में फाग की परंपरा भी लगभग समान ही है। यही अंतर भिन्न भिन्न जनपदों में फाग गायन तथा बाद्य यंत्रों के लय विधान की शैली में भी है। तथापि संपूर्ण ब्रजमंडल में महाशिवरात्रि के तुरंत बाद से गाँवों के प्रमुख मंदिरों में सबसे पहले फाग गायन का प्रारंभ “सुमिरि सरस्वती हरिगुन गाऊँ” जैसे गीतों से होता है, फिर जिन घरों में किसी पुरुष की मृत्यु हुई है वहाँ “जननी मति रोवै रोज, धरनि पै जो आवे सो जाइगौ।” जैसे गीत गाए जाते हैं, वहीं जिन घरों में महिला की मृत्यु हुई होती है, वहाँ “गई-गई सिया-सी नारि, हमारे घर आँगन सूने भए।” जैसे गीत गाए जाते हैं। इस प्रकार फाग की यात्रा चल पड़ती है, जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश और ब्रह्मांड की उत्पत्ति से लेकर विविध पौराणिक कथानकों के गीत जैसे “राजा बलि नें बुलाए भूप देव सिंग जुरि आए” आदि गीतों से होती हुई यह फाग परंपरा “अब हम जानी हो, लंका भी बिरानी” जैसे रामायण के प्रसंगों से होते हुए कृष्ण लीला और महाभारत में प्रवेश करती है। होलिका दहन के साथ ही “परिवा की धुंधि उडाइ, कुमर भए केसरिया”, “राधे ने लगायौ बाग, श्याम नें केसरि की क्यारी बई” जैसे पारंपरिक गीतों के साथ ही देवर भाभी और जीजा साली के रसीले गीतों का भी तड़का लग जाता है, और फिर इसी तरह दौज मिलन से पंजमी तक सभी गाँवों में “हम खूब ही खेले फाग, तिहारे ऐसे ही ठाट बने रहियौ” जैसे गीतों के साथ फाग की विदाई होती है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि लोक साहित्य फाग के क्षेत्र में जैसी प्रतिष्ठा ब्रज क्षेत्र की है वैसी अन्यत्र किसी और की नहीं। इसका आशय यह बिल्कुल भी नहीं कि भारत के अन्य क्षेत्रों में इस लोक साहित्य का प्रसार बिल्कुल भी नहीं है, फिर भी ब्रज का अपना अलग ही स्थान है। यद्यपि फाग पुरुष प्रधान राग रहा है तथापि महिलाओं के फाग संबंधी गीत भी किसी भी दृष्टि से कमतर मूल्यांकित नहीं किए जा सकते।

इसी प्रकार ब्रज का एक और लोक साहित्य का महत्वपूर्ण स्वरूप झेंजी-टेसू संबंधी गीतों के रूप में प्रतिष्ठित है। ऐसी लोक मान्यता है कि जब महाभारत का युद्ध होने वाला था तब बर्बरीक/बब्राबान नाम का अत्यंत बलशाली योद्धा इस लिए

नाराज हो गया था क्योंकि उसे न तो कौरवों ने और न पांडवों के अपनी ओर से युद्ध के लिए आमंत्रित किया। अतः उसने यह प्रतिज्ञा की कि वह उस दल की सहायता करेगा जो युद्ध में हारेगा। यह बात जब श्री कृष्ण को ज्ञात हुई, तो उन्हें चिंता होने लगी क्योंकि वे जानते थे कि इस युद्ध में कौरवों की हार होगी किंतु यह बर्बरीक यदि कौरवों की ओर से लड़ा तो इस युद्ध को पांडव कभी नहीं जीत पाएँगे। अतः कृष्ण ने याचक के रूप में बर्बरीक से दान के रूप में उसका सिर माँग लिया। चूँकि वह पहले ही वचन दे चुका था अतः सिर देने को तो तैयार हो गया किंतु उसने मरने से पूर्व अपनी दो इच्छाएँ प्रकट कहीं। पहली तो यह कि वह महाभारत का युद्ध देखना चाहता था और दूसरा वह शादी करना चाहता था। अतः श्री कृष्ण ने उससे कहा कि आप अपना सिर काटकर मुझे दान में दे दो, हम आपका सिर एक पेड़ पर रख देंगे। जब तक तुम्हारा सिर उस पेड़ पर रहेगा, तब तक न तो तुम्हारी मृत्यु होगी और न तुम्हें भूख प्यास लगेगी। इस प्रकार तुम एक स्वस्थ मनुष्य की तरह महाभारत को पूरे आनंद के साथ देख सकोगे। और रही शादी की बात, तो अगले वर्ष से प्रतिवर्ष सबसे पहले आपका प्रतीकात्मक विवाह सबसे पहले होगा उसके बाद ही किसी भी व्यक्ति की शादी होगी।

इसी कथा के आधार पर विजय दसवीं के दिन से गाँवों के घरों में बब्राबान का प्रतीक लाया जाता है। इसकी तीन टाँगें, हाथ और सिर होता है। इसका विवाह करने के लिए एक छोटी मटकी तैयार की जाती है जिसे झेंजी कहते हैं। ये दोनों ही कच्ची मिट्टी से बनाए जाते हैं। लगातार छरू दिन तक पुरुष टेसू तथा महिलाएँ झेंजी के गीत गाती हैं। और सातवें दिन पूरे विधि-विधान से टेसू-झेंजी का विवाह संपन्न कराया जाता है। विवाह के तुरंत बाद पूरी श्रद्धा के साथ दोनों को विसर्जित कर दिया जाता है। वर्तमान समय में खाटू श्याम के नाम से जिस देवता की खूब प्रतिष्ठा हुई है। वह देवता टेसू यानी कि बर्बरीक ही है। यही कारण है कि उसे हारे का सहारा भी कहा जाता है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि टेसू-झेंजी के नाम पर जो लोक गीत गाए जाते हैं, वे सभी अत्यंत अतिशयोक्ति पूर्ण और केवल मनोरंजन के उद्देश्य से निर्मित हुए जान पड़ते हैं। टेसू का एक गीत देखें-

“झील झिलारे पिय याँ मति बसियो

याँ माँछर की खानि हो।

माँझर मारौ नौ पुर बने

सो बत्तें बनी करोड़

हाथिनु कौँ हौदा बने

सो ऊँटनि कौँ बगड़ोर।” (श्रुति परंपरा से उद्धृत)

इस गीत में टेसू की पत्नी अपने पति से कह रही है कि यह झीलों का क्षेत्र है, यहाँ मच्छर बहुत हैं। अतः यहाँ मत ठहरना। क्योंकि ये मच्छर बहुत बड़े और शक्तिशाली हैं। कल ही किसी ने एक मच्छर मारा था। उसकी खाल से नौ बड़े-बड़े पुर बनाए गए, जिनसे कुँए पे पानी खींचा जाता है। इन पुरों के अतिरिक्त करोड़ों बत्तें (मोटी रस्सियाँ) बनाई गईं। और इतना ही नहीं। उस एक मच्छर से ही हाथी की पीठ पर रखे जाने वाले अनेक हॉद बने और असंख्य ऊँटों को बाँधने वाली रस्सियाँ निर्मित हुई हैं।

इस गीत में मच्छर के संबंध में जो कुछ कहा गया है वह सब अतिशयोक्ति है। इस प्रकार टेसू और झेंजी के संबंध में जो भी लोक गीत गाए जाते हैं, वे सभी केवल मनोरंजन के लिए ही होते हैं, फिर भी ये गीत लोक की सांस्कृतिक पहचान व परंपरा का अभिन्न अंग हैं। इस दृष्टि से वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लोक गीतों की अपनी विशिष्ट महत्ता है, जो कि सांस्कृतिक विरासत तथा धरोहर के रूप में मानव सभ्यता के साथ संबद्ध है। लोक साहित्य मौखिक रूप में ही रहता है, यह इसकी विशेषता भी है और सीमा भी। किंतु फिर भी युग युगांतर से आंचलिक पटल पर लोक साहित्य आज भी अपनी पूरी गरिमा के साथ स्वयं की सार्थक उपस्थिति दर्ज कराए हुए है।

निष्कर्ष - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि लोक साहित्य किसी पुस्तक में बंद साहित्य नहीं, बल्कि मनुष्य के जीवंत साहचर्य से बना हुआ एक विस्तृत संसार है। जहाँ मनुष्य है, वहीं लोक है, और

जहाँ लोक है, वहीं उसकी संस्कृति और साहित्य है। यदि समाज से लोक साहित्य को पूरी तरह से हटा दिया जाए तो समाज दिशाहीन और अराजक हो सकता है, क्योंकि लोक साहित्य ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी श्रुति परंपरा के माध्यम से पौराणिक कथाओं, परंपराओं और मानवीय मूल्यों को आगे बढ़ाता है। इसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व है, जिसे किसी बौद्धिक प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं। लोकगीतों में जीवन के जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी राग-रंग समाए हैं। ब्रज के 'बलमा तेरी ऊँची अटरिया' जैसे गीत में व्यंग्य और शृंगार का अद्भुत संगम है, जहाँ 'छिनरिया' जैसा तीखा शब्द भी गाली न बनकर हास्य बन जाता है। वहीं बिंब-विधान लोक साहित्य की सबसे बड़ी शक्ति है। पहले की स्त्री पदे में 'मिलवौ कैसे होइ' गाती थी, तो आज की पढ़ी-लिखी नारी "मैं हूँ लड़की पढ़ी-लिखी, मुझे मॉल घुमा दो राजा जी" और "मैं भी जॉब करूँगी अब, स्कूटी दिला दो राजा जी" गाती हैं। यही परिवर्तन लोकगीत से नवगीत की यात्रा है। यहाँ परंपरा का त्याग नहीं, बल्कि परंपरा के साथ आधुनिकता का समन्वय है, जो कि लोक की कल्पनाशीलता और सांस्कृतिक निरंतरता के प्रमाण हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि लोक साहित्य मौखिक होते हुए भी सबसे अधिक जीवंत है। गीत से नवगीत तक की उसकी यात्रा यह सिद्ध करती है कि लोक कभी पुराना नहीं होता, वह हर युग में नया रूप धारण कर लेता है। इसलिए वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी लोक साहित्य का यथार्थ स्वर ही मानवता, लोकमंगल और मनोरंजन का सच्चा स्वर है।

संदर्भ सूची (HSS formate)

1. डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय : लोक-साहित्य की भूमिका ; पृष्ठ संख्या 18-19, लोक भारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद -211001 ; संस्करण : 2022 ई.
2. सं. डॉ. श्याम सखा 'श्याम' : हरिगंधा (व्यंग्य विशेषांक), मा. यज्ञ शर्मा "व्यंग्य और मैं"; पृष्ठ संख्या - 76, हरियाणा साहित्य अकादमी, अकादमी भवन, पी-16, सैक्टर 14, पंचकूला -134113 ; अंक : 236-237, अप्रैल - मई : 2014 ई.
3. डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर' : नवगीत: नये स्वर ; पृष्ठ संख्या - 43, निखिल पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 37, 'शिवराम कृपा, विष्णु कॉलोनी, शाहगंज आगरा - 282010 ; प्रथम संस्करण : 2018 ई.
4. डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर' : गीत से नवगीत तक ; पृष्ठ संख्या - 171, श्वेतवर्णा प्रकाशन, 112-ए, एक्सप्रेस वे अपार्टमेंट, सुपर मिग, सैक्टर -93, नोएडा -201304 ; प्रथम संस्करण : 2026 ई.
5. सं. डॉ. जोगेंद्र सिंह मीणा : प्रवासी जगत ; आ. अनीता देवी, 'नारी के विविध पक्ष' ; पृष्ठ संख्या - 132, अंतरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा -282005 ; खंड -5, अंक -4, आषाढ़-भाद्रपद, 2079/जुलाई-सितंबर : 2022 ई.

हिंदी शोधार्थी

शोध-निर्देशक - डॉ संध्या द्विवेदी, हिंदी विभागाध्यक्ष,
महात्मा गांधी बालिका विद्यालय (पीजी) कॉलेज, फिरोजाबाद
मो. 7017646795, 9259648428



तमिल साहित्य और भारतीय भक्ति चेतना

कुसुम डूंगरवाल

सारांश- भारतीय साहित्य में भक्तिकाल एक धार्मिक चेतना का साहित्यिक रूपांतरण रहा है, यह भारतीय समाज, भाषा और संस्कृति में घटित एक व्यापक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व भी करता है। भक्तिकाल ने ईश्वर और मनुष्य के संबंध को व्यक्तिगत अनुभूति, प्रेम, समर्पण और आत्मीयता के स्तर पर स्थापित किया तथा संस्कृत की शास्त्रीय अभिव्यक्ति के साथ-साथ उसे जनभाषा, लोकानुभूति और व्यक्तिगत आध्यात्मिक अनुभव एवं साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। इस संदर्भ में तमिल साहित्य का महत्व विशेष रूप से रेखांकित किया जाना आवश्यक है। तमिल साहित्य की प्राचीन संगम परंपरा से लेकर आलवार और नयनार संतों की भक्ति रचनाओं तक एक दीर्घ साहित्यिक विकास दिखाई देता है। तमिल प्रदेश में आलवारों की वैष्णव तथा नयनारों की शैव भक्ति ने व्यक्तिगत ईश्वरानुभूति को लोकभाषा में अभिव्यक्त किया। आलवार परंपरा में आंडाल की तिरुप्पावै और नाच्चियार तिरुमोलि स्त्री-भक्ति, माधुर्य-भाव, विरह और आत्मसमर्पण की विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ हैं। इन रचनाओं में दिखाई देने वाली भक्ति की भावभूमि बाद के हिंदी भक्तिकाव्य के साथ तुलनात्मक अध्ययन की संभावनाएँ प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत आलेख तमिल साहित्य की इस भक्ति-परंपरा का अध्ययन करते हुए भारतीय भक्तिकाल की बहुभाषिक और बहुक्षेत्रीय प्रकृति को रेखांकित करता है तथा भारत-श्रीलंका के तमिल भाषी सांस्कृतिक संबंधों के संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता पर विचार करता है।

बीज शब्द : तमिल साहित्य, भक्ति आंदोलन, आलवार, नयनार, संगम साहित्य, भारतीय संस्कृति, तमिल भाषा, भारत-श्रीलंका संबंध।

आलेख - भारतीय साहित्य का इतिहास किसी एक भाषा, क्षेत्र अथवा धार्मिक परंपरा का इतिहास नहीं है। इसकी मूल प्रकृति बहुभाषिक, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक है। भारतीय साहित्य की इसी विशेषता को भक्तिकाल अत्यंत प्रभावशाली रूप में सामने लाता है। मध्यकालीन धार्मिक साधना के केंद्र में भक्ति का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भक्तिकालीन साहित्य के अध्येताओं और साहित्य-चिंतकों ने भी इस काल की साहित्यिक चेतना को समझने के लिए भक्ति को प्रमुख आधार माना है। विशेष रूप से वैष्णव परंपरा में ईश्वर की आराधना का मूल आधार भगवत्-भक्ति ही है। मध्यकालीन हिंदी साहित्य के इतिहास पर विचार करते हुए अनेक विद्वानों ने भक्ति-काव्य के विकास का संबंध दक्षिण भारत में विकसित विभिन्न दार्शनिक मतों से जोड़ा है। अद्वैतवाद के प्रतिपक्ष में रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य और निम्बकाचार्य जैसे आचार्यों ने अपने-अपने दार्शनिक सिद्धांतों का प्रतिपादन और प्रचार किया। इन आचार्यों की उपासना-पद्धति में ईश्वर के सगुण एवं साकार स्वरूप, भगवत्-विग्रह तथा अवतारवाद को विशेष महत्व प्राप्त हुआ। फलतः भक्ति को ईश्वर-प्राप्ति के सहज और सर्वसुलभ साधन के रूप में प्रतिष्ठा मिली। हालाँकि भक्ति के विकास को केवल इन दार्शनिक आचार्यों की देन मानना पर्याप्त नहीं है। तमिल भाषा और दक्षिण भारतीय भक्ति साहित्य के अध्येताओं ने इस धारणा पर प्रश्न उठाते हुए यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि दक्षिण भारत, विशेषतः द्रविड़ प्रदेश में भक्ति की साहित्यिक एवं धार्मिक परंपरा इन दार्शनिक आचार्यों से भी पहले विकसित हो चुकी थी। इसी संदर्भ में श्रीमद्भागवत माहात्म्य में उल्लिखित प्रसिद्ध उक्ति—

“उत्पन्ना द्रविडे साहं वृद्धिं कर्णाटके गता। क्वचित्क्वचिन्महाराष्ट्रे गुजरी जीर्णतां गता॥”¹

इसको भक्ति के दक्षिण भारतीय उद्भव के संदर्भ में उद्धृत किया जाता है। इसी धारणा का लोकप्रिय रूप बाद में इस उक्ति में दिखाई देता है—

“भक्ति द्राविड़ उपजी, लाए रामानंद।”²

सामान्यतः ‘द्रविड़ प्रदेश’ से तात्पर्य दक्षिण भारत के उन विस्तृत प्रदेशों से है, जिनमें वर्तमान तमिलनाडु, केरल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तेलंगाना सम्मिलित हैं। इस व्यापक भौगोलिक क्षेत्र में तमिलनाडु को भक्ति परंपरा के विकास की दृष्टि से विशेष महत्त्व प्राप्त है। तमिल प्रदेश में छठी से नौवीं शताब्दी के बीच भक्ति की दो प्रमुख धाराएँ विकसित हुई— वैष्णव आलवार परंपरा और शैव नयनार परंपरा। उपलब्ध अध्ययनों के अनुसार बारह आलवार विष्णु की भक्ति से संबंधित थे, जबकि तिरसठ नयनार शैव परंपरा के संत माने जाते हैं। तमिल प्रदेश में वैष्णव संतों के लिए सामान्यतः ‘आलवार’ शब्द का प्रयोग किया जाता है। ‘आलवार’ का अर्थ है— भगवत्-भक्ति में पूर्णतः लीन भक्त अथवा ईश्वरीय प्रेम में निमग्न व्यक्ति। आर. श्रीनिवास देशिकन आलवार की व्याख्या अपने शब्दों में इस प्रकार करते हैं—“प्रभु की भक्ति में पूर्ण रूप से लीन”, ईश्वरीय प्रेम की मादकता में सराबोर भक्त।³ अन्य विद्वानों तथा टी. बरो एवं एम. बी. एमिनो के व्युत्पत्तिपरक कोश में भी इसका आशय प्रभु-प्रेम में मग्न भक्त से ही जुड़ा है। इस प्रकार ‘आलवार वे भक्त माने जाते हैं जिन्होंने परमात्मा की अनुभूति को अपने पदों के माध्यम से व्यक्त करते हुए भारतीय भक्ति-चिंतन को समृद्ध किया’। पाराशर भट्ट ने बारह प्रमुख आलवारों के नामों को एक ही पद में अत्यंत कुशलता से समाहित किया है—

“भूतं सरशच महदाह्वयभट्टनाथ—

श्रीभक्तिसार-कुलशेखर-योगिवाहान् ।

भक्ताडिन् घरेणु-परकाल-यतीन्द्रमिश्रान्

श्रीमत् परांकुशमुनि प्रणतोडस्मि नित्यम्।”⁴

तमिल प्रदेश में शैव भक्ति आंदोलन के विकास में नयनार संतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। शैव सिद्धांत शिव को परम सत्ता के रूप में स्वीकार करने वाली एक प्रमुख दार्शनिक परंपरा है, जिसने आगे चलकर तमिल शैव भक्ति को वैचारिक आधार प्रदान किया। इन्होंने शिव के प्रति व्यक्तिगत प्रेम, समर्पण और भावनात्मक अनुराग को भक्ति का प्रमुख आधार बनाया। नयनारों की भक्ति में ईश्वर के साथ भक्त के प्रत्यक्ष और आत्मीय संबंध पर विशेष बल दिया गया। नयनारों ने जाति-भेद समाप्त करने के उद्देश्य से आंदोलन शुरू किया। नयनार संतों की प्रमुख विशेषता ही यह थी कि उनकी भक्ति केवल किसी एक सामाजिक वर्ग तक सीमित नहीं रही। विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमियों से आए संतों ने शिवभक्ति को लोकजीवन से जोड़ा और तमिल भाषा में रचनाओं के माध्यम से इसे व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाया। उनके भक्ति-गीतों में शिव के प्रति गहरी आत्मीयता, समर्पण और विरह की अनुभूति के साथ-साथ तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियों की प्रतिक्रियाएँ भी दिखाई देती हैं। नयनारों ने शैव धर्म को भावनात्मक एवं लोकाभिमुख स्वरूप प्रदान किया। कालांतर में नयनारों की भक्ति-परंपरा मंदिर-केंद्रित शैव उपासना व्यवस्था से जुड़ी गई और चोल शासकों के संरक्षण में इसे व्यापक संस्थागत आधार प्राप्त हुआ। मंदिर धार्मिक गतिविधियों के साथ सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के भी प्रमुख केंद्र बने।

तमिल प्रदेश में भक्ति की प्राचीनता के संबंध में श्री चंद्रकांत ने अपने लेख में स्पष्ट रूप से उल्लेख करते हैं कि— “विष्णु-भक्ति और शैव-भक्ति का प्रचार तमिल प्रदेश में संघकाल से विद्यमान था।”⁵ उनके अनुसार संघकालीन साहित्य के अहनानूर, पुरनानूर, पदिट्टुप्पत्तु, कलित्तोक्कै, पेरुम्बाणाट्टुप्पडै तथा शिरुपाणाट्टुप्पडै आदि ग्रंथों में विष्णु-भक्ति तथा मंदिरों से संबंधित उल्लेख प्राप्त होते हैं। संघ साहित्य को आलवारों से पूर्व की तमिल साहित्यिक परंपरा माना जाता है। इस साहित्य में विष्णु को सर्वशक्तिमान, सर्वगुणसंपन्न, सर्वव्यापक, अजर-अमर, सर्वद्रष्टा तथा समस्त लोक के स्वामी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इसी क्रम में ‘परिपाडल’ विशेष उल्लेखनीय है। परिपाडल में विष्णु के प्रति भक्ति और आराधना के स्वर दिखाई देते हैं। इसमें विष्णु के ऐसे रूप का वर्णन मिलता है, जिसकी समानता पुराणों में वर्णित विष्णु के स्वरूप से स्थापित की जा

सकती है। तमिल साहित्य में वैष्णव धार्मिक चेतना का विकास आलवारों के आगमन से पूर्व ही किसी न किसी रूप में विद्यमान था। आलवार और नयनार विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण करते हुए तमिल भाषा में अपने आराध्य की स्तुति में भजन और पद गाते थे। अपनी यात्राओं के दौरान उन्होंने अनेक स्थानों को अपने आराध्य का पवित्र निवास माना, जो आगे चलकर महत्वपूर्ण तीर्थ एवं मंदिर-केंद्र बने। इन मंदिरों में गाए जाने वाले भक्ति-पदों का संकलन तमिल भक्ति साहित्य की महत्वपूर्ण आधारभूमि बना। नयनारों के शिव-भक्तिपरक गीतों का प्रमुख संग्रह 'थेवरम' तथा आलवारों की वैष्णव भक्ति रचनाओं का संकलन 'प्रबंधम्' कहलाता है। इस प्रकार दोनों संत परंपराओं ने तमिल भाषा को भक्ति की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर दक्षिण भारत में भक्ति चेतना को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन्होंने शैव और वैष्णव भक्ति को लोकभाषा तथा लोकजीवन से जोड़कर तमिल प्रदेश में एक व्यापक धार्मिक और साहित्यिक आंदोलन को जन्म दिया।

प्रत्येक युग की मूल प्रवृत्तियाँ प्रायः उसके पूर्ववर्ती युग की परिस्थितियों की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित होती हैं। तमिल प्रदेश में भक्ति आंदोलन का जो उत्कर्ष दिखाई देता है, उसे भी उसके पूर्ववर्ती 'संघोत्तर काल' की धार्मिक-सामाजिक परिस्थितियों की प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। ईसा की तीसरी, चौथी और पाँचवीं शताब्दी के तमिल साहित्य के इतिहास को सामान्यतः 'संघोत्तर काल' कहा जाता है। इस काल के साहित्य पर जैन और बौद्ध धर्म का विशेष प्रभाव दिखाई देता है। प्रारंभ में इन धर्मों के साहित्य-सृजन का उद्देश्य अपने धार्मिक सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार था, किंतु कालांतर में विभिन्न धार्मिक परंपराओं के मध्य वैचारिक प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगी और शैव तथा वैष्णव परंपराओं के विरोध में जैन एवं बौद्ध विचारों के समर्थन की प्रवृत्ति भी दिखाई देने लगी।

यद्यपि तमिल प्रदेश में जैन और बौद्ध धर्म का प्रभाव संघकाल से पूर्व ही स्थापित हो चुका था। संघ साहित्य में जैनों के दक्षिण भारत में आगमन एवं निवास के अनेक संकेत मिलते हैं। 'मणिमेखलै' में वर्णित अनेक विहारों से भी यह प्रमाणित होता है कि तमिल प्रदेश में बौद्ध धार्मिक संस्थाओं की स्थापना पहले ही हो चुकी थी। अशोक के शिलालेखों में चेर, चोल और पांड्य राजाओं का उल्लेख दक्षिण भारत के साथ मौर्यकालीन संपर्क की ओर संकेत करता है। जैन और बौद्ध धर्म के प्रचारकों ने संस्कृत और पालि के साथ-साथ तमिल भाषा में भी साहित्य की रचना की। इसका उद्देश्य स्थानीय जनता तक अपने धार्मिक विचारों को सरलता से पहुँचाना था। उनकी रचनाओं में नीति, धर्म, सामाजिक आचार, तत्कालीन विश्वासों और जीवन-मूल्यों का चित्रण मिलता है। कुछ रचनाओं में रामायण और महाभारत के पात्रों का उल्लेख भी मिलता है, किंतु उनका प्रस्तुतीकरण संबंधित धार्मिक दृष्टिकोण से प्रभावित रहा। साहित्य-सृजन के साथ जैन और बौद्ध संस्थाओं ने अनेक विहारों की स्थापना की। ये संस्थाएँ धार्मिक गतिविधियों के साथ शिक्षा, आश्रय और सामाजिक सहायता के केंद्र भी बनीं। समाज के उपेक्षित वर्गों तथा युद्ध से थके लोगों को इन संस्थाओं में आश्रय और शांति प्राप्त हुई, जिससे इनका प्रभाव व्यापक हुआ। किंतु कालांतर में धार्मिक प्रतिस्पर्धा और मतवैचारिक संघर्ष तीव्र होने लगा। कुछ बौद्ध विहारों में धार्मिक अनुशासन के शिथिल होने के उल्लेख भी मिलते हैं। ऐसी परिस्थितियों में तमिल समाज में अपनी प्राचीन धार्मिक परंपराओं के पुनरुत्थान की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। प्रतिक्रिया स्वरूप आलवार और नायनार संतों के भक्ति आंदोलन प्रारंभ हुए।

तमिल भाषा द्रविड़ भाषा परिवार की सदस्य है और भारत के अतिरिक्त श्रीलंका सहित अनेक क्षेत्रों में इसका भाषाई-सांस्कृतिक विस्तार रहा है। आधुनिक काल में तमिल को भारत की शास्त्रीय भाषाओं में स्थान प्राप्त हुआ है। इसके पीछे इसकी प्राचीनता, स्वतंत्र साहित्यिक परंपरा और प्राचीन साहित्य के विशाल भंडार का महत्वपूर्ण योगदान है। तमिल साहित्य के विकास का प्रारंभिक चरण संगम साहित्य से जुड़ा हुआ है। एटुत्तोकै और पडुप्पाटु इसके महत्वपूर्ण संकलन हैं। संगम काव्य को मुख्यतः अकम् और पुरम् के दो व्यापक विषयगत क्षेत्रों में समझा जाता है। अकम् में प्रेम और निजी भावनाओं की अभिव्यक्ति है, जबकि पुरम् में वीरता, युद्ध, राजाओं और सार्वजनिक जीवन का चित्रण मिलता है। संगम साहित्य का एक उल्लेखनीय पक्ष उसका प्रकृति के साथ गहरा संबंध है। यहाँ प्रकृति मनुष्य के जीवन से अलग कोई निष्क्रिय पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि वह मनुष्य के भावों और सामाजिक अनुभवों के साथ जुड़ी हुई है। प्रकृति विरहिणी के भावों को उद्दीप्त करती है। आंडाल ने 'नाच्चियार तिरुमोलि' में पक्षी, मेघ, वन और पुष्पों द्वारा रंगनाथ के प्रति अपनी विरहानुभूति व्यक्त की है। उदाहरण-

**“कोलैमेलुदिरुन्दु करियकुरुविककणडकळ्
मालिन् वरवु सोल्लिमरुल पाडुदळ् मेयमैकीलो।”⁶**

आंडाल ने इस पद में प्रकृति को अपने अंतर्मन के भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है, जिससे श्रीमन्नारायण के प्रति उनके प्रेम, विरह और अनन्य भक्ति का स्वरूप स्पष्ट होता है। इससे तमिल साहित्य की उस आरंभिक संवेदनात्मक परंपरा का पता चलता है जिसमें मनुष्य और उसके परिवेश के बीच संबंध को महत्व दिया गया। आलवार भक्त कवियों ने अपनी जीवन-दृष्टि के माध्यम से भक्ति को सर्वसुलभ और सर्वसमावेशी मार्ग के रूप में प्रतिष्ठित किया। उनका विश्वास था कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, स्त्री और पुरुष, बालक और वृद्ध तथा उच्च-निम्न सभी को भक्ति का समान अधिकार है। मुंशीराम के अनुसार, “आलवारों की भक्ति उस पावन सलिला की नैसर्गिक धारा के समान है जो स्वयं उद्वेलित होकर प्रखर गति से बहती जा रही है। आचार्यों की भक्ति उस तरंगिनी के समान है जो अपनी सत्ता जमाए रखने के लिए रुकावट डालने वाले विरोधी पदार्थों से लड़ती-झगड़ती आगे बढ़ती है। आलवार के जीवन का एक मात्र आधार था प्रपत्ति, विशुद्ध भक्ति, परन्तु आचार्यों के जीवन का एक मात्र सार था भक्ति और कर्म का मंजुल समन्वय। आलवार शास्त्र के निष्णात विद्वान न होकर भक्ति रस से सिक्त थे। आचार्य वेदांत के पारंगत विद्वान ही न थे, प्रत्युत तर्क और युक्ति के सहारे प्रतिपक्षियों के मुख-मुद्रण करने वाले पंडित थे। आलवारों में हृदयपक्ष की प्रबलता थी तो आचार्यों में बुद्धिपक्ष की दृढ़ता थी। यही विभेद दोनों की जीवन-दिशा में परिवर्तन करने वाला मार्मिक अंतर था।”⁷

इसी प्रकार नयनार परंपरा में स्त्री शिवभक्त करइकाल अम्मैयार का विशिष्ट स्थान है। उनके पदों में शिव के प्रति अनन्य भक्ति और पूर्ण समर्पण की भावना व्यक्त हुई है। उन्होंने अपनी आध्यात्मिक साधना और शिव-प्राप्ति के लिए सांसारिक मोह-माया का त्याग कर कठोर तपस्या का मार्ग अपनाया। उनकी भक्ति में वैराग्य, आत्मसमर्पण और ईश्वर के प्रति गहन प्रेम का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप—

“राक्षसी, फूली हुई नाड़ियों वाली

**बाहर निकली आँखें, सफेद दाँत और भीतर धँसा उदर लाल केश और आगे निकले दाँत,
लंबी पिंडली की नली जो टखनों तक फैली हुई है।**

वन में विचरते समय चीखना और

चंदन यह अलंकटु का वन है.

हमारे पिता (शिव) का घर है।

वह नृत्य करते हैं..... उनके जटाजूट आठों ओर बिखर जाते हैं।

उनके अंग शांत हैं।”⁸

इन स्त्री संतों ने सामाजिक कर्तव्यों का त्याग कर स्वतंत्र आध्यात्मिक मार्ग अपनाया और पितृसत्तात्मक आदर्शों को चुनौती देते हुए स्त्री की स्वतंत्र चेतना स्थापित की।

तोल्काप्पियम तमिल की प्राचीन व्याकरणिक और काव्यशास्त्रीय परंपरा का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसके अस्तित्व से यह ज्ञात होता है कि तमिल भाषा में भक्ति साहित्य के व्यापक विकास से पहले ही एक सुदृढ़ भाषिक एवं साहित्यिक परंपरा स्थापित हो चुकी थी। इसी क्रम में तिरुक्कुरल तमिल साहित्य की नैतिक और दार्शनिक चेतना का प्रतिनिधित्व करने वाला महत्वपूर्ण ग्रंथ है। प्रेम, नैतिकता, शासन और मानवीय आचरण जैसे विषयों पर आधारित इसके सूत्र तमिल समाज की जीवन-दृष्टि को समझने में महत्वपूर्ण हैं। चौथी से छठी शताब्दी के बीच की तमिल साहित्यिक परंपरा में शिलप्पदिकारम् और मणिमेकलै जैसे महत्वपूर्ण महाकाव्य सामने आते हैं।

भक्ति आंदोलन के इतिहास को लेकर एक प्रचलित दृष्टि यह रही है कि इसकी महत्वपूर्ण प्रारंभिक अभिव्यक्ति तमिल क्षेत्र में दिखाई देती है और बाद में विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में भक्ति की अनेक धाराएँ विकसित होती हैं। कर्नाटक, महाराष्ट्र, आंध्र, बंगाल, असम और उत्तर भारत में भक्ति ने स्थानीय सामाजिक एवं भाषिक परिस्थितियों के अनुरूप अनेक रूप ग्रहण

किए। हिंदी भक्तिकाव्य में कबीर, सूरदास, तुलसीदास और मीराबाई जैसे कवियों ने भक्ति को अपने-अपने ढंग से अभिव्यक्त किया। कबीर की निर्गुण भक्ति, सूर की कृष्णभक्ति, तुलसी की रामभक्ति और मीरा की व्यक्तिगत प्रेमाभक्ति अलग-अलग काव्यात्मक रूप प्रस्तुत करती हैं। तमिल आलवारों की कृष्ण एवं विष्णु भक्ति तथा उत्तर भारत की कृष्णभक्ति के बीच भावात्मक स्तर पर अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। इसी प्रकार ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत प्रेम और आत्मसमर्पण की भावना दोनों परंपराओं में महत्वपूर्ण है। भक्ति का प्रभाव केवल धार्मिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहा। लोकभाषाओं में भक्ति साहित्य की रचना ने साहित्यिक अभिव्यक्ति को व्यापक सामाजिक आधार दिया। मंदिर, उत्सव, संगीत और सामूहिक गायन के साथ भक्ति का संबंध स्थापित हुआ। तमिल भक्ति परंपरा में संत और भक्त ईश्वर के साथ अपने संबंध को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में व्यक्त करते हैं। इस कारण भक्ति में भावात्मक प्रामाणिकता का महत्व बढ़ता है। आगे चलकर भारतीय भक्ति परंपराओं में सामाजिक समानता, रूढ़ियों का विरोध, मानवीय प्रेम और धार्मिक आडंबर की आलोचना जैसे स्वर भी उभरते हैं।

भारत-श्रीलंका संबंधों में तमिल साहित्य की भूमिका

तमिल भाषा का सांस्कृतिक विस्तार भारत की सीमाओं से बाहर भी हुआ है और श्रीलंका में इसका महत्वपूर्ण साहित्यिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधार विकसित हुआ। विशेषतः उत्तरी और पूर्वी श्रीलंका तथा जाफना क्षेत्र में तमिल भाषा और साहित्य की सुदृढ़ परंपरा रही है। दक्षिण भारत के तमिल प्रदेश और श्रीलंका के तमिलभाषी क्षेत्रों के बीच लंबे समय से रहे संपर्क ने दोनों समाजों को भाषाई और सांस्कृतिक रूप से जोड़े रखा। इस दृष्टि से तमिल भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम न होकर भारत और श्रीलंका की साझा सांस्कृतिक विरासत की महत्वपूर्ण कड़ी बन जाती है। यह सांस्कृतिक संबंध धार्मिक आख्यानो, संत परंपराओं, भक्ति-साहित्य, मंदिर-संस्कृति, उत्सवों, काव्य-परंपराओं और सांस्कृतिक स्मृतियों के माध्यम से भी विकसित हुआ। तमिल साहित्य ने इन परंपराओं को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक पहुँचाने और उनमें निरंतरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विशेष रूप से तमिल भक्ति साहित्य ने भारत और श्रीलंका के तमिलभाषी समाजों के बीच धार्मिक एवं सांस्कृतिक आत्मीयता को सुदृढ़ किया। रामायण परंपरा के संदर्भ में भी तमिल साहित्य भारत-श्रीलंका सांस्कृतिक संबंधों को समझने का महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करता है। आलवार साहित्य में रामकथा से जुड़े प्रसंग मिलते हैं। कुलशेखर आलवार से संबंधित भक्ति-परंपरा में राम के प्रति ऐसी भावात्मक तन्मयता दिखाई देती है, जिसमें भक्त राम के जीवन-प्रसंगों को केवल कथा के रूप में नहीं, बल्कि अपने प्रत्यक्ष अनुभव की तरह ग्रहण करता है। इससे स्पष्ट होता है कि रामकथा ने तमिल भक्ति साहित्य में भावात्मक और धार्मिक दोनों स्तरों पर महत्वपूर्ण स्थान बनाया। तमिल साहित्य भारत और श्रीलंका के बीच भाषाई सेतु के साथ-साथ साझा सांस्कृतिक चेतना का वाहक भी रहा है। इसके माध्यम से दोनों क्षेत्रों की धार्मिक मान्यताएँ, साहित्यिक परंपराएँ और सांस्कृतिक स्मृतियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी जुड़ती रही हैं।

निष्कर्ष

इस अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि तमिल भक्ति साहित्य का उदय किसी आकस्मिक साहित्यिक घटना का परिणाम नहीं था, बल्कि उसके पीछे तमिल प्रदेश की दीर्घ धार्मिक, सामाजिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि कार्य कर रही थी। संगम और संगमोत्तर साहित्य से निर्मित वातावरण में जैन तथा बौद्ध प्रभावों के बीच आलवार और नयनार परंपराओं ने भक्ति को एक नए भावात्मक स्वरूप में प्रतिष्ठित किया। इन संतों ने दार्शनिक सिद्धांतों की अपेक्षा ईश्वर के साथ सीधे और आत्मीय संबंध को अधिक महत्व दिया। आलवारों के पदों में विष्णु और विशेषतः कृष्ण के प्रति प्रेम, माधुर्य, वात्सल्य तथा आत्मसमर्पण की जो अनुभूति मिलती है, वह आगे विकसित होने वाली भारतीय कृष्णभक्ति की अनेक प्रवृत्तियों को समझने में उपयोगी आधार प्रदान करती है। वहीं नयनारों ने शिवभक्ति को जनजीवन से जोड़कर तमिल शैव परंपरा को सुदृढ़ किया। इस प्रकार तमिल भक्ति साहित्य का सबसे बड़ा योगदान यह रहा कि उसने धार्मिक अनुभूति को साहित्यिक सौंदर्य और लोकानुभव के साथ एकाकार किया। इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि हिंदी भक्तिकाव्य को तमिल भक्ति की मात्र प्रतिछाया मानना उचित

नहीं है। दोनों की अपनी स्वतंत्र साहित्यिक परिस्थितियाँ हैं, किंतु उनके बीच दिखाई देने वाली भाव-समानताएँ भारतीय भक्ति की व्यापक अंतर्धारा की ओर संकेत करती हैं। विशेषतः कृष्णभक्ति के संदर्भ में आलवार साहित्य और हिंदी कृष्णकाव्य का तुलनात्मक अध्ययन दक्षिण और उत्तर भारत के बीच साहित्यिक अंतर्संबंधों को समझने की नई संभावनाएँ प्रस्तुत करता है। भारत और श्रीलंका के संदर्भ में तमिल साहित्य का महत्व इसकी भौगोलिक सीमाओं से आगे जाता है। तमिल भाषा और उससे जुड़ी धार्मिक-साहित्यिक परंपराओं ने दोनों देशों के तमिलभाषी समाजों के बीच सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखने में भूमिका निभाई है। अतः तमिल भक्ति साहित्य का अध्ययन भारतीय भक्ति आंदोलन के इतिहास के साथ-साथ भारत-श्रीलंका के साझा सांस्कृतिक संबंधों को समझने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

संदर्भ

1. श्रीमद् भागवत् महापुराण, प्रथम अध्याय, 48 वां श्लोक
2. द्विवेदी, हजारी प्रसाद, हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, 2019
3. देशिकन्, आर. श्रीनिवास Grains of gold, भारतीय विद्या भवन, 2003
4. उपाध्याय, बलदेव भागवत संप्रदाय, पृष्ठ.178, नगरिप्रचारिणी सभा काशी, सं 2010.
5. श्री चंद्रकांत, तमिल के संघकालीन साहित्य में भक्ति के विभिन्न स्वरूप, भारतीय साहित्य : अप्रैल अंक 1957
6. नाच्चियार तिरुमोलि, आंदाळ, पद सं 9/8
7. मुंशीराम, भक्ति का विकास, पृष्ठ सं.360
8. द डांस ऑफ शिवा: रिलिजन आर्ट एंड पोइट्री इन साउथ इंडिया कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली
9. डॉ चंद्रकांत, तमिल और हिंदी का भक्ति साहित्य, पृष्ठ सं. 160
10. डॉ. मालिक मोहम्मद आलवार भक्तों का तमिल प्रबंधम् और हिंदी कृष्णकाव्य, पृष्ठ सं.39
11. राजुरकर, भ. ह., बोरा, राजमल, तुलनात्मक अध्ययन भारतीय भाषाएँ और साहित्य, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1992
12. वाष्णीय, डॉ. लक्ष्मी सागर, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1995
13. श्रीवास्तव, डॉ. राजेश, हिन्दी साहित्य का अर्वाचीन इतिहास, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2016
14. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद, हिन्दी साहित्य का अतीत, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
15. मिश्र, आचार्य दुर्गा शंकर, हिन्दी साहित्य का इतिहास, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ, 1989-90
16. भारद्वाज, रामदेव, भारत और आधुनिक विश्व, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1990
17. शर्मा, डॉ मथुरा लाल एवं जैन, के. शशि, प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1992-93
18. बर्रो टी. एवं एमिनो एम. बी., द्रविड़ व्युत्पत्तिपरक शब्दकोश, क्लेरेंडन प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1984
19. मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, समाजशास्त्रीय निबंध, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 1991-92

सहायक प्राध्यापक
प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ़ एक्सीलेंस,
स्वामी विवेकानंद शासकीय महाविद्यालय, रायसेन, म.प्र.



रामसेतु, रामेश्वरम, अग्नितीर्थ और धनुषकोडी में पर्यटन – एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. चन्द्रशेखर

सारांश- रामसेतु भारत के दक्षिणी छोर पर स्थित आस्था, इतिहास और विज्ञान का एक अद्भुत संगम है। पर्यटकों के लिए यह स्थान सिर्फ एक प्राकृतिक सुन्दर नजारा नहीं, बल्कि रामायण काल की जीवंत अनुभूति है। यह चूना पत्थर के चट्टानों की एक 48 किलोमीटर लम्बी शृंखला है यहाँ समुद्र की गहराई बेहद कम (3 से 30 फीट) है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार इसका निर्माण भगवान श्री राम की वानर सेना (नल नील) ने माता सीता को रावण से छुड़ाने के लिए किया था। 15 वीं शताब्दी तक इस पुल पर पैदल चलकर श्रीलंका जाया जा सकता था, लेकिन चक्रवात के कारण यह समुद्र में डूब गया। धनुषकोडी रामसेतु का शुरूआती बिन्दु माना जाता है। यहाँ बंगाल की खाड़ी और हिन्द महासागर का मिलन होता है। यह एक “घोस्ट हाउस” (मूकशहर) है जो पर्यटकों को आकर्षित करता है। रामेश्वरम के मन्दिरों (जैसे हनुमान मंदिर) में आज भी ऐसे भारी पत्थर (फ्लोटिंग स्टोन्स-तैरते पत्थर) रखे हैं जो पानी में तैरते हैं। तमिलनाडु पर्यटन और स्थानीय आपरेटरों के माध्यम से पारदर्शी तल वाली नावों से समुद्र के नीचे डूबी चट्टानों की शृंखला को देखा जा सकता है।

रामायण में रामसेतु की कथा हिन्दू धर्म ग्रन्थों में दिव्य दृढ़ संकल्प भक्ति और इंजीनियरिंग प्रतिभा की सबसे शक्तिशाली कहानियों में से एक है। माता सीता के रावण के द्वारा अपहरण करके लंका ले जाने के बाद भगवान श्री राम के सामने समुद्र को पार कैसे किया जाए एक चुनौती आ गई। श्री राम तट पर गहन ध्यान में बैठकर समुद्र देवता से जल को दो भागों में बाँटने की प्रार्थना करने लगे। तीन दिनों की प्रार्थना के बाद भी जब कोई उत्तर नहीं मिला तो श्री राम ने अपने दिव्य धनुष से समुद्र को सुखाने की धमकी दी और उसी समय समुद्र देवता प्रकट हुए और समाधान बताया। समुद्र देव ने श्री राम को बताया - ‘तुम्हारी सेना में नल है जो दिव्य वास्तुकार विश्वकर्मा के पुत्र हैं और इन्हें अपने पिता की प्रतिभा विरासत में मिली है। वह जिस भी पत्थर को छूता है, वह पानी में तैरने लगता है। नल को पुल बनाने दे।’ नल नील के मार्गदर्शन में पूरी वानर सेना में मिलकर काम किया। पत्थर पानी को छूते ही तैरने लगे। पुल मात्र पाँच दिनों में बनकर तैयार हो गया। प्रभु श्री राम की सेना ने पुल पार किया रावण पराजित हुआ सीता को बचाया गया और रामसेतु राम के दिव्य संकल्प और वानर सेना की निश्चय सेवा की भक्ति का प्रतीक बन गया।

वाल्मीकि रामायण में रामसेतु - वाल्मीकि रामायण के युद्ध कांड में रामसेतु (जिसे नल-सेतु भी कहा जाता है) का निर्माण भगवान श्री राम की सेना द्वारा समुद्र पर लंका जाने के लिए केवल पाँच दिनों में किया गया था। इस पुल के मुख्य इंजीनियर और निर्माता वानर श्रेष्ठ नल और नील थे जिन्हें विश्वकर्मा का वंशज माना जाता है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार यह पुल कुल 100 योजना लम्बा और 10 योजना चौड़ा था (लगभग 30 से 36 मील या करीब 48 किलोमीटर)। रामायण के अनुसार पहले दिन 14 योजना, दूसरे दिन 20 योजना तीसरे दिन 21 योजना, चौथे दिन 22 योजना पाँचवें दिन 23 योजना का निर्माण हुआ था। इन पाँच दिनों में पुल के निर्माण में सामग्री के रूप में वानरों ने पहाड़ों के विशाल पत्थरों, चट्टानों आदि को प्रयोग किया था। वाल्मीकि रामायण में इसे मुख्य रूप से नल सेतु कहा गया है क्योंकि इसका पूरा रूपांकन और निर्माण

नल की देखरेख में हुआ था। पत्थरों पर राम नाम लिखकर तैरने की कथा वाद के ग्रंथों जैसे तुलसीदास के रामचरितमानस में प्रमुखता से आती है। वाल्मीकि रामायण में युद्ध कांड के श्लोकों की एक साफ श्लोक-दर-श्लोक व्याख्या दी गई है—

22.47 नलस्तु वचनं श्रुत्वा राघवस्य महात्मनः।

उवाच प्रांजलिः कृत्स्नं कार्यं मयि निबध्यताम्॥

राम के वचन सुनने के बाद नल (वानर इंजीनियर) ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कहा: “हे राम, पुल निर्माण का कार्य मुझे सौंप दें। मैं इसे पूरी तरह से करने के लिए तैयार हूँ।”

22.48 अहम् हिरण्यनाभस्य विश्वकर्मणः सुतो बलात्।

तत् कौशलं मयि सम्यग् दैवं च त्वां सहायकम्॥

“मैं दिव्य वास्तुकार, विश्वकर्मा का पुत्र हूँ। इंजीनियरिंग कौशल स्वाभाविक रूप में मुझमें मौजूद है। आपकी दिव्य कृपा के सहयोग से मैं यह कार्य पूरा कर सकता हूँ।

22.54 हरयो दारुषाखाश्च च शीलश्चैव महाबलः।

अजहः पर्वताग्राणी नलस्य निर्देशनात्॥

नल के निर्देशों का पालन करते हुए, शक्तिशाली वानरों ने संग्रह करना शुरू किया विशाल वृक्ष, विशाल शाखाएँ, विशाल चट्टानें और सम्पूर्ण पर्वत चोटियाँ। उन्होंने निर्माण के लिए आवश्यक सभी चीजें एकत्र कीं।

22.55 ताः शिलाः पर्वतग्राणी वनराणां महात्मानाम्।

समुद्रे प्रतिनिक्षिप्तः प्लवमानः समुत्थिताः॥

वानरों ने इन विशाल पत्थरों और चट्टानों को समुद्र में फेंक दिया। आश्चर्यजनक रूप से, पत्थर तैरते रहे और समुद्र की सतह पर उछलते रहे।

22.58 तेषाम् संयतताम् शिलाः सागरस्य महात्मनः।

बभूवः पथिभूतश्च च नलस्य मतिं निर्भयम्॥

विशाल सागर ने स्वयं राम की आज्ञा का पालन करते हुए पत्थरों को सही सीध में स्थापित कर दिया नल के इंजीनियरिंग कौशल के माध्यम से, उन्होंने पानी के पार एक सतत पथ बनाया।

22.59 ततो नालनियुक्तेन सागरे हरिसत्तमैः।

सेतुर्योजनाविस्थानः शतयोजनमयः॥

फिर नल के नेतृत्व में, वीर वानरों ने समुद्र पर पुल बनाया 100 योजन चौड़ा, 100 योजन लम्बा (सम्पूर्ण विस्तार) यह पौराणिक सेतुबंध (रामसेतु) की शुरुआत थी।

22.61 पञ्चसु अहनि वीरैस्तु कृतः सेतुर्महाबलयः।

षटं योजनाविस्तारः समुद्रे सलिलाचले॥

पाँच दिनों के भीतर, शक्तिशाली वानरों ने पुल निर्माण कार्य सम्पन्न कर लिया। 100 योजन लम्बाई समुद्र के पार, भूमि को लंका से मिलाते हुए। दिन के हिसाब से निर्माण की प्रगति पहले दिन 14 योजना बनाए गये, दूसरे दिन 20 योजन पूरे हुए, तीसरे दिन 21 योजन, चौथे दिन 22 योजन बनाए गए और अन्त में पाँचवे दिन 23 योजन।

22.73 “इस प्रकार, असाधारण रूप से शक्तिशाली वानरों द्वारा लंका तक पहुँचने वाला 100 योजन मिलाकर नल के नेतृत्व में वानर सेना द्वारा 5 दिन में 100 योजन की शानदार कृति तैयार हुई।

भू वैज्ञानिक अध्ययन व लोकप्रिय संस्कृति में रामसेतु और आधुनिक प्रासंगिकता

रामसेतु जिसे आदम का सेतु भी कहा जाता है, प्रवाल भित्तियों, रेत के टीलो और चूना पत्थर की चट्टानों से मिलकर बना है, जो कुछ स्थानों पर इतने उथले हैं कि पानी की गहराई मुश्किल से 1 मीटर तक पहुँचाती है। भारतीय भू वैज्ञानिक

सर्वेक्षण द्वारा किए गए भूवैज्ञानिक सर्वेक्षणों के अनुसार रामसेतु की आयु लगभग 7000 वर्ष हैं, जो रामायण काल (अनुमानित 5000 - 7000 ई. पूर्वी) से लगभग मेल खाती है। संशयवादी इसे सहस्राब्दियों से प्राकृतिक अवसादन का परिणाम मानते हैं। फिर भी विसंगतियाँ बनी रहती हैं। रामेश्वरम् के “ तैरते पत्थर” पानी से भी हल्के म्यूमिस जैसे ज्वालामुखी चट्टानें महाकथाओं में वर्णित पत्थरों से मेल खाती हैं। आधुनिक परीक्षणों से पता चलता है कि कुछ पत्थर वास्तव में हवा के छिद्र के कारण तैरते हैं। नासा के शटल रडार टोपोग्राफी मिशन 2002 ने इस श्रृंखला की छवि ली, जिससे वैश्विक स्तर पर रुचि जागृत हुई हालांकि इसने पौराणिक कथाओं का समर्थन नहीं किया, लेकिन संरचना की विशिष्टता की पुष्टि की। श्रद्धांजलुओं के लिए राम सेतु विज्ञान और शास्त्रों से जोड़ता है।

रामसेतु ने विशेष रूप से 2007 के सेतुसमुद्रम नहर परियोजना के दौरान विवादों को जन्म दिया, जिसमें तेज समुद्री भागी के लिए उथले पानी की खुदाई का प्रस्ताव था। धार्मिक भावनाओं और डुगोंग और प्रवाल परिस्थितिकी तंत्र जैसे समुद्री जीवन के लिए परिस्थितिक जोखिमों का हवाला देते हुए विरोध प्रदर्शन हुए। पुरातत्व खगोलविद पुष्कर भटनागर की पुस्तक “ भगवान राम के युग का निर्धारण” रामायण में वर्णित ग्रहों की स्थिति के आधार पर इस घटना को 5114 ई. पूर्व को दर्शाती है। आस पास के स्थलों की कार्बन डेटिंग से उस समय के आसपास मानवीय गतिविधियों की पुष्टि के संकेत मिलते हैं। “करंट साइंस” में वर्ष 2017 प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार गहराई के आकड़ों का विश्लेषण किया गया, जिसमें यह सुझाव दिया गया कि यह पुल हिमयुग के दौरान समुद्र के जलस्तर में गिरावट के समय उजागर हुए प्रागैतिहासिक भूमि पुल का अवशेष हो सकता है। पर्यावरण की दृष्टि से रामसेतु तमिलनाडु के तट को चक्रवातों से बचाता है और एक प्राकृतिक अवरोध के रूप में कार्य करता है। इसकी जैव विविधता में दुर्लभ प्रजातियाँ शामिल हैं, जो इसकी पारिस्थितिक पवित्रता को रेखांकित करती है। रमानंद सागर की रामायण टीवी श्रृंखला से लेकर अक्षय कुमार अभिनीत फिल्म 2022 रामसेतु, वर्ष 2026 में आ रही बहुप्रतीक्षित फिल्म “ रामायण पार्ट 1” नितेश तिवारी के निर्देशन में बनी फिल्म तक (नवंबर में प्रस्तावित) जो एक्शन और पौराणिक कथाओं का अपूर्ण मिश्रण प्रस्तुत करती है, रामसेतु सिनेमा जगत को मंत्रमुग्ध कर देता है। अमीश त्रिपाठी की पुस्तक “स्कियन आफ इक्वाकु” जैसी पुस्तकें नई पीढ़ियों के लिए इसे नये सिरे से प्रस्तुत करती है।

आज की दुनिया में यह हमें सतत इंजीनियरिंग की याद दिलाता है - नल और नील की पर्यावरणीय - अनुकूलन विधियों में स्थानीय सामग्री का उपयोग किया गया, जिससे पर्यावरणीय नुकसान कम से कम हुआ। जलवायु परिवर्तन से तटों का खतरा बढ़ने के साथ, रामसेतु का तटबंध सम्बन्धी भूमिका और भी महत्वपूर्ण व प्रसांगिक हो जाती है।

रामेश्वरम् - रामेश्वरम तमिलनाडू के रामनाथ पुरम् जिले में पाम्बन द्वीप पर स्थित हिन्दुओं का एक अत्यंत पवित्र स्थल है, जो देश के चार धामों और भगवान शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक है। रामेश्वरम का धार्मिक, ऐतिहासिक और प्राकृतिक दृष्टिकोण से पर्यटन में एक अत्यन्त विशेष महत्व है। उत्तर भारत में जो महत्व काशी का है वही महत्व दक्षिण में रामेश्वरम् का माना जाता है, इसलिए इसे ‘दक्षिण का काशी भी कहा जाता है। रामायण काल से जुड़ाव होने के कारण इसे धार्मिक बल मिलता है ऐसी मान्यता है कि श्री राम ने लंका पर चढ़ाई करने से पूर्व व रावण पर विजय प्राप्त करने के बाद ब्रह्मा हत्या के पाप से मुक्ति के लिए यहाँ शिवलिंग की स्थापना कर पूजा की थी। यहाँ प्रसिद्ध श्री रामनाथ स्वामी मन्दिर में दो मुख्य शिवलिंग हैं - एक “रामलिंगम (जिसे माता सीता ने रेत से बनाया था) और दूसरा विश्वलिंगम (जिसे हनुमान जी काशी से लाए थे)। मन्दिर परिसर के भीतर स्थित 22 पवित्र कुओं के पानी में अलग - अलग औषधीय गुण और धातुएँ पाई जाती हैं। इनमें स्नान करना अत्यंत शुभ माना जाता है। राधास्वामी मन्दिर का गलियारा (Corridor) अपनी द्रविड़ वास्तु कला के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। इसके गलियारे में लगभग 1200 नक्काशीदार पत्थर के खम्भे हैं। रामनाथस्वामी मंदिर अपनी भव्य संरचना, विशाल मीनारों, जटिल मूर्तिकला और गलियारों के लिए प्रसिद्ध है। जो इसे स्थापत्य कला का एक अद्भुत नमूना बनाते हैं। ऐसा माना जाता है कि रावण के वध के बाद भगवान राम प्रायश्चित के रूप में भगवान शिव की पूजा करना चाहते थे उन्होंने हनुमान को काशी से शिवलिंग लाने का अनुरोध किया। जब हनुमान जी ने लौटने में देरी की तो देवी सीता ने रेत से शिवलिंग बनाया ताकि राम अपनी प्रार्थना कर सकें। ऐसा माना जाता है कि यह वही शिवलिंग है जिसे रामलिंगम्

के नाम से जाना जाता है, अब रामनाथस्वामी मंदिर में पूजा जाता है। हनुमान जी द्वारा लाए गए शिवलिंग को विश्वलिंग कहा जाता है। मन्दिर के अन्दर 22 तीर्थम (पवित्र जल निकाय) है जहाँ भक्त अपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए स्नान करते हैं।

अग्नि तीर्थ - अग्नितीर्थ तमिलनाडु के रामेश्वरम् के पास स्थित एक अत्यन्त पवित्र और ऐतिहासिक धार्मिक स्थल है, जिसका सीधा संबंध रामायण काल से है। अग्नितीर्थ श्री रामनाथस्वामी मन्दिर के ठीक पूर्व में समुद्र पर स्थित मुख्य स्नान घाट है। मान्यता है कि रावण वध के बाद भगवान राम ने ब्रह्मा हत्या के पाप से मुक्ति पाने के लिए यहाँ स्नान किया था। दूसरी कथा के अनुसार माता सीता की अग्नि परीक्षा के बाद अग्निदेव ने अपने स्पर्श के प्रायश्चित हेतु यहाँ स्नान किया था। धार्मिक दृष्टि से अग्नितीर्थ स्थल का इतना अधिक महत्व है कि रामेश्वरम की यात्रा करने से पहले श्रद्धालु सबसे पहले अग्नि तीर्थम पर ही पवित्र डुबकी लगाते हैं।

पौराणिक कथा के अनुसार, देवी सीता ने भगवान राम के समक्ष अपनी पवित्रता सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा दी थी। अग्नि की लपटों से अप्रभावित होकर वे निर्दोष होकर निकली और अपनी निर्दोषता का प्रमाण दिया। इस दिव्य दृश्य को देखकर स्वयं भगवान अग्नि ने देवी के स्पर्श को शुद्ध करने के लिए समुद्र के जल में स्नान किया जिससे यह तट पवित्र हो गया और इसका नाम अग्नि तीर्थम पड़ा। आज अग्नि तीर्थम के पवित्र जल में स्नान करने से पापों का नाश होता है और आध्यात्मिक कार्याकल्प और शुद्धि प्राप्ति होती है। आंगतुक शान्त वातावरण में डूब सकते हैं, तटरेखा की निर्मल सुन्दरता का आनन्द ले सकते हैं और उन प्राचीन अनुष्ठानों में भाग ले सकते हैं जिन्होंने इस पवित्र स्थल को शाश्वत महत्व प्रदान किया है।

धनुषकोडी - धनुषकोडी तमिलनाडु के पवन द्वीप पर स्थित भारतीय पर्यटन के मानचित्र पर एक अत्यन्त अनूठा और महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसे “भारत की अंतिम भूमि” (Last Village of India) और “घोस्ट टाउन (Ghost town)” के रूप में जाना जाता है। वर्ष 1964 के भीषण चक्रवात में तबाह होने के बावजूद आज यह क्षेत्र धार्मिक, ऐतिहासिक और साहसिक पर्यटन के एक बड़े केन्द्र के रूप में देश की अर्थव्यवस्था और संस्कृति में अमूल्य योगदान दे रहा है। धार्मिक और पर्यटन के रूप में विकसित धनुषकोडी हिन्दू पौराणिक कथाओं और रामायण के अनुसार यह वही पवित्र स्थान है जहाँ भगवान श्री राम ने माता सीता को रावण के चुंगल से छुड़ाने के लिए वानर सेना की मदद से रामसेतु का निर्माण किया था। रामेश्वरम आने वाले श्रद्धालु अपनी तीर्थयात्रा को जब तक पूरा नहीं मानते, जब तक धनुषकोडी आकर समुद्र में पवित्र स्नान नहीं कर लेते। भारत के तमिलनाडु राज्य के रामनाथपुरम जिल में रामेश्वरम् द्वीप के दक्षिणपूर्वी कोने में स्थित एक भूतपूर्व नगर है। यह पाम्बन से दक्षिणपूर्व में और श्रीलंका में तलैमन्नार से 24 किलोमीटर (15 मील) पश्चिम में स्थित है। धनुषकोडी नगर 1964 रामेश्वरम चक्रवात में ध्वस्त हो गया था। इसे फिर नहीं बसाया गया। धनुषकोडी और भारत के मुख्य भूमि के बीच पाक जल संधि है। हिन्दू धर्म ग्रंथों के अनुसार रावण के भाई विभीषण के अनुरोध जिसके पीछे का कारण यह है कि कुछ लोग कहते हैं कि जब सीता माता को लंका से वापस लाया गया और विभीषण को लंका का नया राजा घोषित किये जाने के बाद श्री राम वापस जाने लगे तो विभीषण ने कहा कि प्रभु इस रामसेतु को आप नष्ट कर दीजिए वरना कोई भी लंका में कभी भी आ जा सकता है। उसके बाद श्री राम ने अपने धनुष के एक सिरे से सेतु को तोड़ दिया और इस प्रकार इसका नाम धनुषकोडी पड़ा। वर्ष 1964 में आए एक भयानक चक्रवात और सुनामी ने इस चलते फिरते शहर को पूरी तरह तबाह कर दिया। इस आपदा में रेलवे स्टेशन, इमारतें और एक पूरी ट्रेन बह गई थी। इसके बाद सरकार ने इसे रहने के लिए असुरक्षित घोषित कर दिया और वह वीरान खंडहर बनकर रह गया, इसलिए धनुषकोडी को भूतहा शहर (Ghost town) भी कहा जाता है।

रामसेतु को राष्ट्रीय धरोहर घोषित करने की माँग - सुप्रीम कोर्ट रामसेतु को राष्ट्रीय धरोहर घोषित करने के लिए सरकार को निर्देश देने की माँग वाली याचिका पर सुनवाई के लिए तैयार हो गई है। यह याचिका भाजपा के पूर्व सांसद सुब्रमण्यम स्वामी ने दायर की है। स्वामी ने कहा कि सरकार ने अभी तक इस मामले पर कोई फैसला नहीं लिया है वह 9 साल से

इसे टाल रही है। सरकार ने सुप्रीम कोर्ट को दिये हलफ नामों में कहा था कि रामसेतु को राष्ट्रीय धरोहर घोषित करने की प्रक्रिया पर संस्कृति मंत्रालय काम कर रही है। स्पेस मिनिस्टर, जितेन्द्र सिंह ने संसद में कहा कि रामसेतु के पुख्ता सबूत नहीं, भारत और श्रीलंका के बीच रामसेतु के पुख्ता साक्ष्य नहीं जनवरी 2023 में भाजपा सांसद कार्तिकेय शर्मा के सवाल के जवाब में यह कहा स्पेस मिनिस्टर जितेन्द्र सिंह ने आगे कहा कि जिस जगह पर पौराणिक रामसेतु होने का अनुमान है, वहाँ की सेटलाइट तस्वीरें ली गई हैं। छिछले पानी में आइलैंड और चूना पत्थर दिखाई दे रहे हैं पर यह दावा नहीं कर सकते कि यही रामसेतु है।

रामसेतु से जुड़े विवाद - रामसेतु के बारे में तीन सबसे चर्चित दावे हैं हिन्दुओं का मानना है कि इसे भगवान राम ने बनवाया है। जबकि मुस्लिमों का मानना है कि ये आदम का बनाया ब्रिज है। साइंटिफिक कम्युनिटी का मानना है कि टेक्टोनिक मूवमेंट की वजह से यहाँ समुद्र उथला हो गया। मुस्लिमों के लिए कुरान में आदम का जिक्र 25 बार हुआ है वो 90 फीट लम्बे थे और उनके पैरों के निशान आज भी आदम की चोटी पर पाये जाते हैं। ईसाई भी अब्राहमिक धर्म है इसलिए वो भी इसी कहानी पर भरोसा करते हैं। एडम्स ब्रिज ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों का दिया नाम है। इस्लाम में ऐसी मान्यता है कि जन्नत से निकाले जाने के बाद पैगंबर आदम ने सबसे पहले श्री लंका की इस चोटी पर कदम रखा था। सुप्रीम कोर्ट ने रामसेतु को राष्ट्रीय घोषित करने की मांग से जुड़ी याचिका पर केन्द्र सरकार से जवाब मांगा शीर्ष अदालत ने पूर्व राज्य सभा सांसद सुब्रमण्यम स्वामी की याचिका पर नोटिस जारी किया। जस्टिस विक्रम नाथ और संदीप मेहता की बेंच ने स्वामी की याचिका पर सुनवाई के लिए सहमति देते हुए केन्द्र से चार हफ्तों में जवाब देने को कहा। स्वामी ने अपनी याचिका में 19 जनवरी 2023 को सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिये गये आदेश का हवाला दिया है। उस समय केन्द्र ने स्वामी की ही याचिका की सुनवाई के दौरान कोर्ट को बताया था कि रामसेतु को राष्ट्रीय धरोहर घोषित करने के मुद्दे पर विचार किया जा रहा है। कोर्ट ने केन्द्र से इस पर निर्णय लेने को कहा था। और स्वामी को यह स्वतंत्रता दी थी कि वे यदि संतुष्ट न हो तो दोबारा कोर्ट आ सकते हैं। स्वामी ने नई याचिका में कहा गया है।

“19 जनवरी 2023 के आदेश के बाद उन्होंने 27 जनवरी 2023 को केन्द्र को सभी दस्तावेजों के साथ एक प्रतिनिधित्व सौंपा था। इसके बाद 13 मई 2025 को उन्होंने एक और नया प्रतिनिधित्व भेजा, लेकिन अब तक न तो उन्हें और न ही सुप्रीम कोर्ट को कोई जवाब मिला है।”

पूर्व सांसद सुब्रमण्यम स्वामी की याचिका में कहा गया कि रामसेतु एक पुरातात्विक स्थल होने के साथ-साथ करोड़ों लोगों की आस्था और श्रद्धा का केन्द्र भी है। याचिका में कहा गया है कि वैज्ञानिक और पुरातात्विक अध्ययन इस बात का प्रमाण है कि यह निर्मित संरचना है, जिसे श्रद्धालु तीर्थस्थल मानते हैं।

निष्कर्ष - रामसेतु कब और कैसे बना, यह एक ऐसा सवाल है जिसको लेकर सालों से अलग-अलग मत सामने आते रहे हैं। लेकिन उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले कुछ वर्षों में अब इस सवाल का जवाब मिल सकता है क्योंकि इस सवाल का जवाब जानने के लिए सरकार ने इस पर शोध की अनुमति प्रदान की है जिसका मकसद यह पता लगाना है कि आखिर रामसेतु बना कैसे। रामसेतु को लेकर जो रिसर्च की गयी है उसकी अनुमति केन्द्रीय पर्यटन मंत्रालय ने दी है। ये रिसर्च नेशनल इंस्टीट्यूट आफ ओशियानोग्राफी के वैज्ञानिक करेंगे। इस रिसर्च के जरिए रामसेतु से जुड़े कई अहम सवालों के जवाब ढूँढ़ने की कोशिश की जायेगी। इस रिसर्च के जरिए उन सवालों का जवाब ढूँढ़ने की भी कोशिश की जाएगी जो सालों से उठते रहे हैं, मसलन कि रामसेतु मानव निर्मित है या कुदरती। रामसेतु का जो मौजूदा स्वरूप है वह क्या प्रारम्भ से ही ऐसा है या बदलते वक्त के साथ उसमें कुछ बदलाव हुआ है। रामसेतु का अस्तित्व कितना पुराना है, क्या वाकई में रामसेतु उसी युग का है जिस युग में भगवान राम के पृथ्वी पर होने की बात कही गई है। हालांकि इन सबके बीच सरकार की तरफ से यह स्पष्ट कर दिया गया कि जो भी रिसर्च का कार्य किया जाएगा उससे रामसेतु के अस्तित्व को किसी भी तरीके का नुकसान नहीं होगा। क्योंकि इस रिसर्च का मुख्य उद्देश्य रामसेतु के बारे में जो सवाल आज की तारीख में भी अनसुलझे हैं उनका जवाब ढूँढ़ा जा सके। अन्त में रामसेतु एक घटना पूर्ण अतीत की भूवैज्ञानिक छाप है। मूलतः इसे केवल

एक राष्ट्रीय विरासत के रूप में ही परिभाषित नहीं किया गया है बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक भू-विरासत संरचना के रूप में परिभाषित किया जाना भी आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. वाल्मीकि रामायण
2. भगवान राम के युग का निर्धारण - पुष्कर भटनागर
3. 'करंट साइंस- 2017 की रिपोर्ट
4. 'स्कियन आफ इक्ष्वाकु' - अमीश त्रिपाठी
5. दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, हिन्दुस्तान में सम्बन्धित लेख व सम्पादकीय
6. योजना, कुरुक्षेत्र, प्रतियोगिता दर्पण व क्रानिकल मासिक पत्रिकाएँ

प्राचार्य, सूरदास ब्रजरानी मैमोरियल महाविद्यालय
सूरकुटी रून्कता, आगरा
मो. 9457415757



Hell and Retribution in the Elahera Rock Inscription

Ven. Beragagama Saddhananda Thero
(Sri Lanka)

Abstract- King Vasabha (66-111 CE) is regarded as a pioneer in the development of irrigated agriculture in Sri Lanka. According to the chronicles, the Elisara or Elahera canal is one of his remarkable irrigation projects. During the reign of Mahasen (274-301 CE), this canal was further developed to bring water to the Minneriya tank. Parâkramabâhu I (1153-1186 CE) of the Polonnaruwa period also contributed to the development of the Elahera anicut. Accordingly, it seems that the area currently called Elahera has been a settlement since the early period of Anuradhapura. The rock inscription found about 3 km below the ancient Elahera anicut is conspicuous in identifying the religious background of the area associated with the agricultural economy. The content of the inscription signifies that damage to an offering (a *pûjâ*) leads to suffering in hell and also to being born as dogs and crows thousands of times. There are illustrations of dogs, crows, the sun, the moon, and *prêta* (hungry ghosts) on the inscription. According to the scripts, the inscription belongs to the 8th–9th centuries. This inscription can be introduced as a document that helps identify the concept of hell prevalent within the Buddhist society of ancient Sri Lanka, as well as the mentalities of donors.

Keywords: King Vasabha, Elahera anicut, rock inscription, *prêta* (hungry ghosts), dog and crow figurines

1. Introduction- On the Matale-Giritale B12 road, located about 23 km away from Naula near the 12th milepost, the new Elahera anicut is situated. Near the spill canal connected to this anicut and



Map No. 01: Location of the Elahera Inscription

close to the Elahera forest reserve, there is an electric fence. Walking about 1 km along the gravel road that crosses this electric fence, and from there walking another 200 meters through the Elahera reserve, this rock inscription can be found. It is located on the northern-facing rock surface of a medium-sized residual hill range belonging to the gneiss rock variety (GPS coordinates: N-07°42'49.6'' E-080°47'00.9'').

2. Literature Review

Various local and foreign scholars have conducted research on the ancient irrigation works of Sri Lanka. In a study conducted by Professor Chandana Rohana Withanachchi regarding the symbols found on the stones associated with those constructions, attention was paid to the symbolic figures marked on the stone slabs used for the construction of the ancient Elahera anicut. In that study, the fish and swastika symbols found on the stone slabs were identified as symbols indicating the identity and cultural background of the *parumakas* (chiefs) and *gamikas* (gentry/village leaders) who contributed to the anicut construction (Withanachchi 2022: 119-130). In March 2022, we were fortunate to implement a project to study the symbols marked on the rock surfaces of the ancient dam and anicut-associated zone in Elahera. Through that project, we were able to record about 402 symbols marked on the stone slabs used to construct the ancient dam and anicut. Among those symbols, the swastika, fish symbol, *Srivatsa*, lotus, as well as geometric line markings of various sizes and shapes, are prominent. In addition to these symbols, several short inscriptions containing single or double letters and the names of individuals were also discovered. These can be relatively identified as representing the Polonnaruwa period. The symbols marked on the slabs used to build the canal bund appear to be older. On those slabs, mostly four-armed equal swastikas are found. Although the swastika is also marked on the slabs used for the construction of the anicut, their craftsmanship is poor. It can be hypothesized that those symbols mostly represent the Polonnaruwa period.

3. Research Methodology and Objectives

Research Problem- The core problem is to investigate the contribution of the Elahera Rock Inscription in identifying the social practice and contemporary application of the *preta* (hungry ghost) concept, which is unique to the Buddhist social space in ancient Sri Lanka.

Research Objective- The primary objective of this study is to analyze the contemporary religious background using the symbolic meanings contained in the Elahera Rock Inscription. Another objective is to read, interpret, and socialize this unpublished inscription.

Research Methodology- To gather data and evaluate the results, a cultural-historical theoretical framework was utilized. The primary approach employed was qualitative methodology, utilizing literature reviews, field observations, structured interviews, and case studies.

Significance of the Study- When reconstructing the cultural landscape associated with the ancient Elahera village, it is vital to identify contemporary political, economic, religious, social, and cultural values. This study aims to produce new knowledge regarding religious and cultural values based on the Elahera Rock Inscription and its associated monastic landscape.

4. Discussion and Epigraphical Analysis- This inscription, which belongs to the 8th–9th centuries CE, consists of four lines of letters. The length of the inscription is approximately 106 cm, its width is 45 cm, and the distance between the lines is about 4 cm. The dimensions of a letter can be

calculated as 8 cm in length and 4 cm in width.

At the beginning of the inscription, there is an illustration of a dog (sunakha), depicted facing away from the rock inscription. Slightly below that, towards the left, an illustration of a crow (kaputa) can be seen. Between these two illustrations, the sun and moon symbols depicted inside a circle can be observed. Although these three symbols could be identified through reconstruction, the surface of the rock on which they were carved has been heavily eroded. Furthermore, a line drawing that can be assumed to be a hell-bound creature (*preta* or hungry ghost) is well-preserved at the end of the inscription.



Diagram number 01: Symbols depicted in the article

About 6 meters from the inscription, towards the south-eastern direction on the southern side of the rock, there is a fish symbol (GPS: N- 07°42'49.7'' E- 080°47'00.7''). About 4 meters away from that fish symbol, another identical fish symbol can be seen (GPS: N- 07°42'49.8'' E- 080°47'00.8''). On the rock where these symbols are marked, quarry cuts or split marks separating stone slabs can be seen in several places. Accordingly, it appears that stone pieces required for some construction were obtained from this location.

The fish symbol is also heavily marked on the stone slabs used for the construction of the ancient Elahera anicut. Therefore, if it can be assumed that the stone slabs required for the anicut construction were obtained from this location, the pair of fish symbols marked on the upper edge of the rock surface can be thought to have been marked by the stone masons engaged in the anicut construction.

Estampage No. 01, 02: Fish Symbol Line

Figure No. 02, 03: Fish Symbol

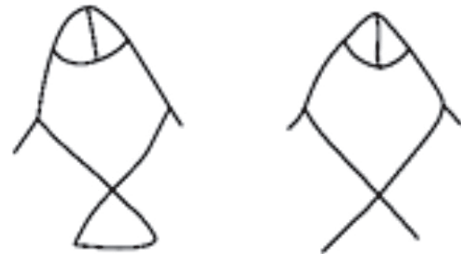
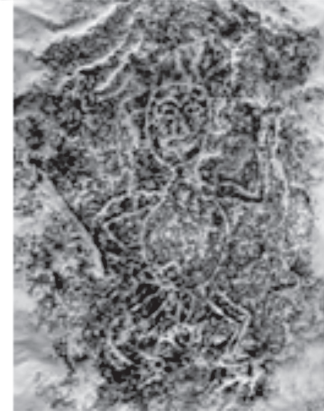
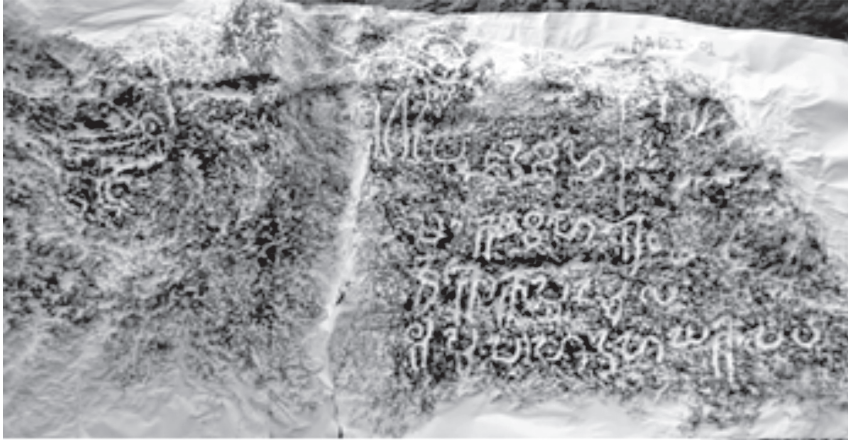




Photo No. 01: Slabs with quarry cut marks
Estampage No. 03: Elahera Girilipiya



Inscription Text

- **Line 1:** *pudemha*
- **Line 2:** *yi kîmha a(pâ)*
- **Line 3:** *duke kavudu ba*
- **Line 4:** *lu vuvâha dahasavata*

Literal Sinhala Translation from Inscription

“මුජාවක් යැයි කියමු. (එයට හානි කරන්නෝ) අපා දුකටත්, දහස් වාරයක්
බලේලත් බළලුන් (බලේලත් කපුටත්) වන්නාහ.”

English Translation of Meaning

“”We say this is an offering. [Those who violate or damage it] shall suffer the
miseries of hell and also be born as dogs and crows a thousand times.””

Commentary- In this inscription, an author is not explicitly mentioned, nor is there any reference to the specific object being donated. A first-person plural expression has been used as “*pudemha yi kîmha*” (“we say we make an offering”). Accordingly, it appears to be a sacred offering. This might mean that it refers to a donation made by devotees to a monastery located near the rock where the inscription is carved.

Ruins of several architectural structures exist about 600 meters southwest of the rock inscription. In the center of one construction, which can be assumed to be an image house (*pilima ge*), a pit of about 3 meters depth has been dug. Bricks, tiles, and stone remains can be observed around it (GPS: N- 07°42’41.6” E- 080°47’01.1”). About 30 meters from that construction, there is another construction (GPS: N- 07°42’40.8” E- 080°47’00.4”), and about 6 meters from there, scattered remains of a similar structure exist (GPS: N- 07°42’40.3” E- 080°47’00.0”).



Photo No. 02, 03: Monuments in the grip of unauthorized excavators

6. Comparative Study of Epigraphical Curse Formulas- Although these structures have been dug and destroyed by unauthorized treasure hunters today (Photographs No. 02 and 03), the inscription warns that those who damage them will be reborn as dogs and crows for thousands of lifetimes, and will also suffer in hell. These can be identified as curse formulas (*shâpa pâtha*). From around the 8th century, many such curse formulas can be seen applied in Sri Lankan rock inscriptions.

For example, in the **Katagamuwa Rock Inscription**, it is recorded as:

*“”mu galhi kotavâ kusalata pamuGukota dun tænata bâdhâ ka7a kenek æta
niraya namuvâha kavu
u balu vûvâhayi” (Karunaratne 1966: 145).”*

- > *“Meaning: “If there be any who obstructs this gift which has been inscribed on this rock and offered for meritorious purposes, they shall go to hell and become crows and dogs.””*

In this inscription, too, it is stated that those who damage the donation will fall into hell and become dogs and crows. The sentence structure of the Katagamuwa inscription is in every way identical to the contents of the Elahera anicut inscription we present.

Furthermore, in the **Rambewa Inscription**, which is attributed to King Mahinda IV (10th century):

*“”mæyamavul ka7a kenek kavu
u balu vûvâyi” (Wickremasinghe 1985: 65).”*

- > *“Meaning: “Those who disrupt this shall become crows and dogs.””*

An inscription at the **Gangarama Temple in Lewella**, Kandy, belonging to the Kandyan period states:

*“”...lobhayen pæhær gata kenek ætnam kâla prætâdîn men maha duk viòda
amamaha narakâdî dukata patvana bava dakvayi...” (Jayawardhana, year
of printing not stated: 10).”*

- > *“Meaning: “...if there are any who greedily snatch this, they shall suffer great misery like crows and pretas (hungry ghosts) and fall into the eight great hells...””*

Although becoming dogs and crows is mentioned in many inscriptions, the Elahera inscription states that they will become dogs and crows **“a thousand times”** (*dahasavata*). This is a rare and unique phrasing not found in other inscriptions. Apart from this, similar curse formulas can be observed in several other inscriptions found in various provinces of Sri Lanka (Kulatunga 2005: 19).

7. The Buddhist Concept of Hell and Miserable Realms

The Elahera inscription specifically mentions falling into the suffering of hell (*apâ / niraya*). To visually communicate the nature of the suffering of hell, a deformed human figure has been used.

A wealth of information regarding the concept of hell is available in Buddhist literature. In those sources, four main realms of misery (*apâ / niraya*) are mentioned:

1. **Niraya** (Hell)
2. **Tiracchâna** (Animal realm)
3. **Preta** (Hungry ghosts)

4. Asura (Demons/Titans) (Abhidharmartha Pradipika Vol. I, 2004: 352)

Since we find information about the concept of Niraya in the *Pathika Sutta* of the *Digha Nikaya* etc. (Digha Nikaya 3, 2548: 3-57), it is clear that the Buddhist concept of Apaya and Niraya is extremely ancient. However, this concept enters Sri Lankan rock inscriptions during the late Anuradhapura period and the Polonnaruwa period.

In addition to the Elahera anicut inscription, the word “*apaya*” is also used in the inscription found on the stone pavement of **Jetavana**. An inscription belonging to King Parakramabahu I of the Polonnaruwa period also mentions “*apaya*” (Wickremasinghe 1985: No 41, 8). Apart from this, there is also a mention of *apaya* in the **Galpotha Inscription** of King Nissankamalla, which also belongs to the Polonnaruwa period (ibid: No 17, 7).

The Realm of Niraya (Hell)- It is called “*Niraya*” because beings are subjected to extreme suffering there without experiencing even a moment’s pleasure as short as the blink of an eye. The cause of falling into hell is stated as performing unwholesome deeds like killing living beings, being deluded by unwholesome thoughts of greed (*lobha*), hatred (*dvesha*), and delusion (*moha*) without knowing the consequences of wholesome and unwholesome actions. Beings are born in different hells according to the unwholesome karma they have accumulated. There are eight such main hells: **Sanjiva, Kalasutra, Sanghata, Raurava, Mahaurava, Tavana, Mahatavana, and Avici** (Abhidharmartha Pradipika 2004: 352-53).

Apart from these, through books like the *Jinavacana Koshaya* (Jinavacana Koshaya Part I 1956: 218-219) and *Sri Saddharmovada Sangrahaya* (1925: 405-416), one can understand how the concepts of Apaya and Niraya developed.

The Eight Great Hells:

1. Sanjiva: This is the hell where beings who committed sins like killing living beings are born. It is situated 15,000 yojanas below this great earth. The lifespan of the beings born in this hell is 500 years in hell-time. One day there is said to be equal to 900,000 years of human lifespan. Thus, 30 such days make one month, and twelve months make one year.

2. Kalasutra: It is said that beings who misbehave towards parents, teachers, and preceptors, as well as those who hold wrong views, are mostly born in this hell. This hell is situated 15,000 yojanas deeper than the Sanjiva hell. Its lifespan is 1,000 years in hell-time. One day there is equal to 4 days of Sanjiva hell.

3. Sanghata: This is a hell where hunters, fishermen, and those who earn a living by slaughtering cattle, goats, chickens, etc. are born. This hell is situated 15,000 yojanas deeper than Kalasutra. The lifespan here is 2,000 years. One day there is equal to 4 days of Kalasutra hell.

4. Raurava: This hell is situated 15,000 yojanas deeper than Sanghata hell. It is the hell where beings who harm and torture other living beings, and those who live by deceiving others like magicians, tricksters, etc., are mostly born. Its lifespan is 4,000 years in hell-time. Four days of Sanghata hell is equal to one day of Raurava.

5. Mahaurava: This is the hell where individuals who snatch properties belonging to the Triple Gem (*Three Refuges*), and those who destroy public rest houses (*ambalam*), etc., are born. It is situated 15,000 yojanas deeper than Raurava. The lifespan of the hell-beings living in

this hell is 8,000 years in hell-time. One day there is equal to four days of Raurava.

6. Tapana: This is a hell where individuals who engage in misconduct like killing and hold wrong views such as “there is no bad consequence of sinful deeds; heaven and hell do not exist anywhere else except on this human earth,” are born. Situated about 15,000 yojanas below Mahaurava hell, the lifespan of this hell is 16,000 years in hell-time. One day there is equal to four days of Mahaurava.

7. Mahatapana (Pratapana): It is a realm where individuals who hold strong wrong views like “there is no Buddha, there is no Dhamma, there is no Sangha, there is no Noble Sangha” are born. This hell is situated 15,000 yojanas below Tapana hell. Its lifespan is half an *antarakalpa*. (An *antarakalpa* is the period of time taken for the human lifespan to gradually increase from 10 years to an infinite number of years (*asankheyya*), and then decrease back to 10 years).

8. Avici: This is the realm of birth for individuals who killed parents or Arahants, shed the blood of a Buddha, caused schism in the Sangha, or destroyed Sangha property, monasteries, dagobas, Bodhi trees, images, etc. It is situated 15,000 yojanas below Tapana hell. The lifespan of this hell is one *kalpa*. It is called *Avici* because there is no interval (*avici*) in suffering.

Among these eight great hells, each hell has 4 gates, and at each gate there are 16 subsidiary hells known as *Ususpat* (*Osuspat*). Accordingly, when all the *Ususpat* hells and the eight great hells are added together, there are one hundred and thirty-six (136) hells in total.

The Realm of Animals (Tiracchâna)- Those who go horizontally (bent) instead of upright like humans are called *tiracchâna* (animals). They belong to the animal womb (*yonî*). They have no specific designated place. They are called *tiracchâna* in the sense that they are excluded from the path-and-fruit (*marga-phala*) and go downwards.

The Realm of Preta (Hungry Ghosts)

Beings who are completely devoid of any comfort or pleasure are called *preta*. These *pretas* are divided into four main types:

1. **Paradattûpajîvî** (Beings who live on what is given by others)
2. **Khuppipâsika** (Those who suffer from extreme hunger and thirst)
3. **NijjhamataGhika** (Those consumed by burning thirst/craving)
4. **Kâlakañjika** (Kalakanjika asuras)

Apart from these, another 12 classes of *pretas* are also mentioned:

1. **Kunapâsa** (Feeders on corpses/decaying matter)
2. **Gûthakhâdaka** (Dung-feeders)
3. **Aggijalamukha** (Spitting fire from the mouth)
4. **Sûcimukha** (Needle-mouthed)
5. **TaGhatthita** (Afflicted by thirst)
6. **Sunijjhamaka** (Severely burnt)
7. **Sattvanga** (With bodies like animals/beings)

8. Pabbatanga (Having mountain-like bodies)

9. Ajagara (Python-like)

10. Vemânika (Living in mansions but experiencing both pleasure and pain)

11. Mahiddhika (Of great power)

12. Vantâsa (Feeders on vomit)

All of these belong to the *preta* womb (*yonî*), and they have no specific designated place to live (Abhidharmartha Pradipika 2004: 352-355).

The Realm of Pisaca (Asura)

The term '*Pisaca*' carries the meaning of *preta* (hungry ghost), *bhuta* (spirit), or harmful being (Alagiyawanna 2004: 492). It is also mentioned that *Pisaca* is a type of *Kumbhanda* (Siri Liyanage, year of printing not stated: 1002). These facts show that this realm is a state of very miserable birth. However, finding a distinct '*Pisaca* realm' through literary sources is difficult. Instead of a *Pisaca* realm, most sources list the *Asura* realm as mentioned before.

8. Discussion and Summary- Although the Elahera anicut rock inscription is very small, the meaning expressed by it spans a very wide range. It can also be identified that the drafter of the inscription has succeeded in intensifying the expressed meaning through the figures corresponding to the content. Accordingly, it is evident that damaging or snatching something donated to a certain religious institution was considered a highly sinful act.

Snatching such property and damaging it was considered a great unwholesome deed that causes one to fall into hell and also be born in animal states as dogs and crows. This clearly shows that Buddhist people detested being born in such animal states. This concept, built on the *Sanghika* (property of the Sangha) system, was utilized to protect property. Accordingly, it can be stated that this inscription is extremely helpful in studying the religious concepts prevalent in contemporary society.

Acknowledgments

We respectfully offer our gratitude to Mr. D. M. Tissa Ekanayake, who serves as the watchman of the Elahera anicut project and informed us about this inscription, and to the assisting research team including Chamod Sandaruwan, Yamuna Seneviratne, Damayanthi Rajapaksha, Samanmali Jayarathne, and Hiruni Herath who supported the documentation of the inscription.

References

- Abhidharmartha Pradipika. Ed. Yagoda Dharmaprabha Nahimi, Vol. I, 2004, Colombo: M. D. Gunasena and Company.
- Alagiyawanna, P., 2004. *Sanskrit Sinhala Dictionary*, Maradana: Suriya Publishers.
- Kulatunga, T. G., 2005. *Epigraphical Curse Formulas (Abhilekhana Shapa Patha)*, Maharagama: Tharanjee Printers.
- Jayawardhana, Somapala (year of printing not stated). *The Rock Inscription of Lewella Gangaramaya in*

- Kandy*, Shila Lipi Sangrahaya (Inscription Collection), Second Volume, Colombo: Department of Archaeology.
- Jinavacana Koshaya, 1956. Ed. Mavitthara Sri Revata Thero, Colombo: Lankaputra Press.
- Withanachchi, Chandana Rohana. 2022. *The Socio-Archaeological Background Revealed by Symbols Found on Stones Associated with Ancient Irrigation Works*, Bhupati Academic Journal, Volume One, Issue One, Ed. Prof. Anura Manatunga, Colombo: Department of Archaeology.
- Karunaratne, Saddhamangala. 1966. *Epigraphia Zelanica*, Vol. V, Archaeological Survey of Ceylon, London: Oxford University Press.
- Wickremasinghe, D. M. de Z. 1928 (1985 Reprint). *Epigraphia Zelanica*, Vol. II, Archaeological Survey of Ceylon, London: Oxford University Press.

Senior Lecturer and the Dean of the Faculty of Buddhist Studies
Buddhist and Pali University of Sri Lanka



Leading with Sīla: Applying the Buddhist Five Precepts as an Ethical Framework for Human Resource Management and Organizational Well-being

Ven Godamune Chullanaga Thero

Abstract- Human resource management increasingly carries responsibility for employee dignity, trust, safety, and wellbeing, yet organizational ethics is often reduced to compliance rules that respond only after misconduct occurs. This conceptual paper examines how the Buddhist Five Precepts, or *pañca-sīla*, can be translated into an ethical framework for human resource management without requiring religious adherence. A qualitative conceptual review was conducted by bringing early Buddhist ethical teachings, especially the Five Precepts and the employer and employee duties in the Sigālovāda Sutta, into dialogue with research on ethical leadership, employee wellbeing, sustainable human resource management, and workplace spirituality. The analysis identifies five practical HRM principles: non-harm in working conditions and people management; respect for property, time, data, and fair reward; responsible conduct in relationships of power and sexuality; truthful and transparent communication; and clarity of judgement in relation to intoxicants, impairment, and decision making. These principles can inform recruitment, performance management, grievance handling, occupational health, reward systems, leadership development, and organizational conduct. The paper argues that *sīla* is most useful when treated as a discipline of responsible conduct supported by fair institutions rather than as a private moral demand placed on employees. In the culturally connected contexts of India and Sri Lanka, the framework offers a locally meaningful contribution to ethical HRM while remaining suitable for plural workplaces when expressed through universal values such as dignity, honesty, safety, fairness, and self-restraint.

Keywords: Buddhist ethics; Employee wellbeing; Five Precepts; Human resource management; Organizational ethics

1. Introduction- Human resource management is no longer concerned only with staffing, pay, and administrative control. It also shapes whether employees experience dignity, safety, fairness, voice, and meaningful work. Contemporary HRM research has therefore moved toward employee wellbeing and sustainable forms of people management, while also recognizing that performance oriented systems can create pressure, insecurity, and competing outcomes for workers (Guest, 2017; Peccei & Van De Voorde, 2019; Bhoir & Sinha, 2024). Ethical leadership research reaches a similar conclusion: rules matter, but employees also learn from the conduct, choices, and example of leaders (Brown et al., 2005).

This concern is especially relevant in South Asian organizations where imported management systems

operate alongside long standing ethical and cultural traditions. Buddhism originated in the Indian cultural world and developed a major institutional and social presence in Sri Lanka. The movement of Buddhist ideas between these settings forms part of a long history of cultural exchange (Gombrich, 2006). Yet a local ethical tradition does not automatically become an organizational practice. Research on Sri Lankan sustainability reporting, for example, found limited visible use of Buddhist principles despite their cultural presence, suggesting a gap between inherited values and formal management systems (Abeydeera et al., 2016). The present paper addresses that gap through the concept of *sīla*, usually translated as moral or ethical conduct. It focuses on the Five Precepts, the basic ethical training undertaken by Buddhist laypeople. The study asks: How can the Five Precepts be translated into a practical and inclusive framework for human resource management and organizational wellbeing? Its objectives are to interpret each precept in relation to current HRM responsibilities, identify its likely contribution to employee and organizational wellbeing, and propose safeguards for applying Buddhist ethics in religiously diverse workplaces.

2. Buddhist Ethical Foundations for People Management- In Buddhist thought, *sīla* is not simply obedience to an external code. It is a practice of restraint and responsibility that supports trust, mental clarity, and the reduction of harm. The Five Precepts are commonly expressed as training to refrain from taking life, taking what is not given, sexual misconduct, false speech, and intoxicants that lead to heedlessness (Harvey, 2000; Keown, 2005). The term *sikkhâpada*, or training principle, is important because it places emphasis on cultivated conduct rather than punishment alone. Recent conceptual work has likewise treated the Five Precepts as a basis for self regulation, responsible decisions, and prosocial behaviour in workplaces (Zhao, 2026). The Sigâlovâda Sutta adds a directly relevant social dimension. In its account of reciprocal duties, an employer is advised to assign work according to ability, provide wages and support, care for workers in sickness, share benefits, and allow appropriate leave. Employees in turn are expected to work responsibly and protect the interests and reputation of the employer (DN 31; Walshe, 1995). These duties show that Buddhist ethics does not place the whole burden of virtue on workers. Responsibility is reciprocal and includes the conditions created by those who hold power. This approach has parallels with sustainable and common good HRM, which gives greater weight to human dignity, cooperation, transparency, and long term social value (Kramar, 2014; Aust et al., 2020). It also fits research showing that ethical leadership and supportive HR practices can contribute to employee wellbeing (Kalshoven & Boon, 2012; Bhoir & Sinha, 2024). The distinctive contribution of the Buddhist framework is to connect institutional responsibility with disciplined conduct at the individual level.

3. Methodology- This paper uses a qualitative conceptual review. It does not test causal relationships or report primary field data. Instead, it interprets selected early Buddhist ethical teachings and compares their normative concerns with established and recent literature in HRM, ethical leadership, workplace spirituality, and employee wellbeing. Primary conceptual attention is given to the Five Precepts and the employer and employee relationship in the Sigâlovâda Sutta. Secondary literature was selected for its relevance to Buddhist management, ethical leadership, sustainable HRM, and wellbeing oriented HR practices. The analysis followed three steps. First, each precept was interpreted in terms of the human harm or risk it seeks to restrain. Second, that ethical concern was translated into current HRM functions such as recruitment, reward, performance management, employee relations, occupational health, and leadership conduct. Third, the likely wellbeing contribution and the risks of misapplication were considered. The approach is interpretive rather than systematic, so

the proposed framework should be understood as a basis for future empirical testing.

4. The Five Precepts as an HRM Framework-

Table 1 summarizes the translation used in this paper before each precept is discussed in detail.

Table 1. The Five Precepts translated into HRM practice

Precept	Ethical principle	Illustrative HRM practices	Wellbeing contribution
First precept	Prevent harm	Safety, workload, anti bullying, humane discipline	Physical and psychological safety
Second precept	Respect what is not given	Fair pay, data privacy, time and resource stewardship	Trust and fairness
Third precept	Responsible sexual conduct	Consent, harassment prevention, conflict rules	Dignity and inclusion
Fourth precept	Truthful speech	Honest recruitment, appraisal, feedback, employee voice	Trust and predictability
Fifth precept	Avoid heedlessness	Fitness for duty, support, careful high risk decisions	Clear judgement and safety

4.1 Non-harm: protecting life, health, and dignity- The first precept is commonly associated with refraining from taking life, but its organizational value is wider when read through the principle of non-harm. HRM decisions influence physical safety, mental health, workload, bullying, job insecurity, and the treatment of vulnerable workers. A *śīla* based approach therefore asks whether the design of work avoids foreseeable harm and whether management has taken reasonable steps to protect dignity and health. This includes safe workplaces, manageable workloads, anti bullying procedures, humane restructuring, access to support, and fair treatment during discipline or dismissal. Such an interpretation is consistent with wellbeing oriented HRM, which treats employee health as a substantive outcome rather than a by product of performance (Guest, 2017; Bhoir & Sinha, 2024). It also prevents a narrow reading of the precept. Non-harm is not achieved merely because an organization avoids physical injury. Chronic humiliation, coercive supervision, or persistent overload can also damage employees. The HR implication is preventive: identify harm before it becomes a grievance or a health crisis.

4.2 Not taking what is not given: fairness, resources, and trust- The second precept can be translated into organizational life as respect for what properly belongs to others. In HRM this includes wages, benefits, working time, intellectual contributions, personal information, and organizational resources. Ethical problems arise when employers withhold earned pay, use unpaid labour unfairly, misuse employee data, or claim credit for another person's work. Employees also have duties regarding theft, fraud, confidential information, expense claims, and misuse of organizational property. This precept supports a culture of stewardship rather than opportunism. Fair pay structures, transparent

benefits, accurate time records, data privacy, conflict of interest rules, and clear ownership of work products can make the principle concrete. Trust grows when both employees and managers see that resources are handled consistently and that power is not used to appropriate another person's time, money, or contribution.

4.3 Responsible sexual conduct: boundaries, consent, and power- The third precept concerns sexual misconduct. In a workplace, its strongest relevance lies in boundaries, consent, and the ethical use of power. HRM must address sexual harassment, coercion, retaliation, favouritism linked to intimate relationships, and situations in which a person cannot give free consent because of dependency or authority. A Buddhist framing adds the moral question of whether desire is being pursued at another person's expense, but policy must remain grounded in clear rights and professional standards. The practical requirements are familiar: accessible reporting channels, protection from retaliation, impartial investigations, confidentiality, manager training, and clear rules on relationships that create conflicts of interest. The framework should never be used to police lawful private relationships or impose a religious sexual code. Its legitimate organizational purpose is to protect dignity, consent, fairness, and safety where work and power intersect.

4.4 Truthful speech: communication, appraisal, and employee voice

The fourth precept is especially relevant to HRM because organizations depend on communication. False or misleading statements can enter recruitment advertisements, performance reviews, promotion decisions, disciplinary processes, internal investigations, and public claims about employees. Truthful speech requires more than avoiding deliberate lies. It also calls for accuracy, responsible disclosure, and communication that does not manipulate people through fear or concealment.

This principle supports realistic job information, evidence based appraisal, transparent criteria for promotion, honest feedback, protected whistleblowing, and careful communication during organizational change. Ethical leadership research shows that leaders influence behaviour by modelling and reinforcing expected conduct (Brown et al., 2005). A manager who demands honesty while manipulating information weakens the ethical climate. By contrast, truthful and respectful communication can strengthen trust and employee voice.

4.5 Avoiding heedlessness: clear judgement and responsible conduct- The fifth precept concerns intoxicants and the heedlessness associated with them. In HRM, a literal workplace application includes substance related safety risks, fitness for duty, support for employees facing dependency, and rules for safety sensitive roles. Its wider ethical meaning concerns impaired judgement. Leaders can become heedless through alcohol or drugs, but also through anger, status, group pressure, or unexamined incentives that make harmful decisions seem normal. The appropriate HR response is not moral surveillance. Organizations need proportionate substance policies, confidential access to treatment, safety procedures, and decision processes that slow down high risk choices. This is compatible with Buddhist management research that emphasizes mindfulness, non-harm, compassion, and disciplined judgement (Kovács, 2014). The principle is most constructive when it combines accountability with support rather than shame.

5. From Personal Virtue to Organizational Wellbeing- The Five Precepts become useful for HRM only when they are translated from private virtue into fair organizational systems. A useful model has three levels. The first is personal conduct: employees and leaders cultivate restraint, honesty, responsibility, and clarity. The second is HR practice: recruitment, reward, safety, appraisal,

grievance handling, and leadership development are designed to reduce opportunities for harm and abuse. The third is ethical climate: people see that standards apply consistently, including to senior managers. This movement from individual conduct to institutional practice is important because ethics fails when organizations praise virtue while rewarding behaviour that contradicts it. The framework also has a wellbeing logic. Non-harm protects health and dignity. Respect for what is not given supports distributive fairness and trust. Responsible sexual conduct protects safety and equality. Truthful speech supports voice and predictable relationships. Clear judgement reduces impulsive or impaired decisions. These mechanisms correspond with current HRM research in which supportive practices, ethical leadership, and positive employment relationships are linked with healthier employee experiences (Guest, 2017; Kalshoven & Boon, 2012; Bhoir & Sinha, 2024). Workplace spirituality research further suggests that meaning and ethical orientation can contribute to wellbeing when they are not used instrumentally (Pawar, 2016). Buddhist management scholarship also warns against turning spiritual language into another tool for control. Vu and Gill (2019, 2023) emphasize responsibility, meaningful work, and skilful leadership, while Fry and Vu (2024) caution that apparently spiritual leadership can still serve ego centred or instrumental ends. For HRM, this means that *sīla* should not be presented as a way to make employees more obedient or productive. Its ethical test is whether power itself becomes more responsible. This point matters in India and Sri Lanka. Buddhist ideas form part of a shared regional history, but contemporary workplaces are religiously and philosophically plural. A responsible application should therefore use inclusive organizational language such as safety, dignity, fairness, consent, honesty, stewardship, and clear judgement. Participation in explicitly Buddhist activities should remain voluntary. In this form, the Five Precepts can provide a culturally rooted ethical lens without making religious identity a condition of employment. Evidence from Buddhist approaches to corporate sustainability suggests that compassion, moderation, resilience, and stakeholder care can be joined to modern management concerns (Suriyankietkaew & Kantamara, 2019), while Sri Lankan evidence also shows that local ethical traditions can be displaced by standardized corporate systems if they are not consciously translated into practice (Abeydeera et al., 2016).

6. Practical Implications for HRM- For practitioners, the framework can be incorporated into existing systems rather than introduced as a separate religious code. Recruitment can test honesty and respect without discrimination. Induction can explain standards on safety, resources, harassment, communication, and impairment. Performance management can include conduct as well as output. Reward systems can be checked for incentives that encourage deception, excessive work, or harmful competition. Grievance systems can protect truth telling and confidentiality. Leadership development can use realistic ethical dilemmas to examine how power affects judgement. Organizations can also track whether the framework is working through ordinary HR indicators: safety incidents, sickness absence, employee complaints, grievance resolution time, pay anomalies, harassment reports, turnover, trust surveys, and employee perceptions of voice and fairness. Such measures do not prove the presence of *sīla*, but they prevent ethical language from becoming symbolic. The aim is a workplace where ethical restraint is visible in decisions and structures.

7. Limitations and Future Research- This study is conceptual and does not establish that applying the Five Precepts will improve wellbeing or performance. The interpretation also draws mainly on Theravāda oriented sources and selected management literature. Future research could test the framework through interviews with HR managers and employees in India and Sri Lanka, comparative

case studies, or survey measures linking precept informed HR practices with trust, psychological safety, burnout, turnover intention, and perceived fairness. Research should also examine how non Buddhist employees understand the framework and whether secular translation changes its ethical meaning.

8. Conclusion- The Buddhist Five Precepts offer a concise ethical vocabulary for human resource management when they are interpreted as training in responsible conduct and supported by fair institutions. Their organizational relevance can be expressed through five linked commitments: prevent harm, respect what belongs to others, protect consent and professional boundaries, communicate truthfully, and preserve clear judgement. These commitments address central HRM concerns from occupational safety and reward fairness to harassment prevention, employee voice, and leadership accountability.

The framework is particularly meaningful for a conference concerned with India and Sri Lanka because it draws on an ethical tradition that connects the two societies historically while addressing present organizational questions. Its value, however, depends on careful use. Sila should guide the responsible exercise of power rather than become a religious test for employees. Applied in inclusive language and assessed through actual HR practices, the Five Precepts can contribute to an approach to organizational wellbeing in which ethical conduct, human dignity, and sustainable performance are treated as connected responsibilities.

References

- Abeydeera, S., Tregidga, H., & Kearins, K. (2016). Sustainability reporting: More global than local? *Meditari Accountancy Research*, 24(4), 478–504. <https://doi.org/10.1108/MEDAR-09-2015-0063>
- Aust, I., Matthews, B., & Müller-Camen, M. (2020). Common good HRM: A paradigm shift in sustainable HRM? *Human Resource Management Review*, 30(3), 100705. <https://doi.org/10.1016/j.hrmr.2019.100705>
- Bhoir, M., & Sinha, V. (2024). Employee well-being human resource practices: A systematic literature review and directions for future research. *Future Business Journal*, 10, Article 95. <https://doi.org/10.1186/s43093-024-00382-w>
- Brown, M. E., Treviño, L. K., & Harrison, D. A. (2005). Ethical leadership: A social learning perspective for construct development and testing. *Organizational Behavior and Human Decision Processes*, 97(2), 117–134. <https://doi.org/10.1016/j.obhdp.2005.03.002>
- Fry, L. W., & Vu, M. C. (2024). Leading without a self: Implications of Buddhist practices for pseudo-spiritual leadership. *Journal of Business Ethics*, 190(1), 41–57. <https://doi.org/10.1007/s10551-023-05416-x>
- Gombrich, R. (2006). *Theravada Buddhism: A social history from ancient Benares to modern Colombo* (2nd ed.). Routledge.
- Guest, D. E. (2017). Human resource management and employee well-being: Towards a new analytic framework. *Human Resource Management Journal*, 27(1), 22–38. <https://doi.org/10.1111/1748-8583.12139>
- Harvey, P. (2000). *An introduction to Buddhist ethics: Foundations, values and issues*. Cambridge University Press.
- Kalshoven, K., & Boon, C. T. (2012). Ethical leadership, employee well-being, and helping: The moderating role of human resource management. *Journal of Personnel Psychology*, 11(1), 60–68. <https://doi.org/10.1027/1866-5888/a000056>
- Keown, D. (2005). *Buddhist ethics: A very short introduction*. Oxford University Press.

- Kovács, G. (2014). The theoretical foundation of Buddhist management practices. *Journal of Management Development*, 33(8/9), 751–762. <https://doi.org/10.1108/JMD-09-2013-0120>
- Kramar, R. (2014). Beyond strategic human resource management: Is sustainable human resource management the next approach? *The International Journal of Human Resource Management*, 25(8), 1069–1089. <https://doi.org/10.1080/09585192.2013.816863>
- Pawar, B. S. (2016). Workplace spirituality and employee well-being: An empirical examination. *Employee Relations*, 38(6), 975–994. <https://doi.org/10.1108/ER-11-2015-0215>
- Peccei, R. E., & Van De Voorde, K. (2019). Human resource management, well-being and performance research revisited: Past, present, and future. *Human Resource Management Journal*, 29(4), 539–563. <https://doi.org/10.1111/1748-8583.12254>
- Suriyankietkaew, S., & Kantamara, P. (2019). Business ethics and spirituality for corporate sustainability: A Buddhism perspective. *Journal of Management, Spirituality & Religion*, 16(3), 264–289. <https://doi.org/10.1080/14766086.2019.1574598>
- Vu, M. C., & Gill, R. (2019). ‘Letting go of the raft’: The art of spiritual leadership in contemporary organizations from a Buddhist perspective using skilful means. *Leadership*, 15(3), 360–380. <https://doi.org/10.1177/1742715018761931>
- Vu, M. C., & Gill, R. (2023). Are leaders responsible for meaningful work? Perspectives from Buddhist-enacted leaders and Buddhist ethics. *Journal of Business Ethics*, 187(2), 347–370. <https://doi.org/10.1007/s10551-022-05293-w>
- Walshe, M. (Trans.). (1995). *The long discourses of the Buddha: A translation of the Dīgha Nikāya*. Wisdom Publications.
- Zhao, Y. (2026). Buddhist moral practice and behavioural transformation: The role of the Five Precepts (Pañca-sīla). *The Journal of International Buddhist Studies College*, 12(1), 323–341.

Department of Pali and Buddhist Studies
Banaras Hindu University (BHU), Varanasi (221005)



Buddhism, Tamil Heritage and Ramayana Traditions: Three Cultural Pillars of India–Sri Lanka Relations An Expanded Legal, Historical, Diplomatic and Socio-Cultural Analysis: 1961–2026

Dr. Jatin V. Adesara, Dr. Suresh G Sorathia, Mr. Sapan N shah

Abstract- India–Sri Lanka relations represent one of South Asia’s longest and most multidimensional civilizational relationships. Although bilateral relations are frequently examined through the perspectives of diplomacy, security, economics and geopolitics, their deeper foundations are embedded in historical interaction, religious traditions, linguistic communities, literature, pilgrimage, maritime exchange and cultural memory. This study develops an interdisciplinary and legally informed framework for examining three particularly significant cultural dimensions of the relationship: **Buddhism, Tamil heritage and Ramayana traditions**. The paper conceptualizes these three dimensions as interconnected cultural pillars rather than isolated historical subjects. Buddhism provides a major civilizational and religious bridge between India and Sri Lanka, particularly through the historical transmission of Buddhist teachings, monastic institutions, sacred sites, Pali scholarship, pilgrimage networks and contemporary cultural diplomacy. Tamil heritage represents another enduring dimension, encompassing linguistic, literary, commercial, religious and social connections extending across the Palk Strait. Ramayana traditions constitute a distinctive transnational cultural narrative whose interpretations, sacred geography and tourism potential have contributed to contemporary people-to-people connectivity.

The study further examines these cultural relationships within the legal and diplomatic framework governing India–Sri Lanka relations. Particular attention is given to bilateral agreements, the 1977 Cultural Agreement, the 1987 Indo-Lanka Accord, economic cooperation, cultural cooperation, tourism, maritime interaction, heritage protection, minority and linguistic considerations, and contemporary bilateral policy. The paper argues that cultural diplomacy should be understood not merely as symbolic diplomacy but as an important component of public diplomacy, heritage governance, tourism development, educational exchange and regional confidence-building.

A central proposition of this study is that the cultural relationship between India and Sri Lanka can contribute to a broader model of **civilizational diplomacy**, provided that cultural narratives are approached inclusively, historically responsibly and consistently with constitutional principles, international law, minority rights, cultural-property protection and the sovereign equality of states. The paper therefore proposes an integrated **India–Sri Lanka Cultural Connectivity Framework (ISCCF)** incorporating Buddhism, Tamil heritage, Ramayana traditions, pilgrimage, tourism, maritime

heritage, academic exchange and cultural diplomacy.

Keywords: India–Sri Lanka Relations; Buddhism; Tamil Heritage; Ramayana; Cultural Diplomacy; Soft Power; Civilizational Diplomacy; Heritage Law; Tourism; Maritime Connectivity; International Relations; Cultural Heritage; South Asia.

1. Recommended Keywords

Primary keywords: India–Sri Lanka Relations; Buddhism; Tamil Heritage; Ramayana Traditions; Cultural Diplomacy; Civilizational Diplomacy; Cultural Connectivity; Heritage Governance; Religious Heritage; Maritime Connectivity; Pilgrimage Tourism; Cultural Tourism; Soft Power; Public Diplomacy; International Relations; South Asian Studies; Heritage Law; Minority Rights; Cultural Property Protection; People-to-People Connectivity; Digital Humanities; Mathematical Modelling; Social Network Analysis; Artificial Intelligence; Machine Learning; Cultural Heritage Analytics.

Short journal version — 10–15 keywords

India–Sri Lanka Relations; Buddhism; Tamil Heritage; Ramayana; Cultural Diplomacy; Civilizational Diplomacy; Cultural Connectivity; Heritage Governance; Maritime Connectivity; Pilgrimage Tourism; Soft Power; Heritage Law; Mathematical Modelling; Artificial Intelligence; South Asian Studies.

The core three-pillar terminology is directly consistent with the manuscript’s stated keywords and framework.

2. Subject Classification- For journal submission, I recommend using multiple subject classifications, because the paper is deliberately interdisciplinary.

A. Primary Classification

International Relations / India–Sri Lanka Relations

- Bilateral Relations
- South Asian International Relations
- Regional Cooperation
- Cultural Diplomacy
- Public Diplomacy
- Civilizational Diplomacy

B. Secondary Classification

Cultural Heritage and Heritage Studies

- Cultural Heritage
- Intangible Cultural Heritage
- Religious Heritage
- Heritage Governance
- Heritage Conservation
- Cultural Memory
- Sacred Geography

C. Religious and Cultural Studies

- Buddhist Studies
- Hindu Studies
- Tamil Studies
- Ramayana Studies
- Comparative Religion
- Religious Pluralism
- Pilgrimage Studies

D. Tourism and Development

- Cultural Tourism
- Religious Tourism
- Pilgrimage Tourism
- Sustainable Tourism
- Heritage Tourism
- Tourism Diplomacy

E. Law and Governance

- International Cultural Heritage Law
- Heritage Law
- Minority and Linguistic Rights
- Human Rights
- Constitutional Law
- International Law
- Maritime Law
- Cultural Property Protection

F. Mathematical and Computational Sciences

- Mathematical Modelling
- Social Network Analysis
- Cultural Network Analysis
- Computational Social Science
- Artificial Intelligence
- Machine Learning
- Digital Humanities
- Cultural Heritage Analytics

The manuscript already explicitly identifies mathematical and computational modelling as a future

interdisciplinary direction.

References

1. Arasaratnam, S. (1984). *Ceylon*. Englewood Cliffs, NJ: Prentice-Hall.
2. Bond, G. D. (1988). *The Buddhist Revival in Sri Lanka: Religious Tradition, Reinterpretation and Response*. Columbia: University of South Carolina Press.
3. de Silva, K. M. (1977). *Sri Lanka: A Survey*. London: C. Hurst.
4. de Silva, K. M. (1981). *A History of Sri Lanka*. Delhi: Oxford University Press.
5. Dharmarathna, S. (2022). India–Sri Lanka Buddhist cultural relations (Sixth Century CE to the Twelfth Century CE). *Journal of History, Art and Archaeology*, 2(1), 73–81. <https://doi.org/10.47509/JHAA.2022.v02i01.06>
6. Gombrich, R. F. (1971). *Precept and Practice: Traditional Buddhism in the Rural Highlands of Ceylon*. Oxford: Clarendon Press.
7. Gombrich, R. F. (1988). *Theravada Buddhism: A Social History from Ancient Benares to Modern Colombo*. London: Routledge.
8. Gombrich, R. F., & Obeyesekere, G. (1988). *Buddhism Transformed: Religious Change in Sri Lanka*. Princeton: Princeton University Press.
9. Harvey, P. (1990). *An Introduction to Buddhism: Teachings, History and Practices*. Cambridge: Cambridge University Press.
10. Henry, J. W. (2022/2023). *Ravana's Kingdom: The Ramayana and Sri Lankan History from Below*. Oxford: Oxford University Press.
11. Pathak, S. J. (2016). Impact of Buddhism on Sri Lanka: The Indian influence. In *Intercultural Relations and Ethnic Conflict in Asia* (pp. 46–67).
12. Rasaratnam, M. (2016). *Tamils and the Nation: India and Sri Lanka Compared*. Oxford: Oxford University Press.
13. Siriwardana, H. D. I. D., & Withanage, S. (2022). *An Analytical Study of the Importance of the Destinations Related to Ramayan towards Attracting Indian Tourist to Sri Lanka*. Sabaragamuwa University.
14. Wilson, A. J. (1988). *The Break-up of Sri Lanka: The Sinhalese-Tamil Conflict*. Honolulu: University of Hawaii Press.
15. Government of India & Government of Sri Lanka. (1977). *Cultural Agreement between India and Sri Lanka*, 29 November 1977.
16. Government of India & Government of Sri Lanka. (1987). *Indo-Lanka Accord*, Colombo, 29 July 1987.
17. Government of India & Government of Sri Lanka. *India–Sri Lanka Free Trade Agreement*.
18. Government of India. (2024). *India–Sri Lanka Joint Statement: Fostering Partnerships for a Shared Future*.
19. High Commission of India, Colombo. *India–Sri Lanka Cultural Relations*.
20. High Commission of India, Colombo. *India–Sri Lanka Bilateral Relations*.

Dr. Jatin V. Adesara

Department of Mathematics, Vishwakarma Government Engineering College, Chandkheda Ahmedabad, Gujarat, India.

Dr. Suresh G Sorathia

Registrar, Shreyarth University, Ahmedabad, Gujarat, India.

Mr. Sapan N shah

Assistant professor, Department of Mathematics, Vishwakarma Government Engineering College,
Chandkheda Ahmedabad, Gujarat, India.

Mrs. Riddhi M Zala

Research scholar, Shreyarth University, Ahmedabad, Gujarat, India

Dr. Gunamani B. Deheri

Retired Associate Professor of Mathematics, Department of Mathematics
Sardar Patel University, Vallabh Vidyanagar, Gujarat, India

Rakesh Manilal H. Patel

Department of Mathematics

Government Science College, Sector-15, Gandhinagar, Gujarat, India



A Comparative Study of Women's Status In Srilanka And India: Social, Economic & Political Perspective

Prof. Neelima Singh

Abstract- The status of women is a significant indicator of social development, economic progress, and democratic governance. This study, titled '*A Comparative Study of Women's Status in Sri Lanka and India: Social, Economic, and Political Perspective*', examines and compares the position of women in both countries across key dimensions of gender equality. The study adopts a qualitative comparative approach based on secondary data. The study analyses major indicators, including education, health, labour force participation, economic opportunities, political representation, and women's empowerment. The findings suggest that Sri Lanka performs better than India in education, literacy, healthcare, and human development, while both countries continue to face challenges in women's economic participation and political representation. Although India has made significant progress through various policy initiatives and welfare programmes, socio-cultural barriers and regional disparities continue to affect women's overall status. The study concludes that achieving gender equality requires integrated social, economic, and political reforms that promote women's empowerment and inclusive development in both countries.

Keywords: Women's Status, Gender Equality, Women's Empowerment, Political Representation.

Introduction- Women constitute nearly half of the world's population and play a vital role in social, economic, and political development. The status of women is widely regarded as a key indicator of development, reflecting not only economic progress but also the extent of social justice, equality, and democratic participation. Over the past few decades, gender equality has emerged as a central concern in international development discourse, particularly following the adoption of the UN SDGs, with Goal 5 specifically emphasizing the achievement of gender equality and the empowerment of all women. Despite significant global progress in education, healthcare, legal rights, and political participation, gender-based inequalities continue to persist in varying forms across both developed and developing countries.

India and Sri Lanka, although geographically close and sharing historical, cultural, and colonial legacies, present contrasting experiences in women's development. These differences make the two countries suitable for a comparative study of women's status.

Sri Lanka has long been recognised for its remarkable achievements in human development. Since independence, the country has invested substantially in universal education, free healthcare, and social welfare programmes, resulting in high female literacy rates, improved maternal health, and better life expectancy compared to many countries in South Asia.

However, these achievements have not been fully translated into higher levels of women's economic and political participation. This contradiction highlights that improvements in social development alone do not automatically ensure women's empowerment in all spheres.

India, on the other hand, has witnessed significant progress in women's education, healthcare, financial inclusion, and legal protection over the past two decades. Government initiatives such as **Beti Bachao Beti Padhao**, **Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana**, and various programmes promoting women's entrepreneurship and political participation have contributed to improving women's socio-economic status. Nevertheless, challenges such as gender discrimination, unequal access to employment, wage disparities, violence against women, regional inequalities, and limited political representation continue to affect women's overall empowerment.

This study adopts a comparative approach to analyze women's status from three interrelated dimensions: **social, economic, and political**. The social dimension examines education, health, literacy, and social development; the economic dimension focuses on labour force participation, employment opportunities, and financial inclusion; while the political dimension analyses women's representation, participation in governance, and decision-making processes.

Literature Review-

The theoretical foundation of women's empowerment is significantly influenced by **(Sen,1999)** *Development as Freedom*. According to him, women's access to education, healthcare, employment, and political participation enhances their capabilities and enables them to make informed life choices. Sen's Capability Approach has profoundly influenced global development thinking and forms the conceptual basis of the Human Development Index and Gender Inequality Index. However Sen provides a broad normative framework and gives limited attention to

The institutional and socio-cultural barriers that continue to restrict women's empowerment in developing societies.

Building upon Sen's work, **(Kabeer, 1999)**, in her influential article *Resources, Agency, Achievements: Reflections on the Measurement of Women's Empowerment*, conceptualizes empowerment as a process through which women acquire the ability to make strategic life choices. She identifies three dimensions of empowerment—resources, agency, and achievements—and argues that improvements in education or income alone cannot ensure genuine empowerment unless women possess decision-making power and control over resources. Kabeer's framework is particularly relevant for comparing India and Sri Lanka, where improvements in education have not always translated into equal economic or political opportunities for women.

Klasen and Pieters (2015) analysed the stagnation of female labour force participation in urban India using household survey data. Their study found that despite improvements in female education, labour force participation remained low due to patriarchal social norms, household responsibilities, rising family income, and the limited availability of suitable employment opportunities.

The **World Bank's** report *Getting to Work: Unlocking Women's Potential in Sri Lanka's Labour Force* (2017) examines the persistent gap between women's educational achievements and labour market participation in Sri Lanka. The report highlights an important paradox in Sri Lanka's development experience: strong social indicators have not resulted in proportionate economic empowerment for women.

The **UNDP** through the **Human Development Report** and **Gender Inequality Index (GII)**, demonstrates that Sri Lanka performs better than India in female literacy, maternal health, life expectancy, and overall human development. The **World Economic Forum's Global Gender Gap Report (2025)** reveals that Sri Lanka performs relatively better in education and health, whereas both countries score comparatively lower in the dimensions of economic and political empowerment. These reports suggest that improvements in human development alone do not automatically ensure gender equality across all sectors.

The **UN Women Gender Snapshot (2024)** further argues that unpaid care work, gender-based violence, discriminatory social norms, and unequal access to productive resources remain major obstacles to women's empowerment worldwide. The report emphasizes that despite legal reforms and policy initiatives, women continue to bear a disproportionate burden of unpaid domestic work, which directly affects their labour force participation, leadership opportunities, and economic independence. This perspective is particularly relevant for understanding the common challenges faced by both India and Sri Lanka.

Although the existing literature provides substantial evidence on women's education, health, employment, and political participation, most studies examine these dimensions separately or focus on a single country. Comparative research integrating the **social, economic, and political perspectives** of women's status in both India and Sri Lanka remains limited.

Moreover, there is insufficient attention to how improvements in social development influence economic participation and political empowerment within different institutional and cultural contexts. Therefore, the present study seeks to bridge this gap by adopting a comprehensive comparative approach.

Objectives

1. To examine the social, economic and political status of women in India and Sri Lanka.
2. To identify the major challenges and suggest policy recommendations for improving women's status in both countries.

Research Methodology

The present study adopts a **qualitative and comparative research design** to examine the status of women in India and Sri Lanka from social, economic, and political perspectives. The study is based on secondary **data**, obtained from reports by the **UNDP, World Bank, WEF, UNESCO, ILO, IPU**, journal articles and books.

The study employs a **comparative analytical method** to assess similarities and differences between India and Sri Lanka. The study further interprets the findings through the theoretical perspectives of **Amartya Sen's Capability Approach** and **Naila Kabeer's Women's Empowerment Framework**, enabling a multi dimensional understanding of women's status in the two countries.

Comparative Analysis

Social Perspective

The social status of women is one of the most important indicators of a country's level of development.

It is reflected through women's access to education, healthcare, social security, and equal opportunities. India and Sri Lanka share many historical and cultural similarities; however, the status of women in the two countries differs significantly due to differences in public policies, socio-economic development, and institutional support.

Sri Lanka has made remarkable progress in improving the social status of women through its long-standing commitment to free education and universal healthcare. As a result, the country has achieved high female literacy, better maternal health, lower infant mortality and higher life expectancy than most South Asian countries. According to UNDP and the World Bank, Sri Lanka performs better than India on several human development indicators related to women's health and education. These achievements have contributed to improving women's quality of life and social well-being., and obtain passports and related documents. According to the World Bank Gender Data Portal, female literacy among the population aged 15+ was approximately 74.9% in India and 92.0% in Sri Lanka in 2023. Thus Sri Lanka had an advantage of approximately 17.1% over India. The World Bank's Women, Business and the Law Mobility indicator shows Sri Lanka at 100 compared to India's 75, reflecting stronger formal legal provisions related to women's freedom of movement, including their ability to choose where to live, travel domestically and internationally and obtain passports and related documents.

India has also witnessed significant improvements in women's social status over the past two decades. Government initiatives such as **Beti Bachao Beti Padhao**, **National Health Mission**, and **Samagra Shiksha** have increased female school enrolment, improved maternal healthcare, and promoted girls' education. However, social inequalities based on caste, class, religion, poverty, and rural-urban disparities continue to affect women's access to quality education and healthcare. Challenges such as child marriage, gender-based violence, and unequal household responsibilities also continue to limit women's social empowerment.

Despite these differences, both countries have recognized gender equality as an important development objective. International organizations such as UNESCO have emphasized that education and healthcare are essential foundations for women's empowerment. Nevertheless, improving social indicators alone is insufficient unless women are able to participate equally in economic and political life.

Economic Perspective

Economic empowerment plays a crucial role in determining women's overall status. It includes access to employment, equal wages, financial resources, property rights, and economic decision-making. Although both India and Sri Lanka have made progress in improving women's educational attainment, this progress has not always translated into greater economic participation.

Sri Lanka presents an interesting paradox. Women enjoy high literacy rates and educational achievements, yet female labour force participation remains comparatively low. Several studies attribute this to traditional gender roles, unpaid care work, limited flexible Employment opportunities and workplace discrimination. The World Bank Gender Data Portal shows that in 2025, India's female labour-force participation rate was 32.4% and Sri Lanka's was 31.0%. Overall, India had a somewhat higher female participation rate, but both nations still had large gender differences in labour-force involvement. According to the World Bank's Women, Business and the Law 2025 Legal Framework Index, India's score is 57.93 whereas Sri Lanka's is 47.78. This suggests a relatively more robust formal legal framework for women's economic rights in India, while neither

nation has reached full legal equality

India faces similar challenges but on a much larger scale due to its population and socio-economic diversity. Female labour force participation has remained relatively low despite improvements in education and skill development. Many women are employed in the informal sector, where wages are lower, job security is limited, and social protection is often absent. Wage inequality, occupational segregation, and unequal access to productive resources continue to affect women's economic independence.

In recent years, initiatives such as **Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana, Stand-Up India, Mudra Yojana**, and various self-help group programmes have expanded women's financial inclusion and entrepreneurship in India. Similarly, Sri Lanka has introduced programmes to encourage female employment and entrepreneurship, although their overall impact remains limited. Reports published by the World Bank and the International Labour Organization indicate that both countries need policies that reduce unpaid care work, improve workplace safety, promote equal pay, and create flexible employment opportunities for women.

Therefore, while Sri Lanka performs better in education and human development, neither country has fully succeeded in transforming educational achievements into equal economic opportunities. Economic empowerment remains one of the greatest challenges for women in both countries.

Political Perspective

Political participation is another important dimension of women's status because it reflects women's ability to influence public policies and decision-making processes. India has made considerable progress in promoting women's participation in local governance through constitutional reservations in Panchayati Raj Institutions and Urban Local Bodies. These measures have enabled millions of women to participate in grassroots politics and local administration. India has enacted Nari Shakti Vandan Adhiniyam 2023 to increase women's representation in legislature which reflects the country's commitment to gender-inclusive governance. However, women's representation in Parliament, State Legislatures, and senior political leadership remains comparatively low when compared with their share in the population.

Sri Lanka holds a unique place in political history as the first country to elect a woman Prime Minister. Despite this historical achievement, women continue to be significantly under represented in Parliament, political parties, and senior decision-making positions.

Cultural norms, limited political opportunities, lack of financial resources and male-dominated party structures remain important barriers to women's political participation.

Reports published by the World Economic Forum and the Inter-Parliamentary Union indicate that both India and Sri Lanka continue to face challenges in achieving gender-balanced political representation. Increasing the number of women in legislative institutional one is not sufficient unless women are provided equal opportunities to influence policy decisions and leadership positions. Women's share of seats in India's national Parliament was 13.7% and in Sri Lanka was 10.0% in 2024, according to the World Bank Gender Data Portal. Thus, India had a larger proportion of women in parliamentary representation than Sri Lanka, although women were still considerably under-represented in national decision-making institutions in both nations. Recent evidence from iKNOW Politics shows

that women in South Asia continue to have limited representation in legislative and executive decision-making. Women hold an average of 14.7% of seats in lower or unicameral houses and 19.9% in upper houses across the region.

Overall, the comparative analysis demonstrates that India and Sri Lanka have made important progress in improving the status of women; however, their achievements vary across different dimensions. Sri Lanka performs better in education, health, and human development, whereas India has introduced large-scale policy initiatives aimed at promoting women's education, financial inclusion, and political participation. Despite these achievements, both countries continue to experience gender inequalities

in employment, leadership, and political representation. Therefore, strengthening women's status requires integrated policies that simultaneously address social development, economic empowerment, and political participation while challenging the structural and cultural barriers that continue to limit gender equality.

Conclusion

In conclusion, it can be said that India and Sri Lanka both countries have made significant progress in promoting gender equality. Sri Lanka has achieved better outcomes in female literacy, maternal health, and overall human development through sustained investments in social welfare whereas India has introduced several policy initiatives to improve women's education, financial inclusion and political participation. However both countries continue to face challenges such as low female labour force participation, gender-based discrimination and unequal access to economic opportunities and limited representation of women in decision-making institutions.

To further improve women's status, both governments should adopt comprehensive and gender-responsive policies. Greater investment in quality education, skill development, equal employment opportunities, workplace safety, and women's entrepreneurship is essential. Strengthening political participation through effective implementation of gender-inclusive policies and leadership development programmes can enhance women's representation in governance. Awareness campaigns aimed at challenging patriarchal norms, reducing gender-based violence, and promoting equal sharing of domestic responsibilities are crucial. A holistic and inclusive approach will contribute to sustainable development and ensure that women in both India and Sri Lanka can participate equally in all spheres of society.

References

1. Agarwal, B. (1997). Bargaining and gender relations: Within and beyond the household. *Feminist Economics*, 3(1), 1–51.
2. Agarwal, B. (2001). Participatory exclusions, community forestry, and gender: An analysis for South Asia and a conceptual framework. *World Development*, 29(10), 1623–1648.
3. Afridi, F., Dinkelman, T., & Mahajan, K. (2018). Why are fewer married women joining the workforce in India? A decomposition analysis over two decades. *Journal of Population Economics*, 31(3), 783–818.
4. Asian Development Bank. (2015). *Women in the workforce: An unmet potential in Asia and the Pacific*. Asian Development Bank.
5. Asian Development Bank. (2022). *Sri Lanka: Country gender assessment*. Asian Development Bank.

6. iKNOW Politics, *Women's Political Participation in South Asia*, 17 December 2025
7. ILO (2016). *Factors affecting women's labour force participation in Sri Lanka*.
8. ILO (2024). *World Employment and Social Outlook: Trends for Women 2024*.
9. Inter-Parliamentary Union. (2025). *Women in national parliaments*. Inter-Parliamentary Union.
10. Jayawardena, K. (1986). *Feminism and nationalism in the Third World*. Zed Books.
11. Jayal, N. G. (2006). Engendering local democracy: The impact of quotas for women in India's panchayats. *Democratization*, 13(1), 15–35.
12. Kabeer, N. (1999). Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment. *Development and Change*, 30(3), 435–464.
13. Klasen, S., & Lamanna, F. (2009). The impact of gender inequality in education and employment on economic growth: New evidence for a panel of countries. *Feminist Economics*, 15(3), 91–132.
14. Klasen, S., & Pieters, J. (2015). What explains the stagnation of female labour force participation in urban India? *The World Bank Economic Review*, 29(3), 449–478.
15. Lahoti, R., & Swaminathan, H. (2016). Economic development and women's labour force participation in India. *Feminist Economics*, 22(2), 168–195.
16. Malhotra, A., & DeGraff, D. S. (1997). Entry versus success in the labour force: Young women's employment in Sri Lanka. *World Development*, 25(3), 379–394.
17. Mehrotra, S., & Parida, J. K. (2017). Why is the labour force participation of women declining in India? *World Development*, 98, 360–380.
18. Nussbaum, M. C. (2000). *Women and human development: The capabilities approach*. Cambridge University Press.
19. Organisation for Economic Co-operation and Development. (2023). *SIGI 2023 global report: Gender equality in times of crisis*. OECD Publishing.
20. Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
21. UNDP (2016). *Human development, disparity and vulnerability: Women in South Asia*.
22. UNDP (2025). *Human Development Report 2025: A matter of choice—People and possibilities in the age of AI*.
23. UN Women. (2024). *Progress on the Sustainable Development Goals: The gender snapshot 2024*
25. UNESCO. (2024). *Global education monitoring report 2024: Leadership in education*.
26. World Bank. (2017). *Getting to work: Unlocking women's potential in Sri Lanka's labour force*.
27. World Bank Gender Data Portal, 2025
28. World Bank. (2025). *Women, Business and the Law 2025*.
29. World Economic Forum. (2025). *Global Gender Gap Report 2025*.

RTMM, University of Allahabad
Nagar, Prayagraj-211003

Department of Political Science
457/399 Malviya
Mob- 9450586884



The Impact Of Commercial Banks On Socio-economic Development

Shaifali

Abstract- Development is defined as a state in which things are improving in various contexts like economical, social, political, biological, science and technology, language and literature. Economic and Social development is the process by which the economic well-being and quality of life of a nation, region, local community, or an individual are improved according to targeted goals and objectives. The major indicator of the development is GDP that does not take into account important aspects such as environmental quality, freedom, social justice, or gender equality. Another indicator, the per capita income also does not indicate the level of income equality among people. These indicators do not ensure that the benefits of development have been equally distributed and have reached particularly to the disadvantaged groups of society. Due to this a new concept of human development is being used. It covers almost all aspects of human life and people's choices like economic, social, political, cultural, educational, physical, biological, mental and emotional. In brief the relationship between human development and economic development can be explained in three ways. First, an increase in average income leads to improvement in health and nutrition. Second, it is believed that social outcomes can only be improved by reducing income poverty. Lastly, social outcomes can also be improved with essential services such as education, healthcare, and clean drinking water.

The ultimate goal of socio-economic development has been to ensure that all sections of the society must have equal access to the outcomes of development, and equal opportunities for upward economic and social mobility. Banks play a dominant and useful role in promoting economic development by mobilizing the financial resources of the community and by making them flow into the desired channels. A sound banking system mobilizes the small and scattered savings of the community, and makes them available for investment in productive enterprises. In India Commercial banks include the State Bank of India and its associates, all nationalized banks, foreign banks, other scheduled commercial banks, regional rural banks, and non-scheduled commercial banks. Commercial banks help in mobilizing savings through branch banking. These banks encourage people to the savings culture by introducing them to different deposit schemes. The banks mobilize savings and channelize them into productive investments, thereby helping in capital formation. Banks provide loans with different tenures to the industry so that the industry can meet their capital requirement for fuelling the business. Commercial banks provide credit to the critical agricultural sector. They give loans to industries operating in the industry, traders and also to the farmers. In a developing economy where many people belongs to the middle-class income group, the banks provide financial resources to buy

consumption related goods such as houses, scooters, cars, refrigerators, etc. Banks also provide loans to young entrepreneurs, medical and engineering graduates, and other technically trained persons in establishing their own business. This process ensures students receive a quality education. Thus the banks contribute to the overall development of the economy.

To start with, the general role of a commercial bank is to provide financial services to public and businesses and also to ensure economic and social stability to general public and industry, ensuring economic and social security and sustainable growth of an economy.

Banks are one of the most important parts of any country. In this modern time money and its necessity is very important. A developed financial system of the country ensures to attain development. A modern bank provides valuable services to a country. To attain development there should be a good developed financial system to support not only the economic but also the society. So, a modern bank plays a vital role in the socio economic matters of the country. Commercial Banks have always played an important position in the country's economy. They play a decisive role in the development of the industry and trade. They are acting not only as the custodian of the wealth of the country but also as resources of the country, which are necessary for the economic development of a nation. For the Indian economy, commercial bank by definition comprises of State Bank of India and its associates, all nationalized banks, foreign banks, other scheduled commercial banks, regional rural banks, and non-scheduled commercial banks. According to Reserve Banks of India Act 1934, 'A Scheduled Bank is that bank which has been included in the second schedule of the Reserve Bank'.

CLASSIFICATION OF COMMERCIAL BANKS-

1. **SCHEDULED BANKS:** Banks which have been included in the Second Schedule of RBI Act 1934. They are categorized as follows:
2. **PUBLIC SECTOR BANKS:** are those banks in which majority of stake are held by the government. eg. SBI, PNB, Syndicate Bank, Union Bank of India etc.
3. **PRIVATE SECTOR BANKS:** are those banks in which majority of stake are held by private individuals. eg. ICICI Bank, IDBI Bank, HDFC Bank, AXIS Bank etc.
4. **FOREIGN BANKS:** are the banks with Head office outside the country in which they are located. eg. Citi Bank, Standard Chartered Bank, Bank of Tokyo Ltd. etc.
5. **NONE SCHEDULED COMMERCIAL BANKS:** Banks which are not included in the Second Schedule of RBI Act 1934.

OPERATIONS OF COMMERCIAL BANKS- Following are the transactions which can be executed by a commercial bank –Accepts deposits, Lends money (this includes loan and credit card issuance), Processes payments, Issues bank drafts and checks, Offers safety deposit boxes for items and documents Also, some of the specialized commercial banks offer other services such as brokers, insurance contracts, investment advisory, and the likes.

Besides regular business function, commercial banks play a crucial role in the economic development of a country. Following are the roles played by a commercial bank in a developing economy:

1. **PROMOTE SAVING HABITS OF THE PEOPLE:** Bank attracts depositors by introducing attractive deposit schemes and providing rewards or return in the form of interest. Banks providing different kinds of deposit schemes to its customers. It enable to create banking habits or saving

habits among people.

2. THE MOBILIZATION OF SAVINGS FOR THE FORMATION OF CAPITAL:

Commercial banks help in mobilizing savings through branch banking. These banks induce people to the savings culture by introducing them to different deposit schemes. The banks mobilize savings and channelize them into productive investments, thereby helping in capital formation.

3. FINANCING INDUSTRIES:

Commercial banks fund the industrial sector in different ways. Banks provide loans with different tenures to the industry so that the industry can meet their capital requirement for fuelling the business. The banks also underwrite the equity and debt of large companies thereby taking part in helping develop the capital market.

4. FINANCING TRADE:

Banks provide financing for both internal and cross border trade. They offer loans to traders (retailers, wholesalers) and also help in the movement of goods by providing facilities such as discounting and accepting bills of exchange, overdraft, letter of credit, etc.

5. FUNDING THE AGRICULTURE SECTOR:

Commercial banks provide credit to the critical agricultural sector. They give loans to industries operating in the industry, traders and also to the farmers. This enables them to fuel the entire agricultural value chain. In addition to agriculture, banks assist with animal husbandry, dairy farming, sheep breeding, poultry farming, pisciculture, and horticulture.

6. FINANCING CONSUMPTION ACTIVITY:

In a developing economy where a bunch of people belongs to the middle-class income group, the banks provide financial resources to buy consumption related goods such as houses, scooters, cars, refrigerators, etc.

7. FINANCING EMPLOYMENT GENERATING ACTIVITIES:

In addition to the consumption related goods, banks also fund the education of individuals pursuing engineering, medical and other vocational institutes of higher learning. This process ensures students receive a quality education. Banks also provide loans to young entrepreneurs, medical and engineering graduates, and other technically trained persons in establishing their own business. Thus the banks contribute to the overall development of the economy.

8. ASSISTANCE IN MONETARY POLICY:

Commercial banks help in economic development by ensuring they adopt the monetary policy as outlined by the central bank. On the flip side, the central bank is dependent on commercial banks. We believe for an economy such as India, the enhanced spending on sectors such as infrastructure coupled with the speedy implementation of stalled projects and the development of reforms are expected to provide the much-needed impetus to fuel growth. These factors also suggest that India's banking sector is poised for robust growth as the rapidly growing business would approach the banks for fulfilling their credit requirement.

9. FINANCE TO GOVERNMENT:

Government is acting as the promoter of industries in underdeveloped countries for which finance is

needed for it. Banks provide long-term credit to Government by investing their funds in Government securities and short-term finance by purchasing Treasury Bills.

10. BALANCED DEVELOPMENT:

Modern banks spreading its operations throughout the world. we can see number of big banks like citi bank, Baroda bank etc. It helps a country to spread banking activities in rural and semi urban areas. With the spreading of banking operations around the country, helps to attain balanced development by promoting rural areas. Modern bank plays vital role in the socio- economic development of the country. A developed banking system enables the country to attain balanced development without any special consideration of rich and poor, cities and rural areas etc.

CONCLUSION

Lastly, we believe there is rapid advancement happening in technology. We have brought in the mobile and internet banking services to the forefront and the banks are striving to upgrade their facilities with an aim to enhance the customer experience. Thus, rapid technology adoption is also likely to provide banks with a competitive edge and fuel growth.

REFERENCES:

- Kapur Radhika,(2018) Socio-Economic Development and Empowerment of Disadvantaged Groups, Article, March.
<https://www.nios.ac.in/media/documents/SecSocSciCour/English/Lesson-25.pdf>
https://www2.gnb.ca/content/gnb/en/departments/esic/overview/content/what_is_social_development.html
https://en.wikipedia.org/wiki/Economic_development
<https://groww.in/blog/impact-of-commercial-banks-in-the-economy/>
<https://accountlearning.com/role-of-commercial-banks-in-economic-development-of-country/>
http://www.iraj.in/journal/journal_file/journal_pdf/14-358-14982087631-4.pdf

AE-90, Phase 1, Avantika Colony, Shastri Nagar Gzb (201002)

MOB- 9910784847



Buddha Magga: Relevance in the Contemporary World

Prof. Neelam Singh

Abstract- More than 2,500 years after Siddhartha Gautama attained enlightenment and began teaching in the Gangetic plains of ancient India, his philosophy continues to shape global thought, psychology, ethics, and even scientific research. This paper examines the enduring relevance of the Buddha's core teachings—the Four Noble Truths, the Eightfold Path, mindfulness, non-attachment, and compassion—to pressing contemporary challenges including mental health, environmental degradation, social division, consumerism, and the search for meaning in a technologically saturated age. It also considers critiques and limitations of applying an ancient contemplative tradition to modern secular contexts. The paper argues that while the cultural and religious trappings of Buddhism vary widely, its psychological and ethical insights offer a remarkably durable framework for addressing 21st-century problems.

Introduction- The figure of the Buddha—"the Awakened One"—occupies a unique place in the history of human thought. Unlike many religious founders, the historical Buddha did not claim divine status or revelation; he presented his teachings (the *Dharma*) as a set of observations about the nature of suffering and a practical path toward its cessation, inviting followers to test these claims against their own experience rather than accept them on faith alone. This empirical, psychologically oriented approach is one reason Buddhist thought has travelled so successfully across cultures and centuries, adapting to Theravâda, Mahâyâna, and Vajrayâna forms in Asia, and more recently to secular, clinical, and philosophical contexts in the West. This paper explores why, in an era defined by digital acceleration, ecological crisis, political polarization, and widespread anxiety, the Buddha's core insights have not merely survived but have gained fresh cultural and scientific traction.

Core Teachings: A brief

The Four Noble Truths: The Buddha's foundational teaching holds that (1) life is inherently marked by *duk kha* (suffering, unsatisfactoriness), (2) this suffering arises from craving and attachment (*tanha*), (3) suffering can cease, and (4) the path to its cessation is the Eightfold Path.

The Noble Eightfold Path: The path comprises right view, right intention, right speech, right action, right livelihood, right effort, right mindfulness, and right concentration—an integrated program addressing wisdom, ethical conduct, and mental discipline simultaneously.

Core Concepts

Anicca (impermanence): All conditioned phenomena are in constant flux.

Anatta (non-self): The absence of a fixed, unchanging self.

Karuna (compassion) and Metta (loving-kindness): Cultivated as antidotes to ill will and indifference.

Mindfulness (sati): Sustained, non-judgmental attention to present experience.

Contemporary Applications:

Mindfulness and Mental Well-being- Mindfulness is one of Buddha's teachings that remains highly relevant today. It means being fully aware of what one is experiencing in the present moment without immediately judging or becoming overwhelmed. This is valuable in a world filled with distractions, pressure, competition, uncertainty, social media, and constant communication. Buddha placed great importance on understanding the mind. Much suffering comes not only from events but from how the mind responds to them. People often remain caught in the past, worry about the future, compare themselves with others, or become attached to things beyond their control. Mindfulness encourages a person to pause and observe these thoughts rather than automatically following them. Mindfulness is not simply sitting quietly or trying to stop thinking. It is observing thoughts and emotions with awareness. If a person becomes angry, for example, recognising the anger before reacting creates a small distance between emotion and response. This can support better decisions, communication, and relationships. The same approach can help with stress by returning attention to what can actually be dealt with in the present. Buddhist teaching also recognises that thoughts, emotions, happiness, sadness, success, and failure are temporary. Understanding impermanence can prevent excessive attachment to pleasant experiences or being overwhelmed by difficult ones. A difficult period does not define an entire life, just as success cannot remain unchanged forever.

Mindfulness therefore has applications beyond meditation. It can help students handle examinations, employees manage pressure, and leaders make decisions with greater clarity. It can also encourage more considerate relationships by helping people listen carefully, judge less quickly, and recognise others' suffering. However, mindfulness is not a replacement for professional psychological or medical support when serious difficulties exist. Its value lies in developing awareness, emotional balance, and clarity. In a world that encourages people to achieve, buy, compare, and do more, Buddha's teaching offers a different perspective: greater peace begins with understanding the mind and learning not to react to every thought or emotion. Serious mental-health difficulties may still require professional psychological or medical support; mindfulness is better understood as a practice that develops awareness, emotional balance, and clarity rather than a substitute for care.

Detachment, Consumerism and Materialism- A central idea in Buddha's teachings is understanding attachment and desire. Buddha did not teach people to reject possessions or withdraw from ordinary life. Rather, he warned that excessive attachment to possessions, status, pleasure, and personal desires can create dissatisfaction. This is highly relevant today, when material success and consumption are often connected with happiness and identity. Modern society continually encourages people to want more. A new phone is followed by another model, one achievement by another, and financial success can create a desire for greater wealth. Advertising and social media reinforce this pattern by displaying ideal lifestyles and creating pressure to purchase, improve, achieve, or display. Happiness can therefore become dependent on external things. In Buddhism, *tanha*, commonly translated as craving or thirst, is an important cause of suffering. The problem is not

having reasonable desires. People naturally need food, shelter, security, relationships, and ambitions. Difficulty begins when satisfaction depends entirely on obtaining what one wants. Once one desire is fulfilled, another can replace it, creating a cycle of temporary satisfaction.

This is visible in consumer culture. Technology and greater access to goods have improved life, but having more does not necessarily bring peace. Social media encourages comparisons involving homes, careers, possessions, holidays, and achievements. Consumption may then become a way of seeking social acceptance or emotional validation rather than meeting genuine needs. Detachment offers an alternative. It does not mean neglecting family, career, possessions, or ambition. It means recognising that these things should not completely control happiness or self-worth. A student can aim for achievement, a business owner can build a successful company, and an individual can improve their standard of living while accepting outcomes beyond complete control. Detachment is closely connected with contentment. Contentment does not mean refusing to improve; it means valuing what one already has while pursuing reasonable goals. It can also encourage responsible consumption: buying what is useful, avoiding unnecessary waste, and appreciating existing resources. Moderation can also reduce unnecessary consumption and waste, encouraging a more thoughtful relationship with resources and the environment.

Compassion, Non-Violence and Human Relationships- Compassion and non-violence are important Buddha teachings because they address how people treat one another. Buddhism values personal peace as well as kindness, understanding, and concern for others. In a world connected by technology but divided by differences in opinion, culture, religion, social position, and political beliefs, these principles remain relevant.

The Buddhist idea of compassion, or *karuna*, is more than feeling sorry for another person. It involves recognising suffering and developing a genuine wish to reduce it. This requires understanding that others also experience fear, insecurity, disappointment, loss, and pain. Compassion can encourage people to consider what may have influenced another person's behaviour before judging them. This is particularly important in relationships. People communicate constantly, yet frequent communication does not guarantee understanding. Arguments can arise because people listen mainly to defend their own position. Buddha's teachings encourage patience and understanding before reaction. Non-violence, commonly connected with *ahimsa*, means refraining from causing harm. Harm is not limited to physical violence. Harsh speech, humiliation, bullying, discrimination, hatred, and deliberate cruelty can also create suffering. Buddha's emphasis on right speech is therefore highly relevant. Social media allows anger and criticism to be expressed instantly, often without considering consequences. Thoughtful communication can prevent disagreement from becoming unnecessary cruelty.

Compassion also matters when dealing with social divisions and conflict. Differences are not automatically a problem; conflict often worsens when people consider their own identity or viewpoint superior to others. Buddhist teachings encourage recognition of common human experiences. People everywhere experience happiness and suffering, gain and loss, fear and hope. This common ground can make respectful disagreement easier. These principles are also relevant to leadership and professional life. A compassionate leader does not abandon standards or difficult decisions. Instead, they recognise that employees are people with responsibilities and limitations. Accountability can exist alongside dignity and empathy. Buddhist teachings suggest that responding to anger with more

anger rarely resolves the original problem. This does not require accepting injustice or remaining silent. People can establish boundaries, disagree firmly, and oppose harmful behaviour without allowing hatred to control their response.

The Middle Path and Balanced Living- The Middle Path, or Majjhima Patipada, is one of Buddha's distinctive teachings. It describes a life that avoids two extremes: excessive indulgence and excessive deprivation. From his experience of both comfort and severe asceticism, Buddha recognised that neither extreme provided the right conditions for lasting peace and understanding. The Middle Path therefore represents balance, moderation, awareness, and discipline.

Its relevance is clear today, when people are often encouraged to live at extremes. Success may be associated with longer working hours, greater income, more possessions, and constant advancement, while entertainment and instant pleasure create another pressure. A person may become excessively focused on achievement or spend too much time seeking comfort and distraction. The Middle Path does not require people to abandon ambition or enjoyment. It encourages a balanced relationship with both. A person can work hard without allowing work to consume their life and enjoy material comforts without depending on them for happiness. The principle is not simply doing less; it is understanding when enough is enough. This is particularly relevant to work-life balance. Technology allows people to work almost anywhere, while emails, messages, meetings, and deadlines can continue beyond working hours. Over time, this can leave little space for family, health, rest, or personal interests. The Middle Path suggests that productivity should not come at the cost of overall well-being. The same principle applies to ambition and technology. Ambition can motivate learning and improvement, but an endless need to prove oneself creates dissatisfaction because there will always be someone progressing faster. Technology supports communication, work, education, and information, but constant scrolling or online content can control attention. The answer is not rejecting technology but using it consciously.

Physical and mental well-being also benefit from moderation. Responsible eating, regular exercise, adequate rest, and attention to mental well-being are more sustainable than extreme discipline or complete neglect. Education provides another example: students need discipline and hard work, but exhaustion does not necessarily produce better learning. Study should be balanced with sleep, activity, and meaningful interaction. Balance does not mean treating every situation as equally correct. Sometimes a firm decision is necessary. The essence of the Middle Path is avoiding unnecessary extremes while using judgement according to circumstances.

Ethical Conduct and Responsible Leadership- Buddha's teachings extend beyond personal peace to the way people conduct themselves and exercise responsibility. Ideas such as right action, right speech, right livelihood, honesty, self-discipline, and compassion can be applied to leadership and professional life. Where organisations strongly influence employees, customers, communities, and the environment, ethical conduct is essential.

Buddhist thought places importance on the intention behind an action. Two people may perform similar actions for different reasons. While consequences matter, ethical behaviour also requires examining motives. A leader acting mainly for personal gain may damage the people and organisation they control, while one who considers wider consequences is more likely to build trust and stability. This is particularly relevant to business. Companies make decisions affecting employees, customers, investors, communities, and the environment. A decision can be legal without necessarily being

ethical. Responsible leadership therefore asks not only whether something can be done, but whether it should be done. Buddhist emphasis on awareness and avoiding harm provides a useful moral framework. Right speech is also important. Leaders communicate with employees, customers, investors, and the public, so their words can influence an organisation. Honest and clear communication builds credibility, while misinformation, rumours, or manipulation gradually destroy trust. Right livelihood traditionally means earning a living without causing unnecessary harm. In modern business, this can apply to products, services, production methods, and business practices. Profit is necessary for sustaining an organisation, but the manner in which profit is earned also matters. Ethical conduct does not require businesses to ignore efficiency, competition, innovation, or financial discipline; it provides a framework for pursuing them responsibly. Trust, reputation, employee loyalty, and customer confidence can support long-term success.

Leadership itself requires self-awareness. Authority should not become arrogance or exploitation. Anger, ego, greed, and the desire for recognition can distort judgement. A responsible leader should understand personal biases and consider how decisions affect others. Compassion does not mean avoiding discipline. When an employee makes a mistake, a leader can hold them accountable while treating them with dignity. Corporate responsibility similarly includes workplace safety, fair treatment, responsible resource use, data privacy, and honest advertising. These are questions of responsibility as well as compliance.

Impermanence, Change and Resilience- One fundamental Buddhist teaching is impermanence, or *anicca*: everything in life is subject to change. Circumstances, relationships, emotions, possessions, achievements, and identities do not remain the same forever. Understanding this can change how a person responds to happiness and difficulty. In a rapidly changing world, the teaching has relevance. Modern life involves constant change. Technology develops quickly, industries evolve, careers change, and businesses face new competition and changing customer behaviour. A person may have a stable career today and face uncertainty tomorrow, while a successful business may need to adapt to new technology. People naturally prefer familiarity, but Buddha's teaching suggests that change is not an unusual interruption; it is part of life.

Understanding impermanence does not mean becoming passive or abandoning plans. It encourages people not to assume that present circumstances will remain unchanged. Awareness of change can make people better prepared to respond when circumstances shift. This connects closely with resilience: the ability to face difficulties, adapt, and continue moving forward. Impermanence is relevant to success and failure. People can become attached to achievements and interpret failure as a definition of themselves. A business owner may see a failed project as personal failure, or a student may believe poor performance defines their ability. Buddhist thought encourages recognition that success and failure are temporary experiences and should not completely determine self-worth. The same perspective can help during loss, disappointment, and uncertainty. Remembering impermanence does not remove pain, but it provides perspective. Emotions and circumstances change, and a difficult period does not necessarily continue forever. This can provide patience and hope during hardship. Impermanence also applies to pleasant experiences. Happiness, wealth, recognition, youth, and comfort are temporary. Recognising this does not mean failing to appreciate them; it can encourage gratitude because good circumstances are valued while present rather than treated as permanent.

Relationships also evolve. Friendships change, children grow, families develop, and people may move in different directions. Accepting this does not make relationships unimportant; it recognises that they naturally change.

For businesses, impermanence encourages flexibility and continuous learning. Consumer preferences, technology, regulations, competition, and economic conditions can change quickly. Organisations that refuse to adapt may become irrelevant. A successful business therefore needs to change while retaining its fundamental purpose. The teaching also applies to personal identity. People often define themselves through occupation, wealth, status, or achievements, but these can change. A broader sense of self makes adaptation easier.

Conclusion- The Buddha's teachings emerged from a specific historical and cultural context, yet their core diagnosis—that much of human suffering stems from craving, aversion, and a misunderstanding of the self's relationship to a constantly changing world—continues to resonate. In mental health treatment, environmental ethics, conflict resolution, and the philosophy of mind, Buddhist concepts have been translated, tested, and in some cases empirically validated, while also facing legitimate critique for dilution and commercialization. The Buddha's relevance today lies less in doctrinal orthodoxy than in the practical, testable, and psychologically astute nature of his original invitation: to examine one's own mind and experience directly, and to act with compassion in light of that understanding. As the world confronts unprecedented ecological, technological, and social pressures, this invitation retains and arguably gains significance.

References

- Rahula, Walpola. (2014). *What the Buddha Taught*. Oneworld Publications.
- Keown, Damien. (2013). *Buddhism: A Very Short Introduction*. Oxford University Press.
- Anderson, Carol. (2012). "Four Noble Truths." *Oxford Bibliographies in Buddhism*. Oxford University Press.
- Cozort, Daniel, & Shields, James Mark (Eds.). (2018). *The Oxford Handbook of Buddhist Ethics*. Oxford University Press.
- Keown, Damien. (2000). *Contemporary Buddhist Ethics*. Routledge.
- Dainik Jagran. (2021). "भगवान बुद्ध की शिक्षाएं जो जीवन को बदल सकती हैं और सकारात्मकता की ओर ले जाती हैं." *Jagran Josh*, May 26, 2021.
- Online Sources (2026). Various reliable online resources consulted for background information on Buddhism, Buddha's teachings

Economics Dept.
(VMLG College Ghaziabad 201001)
+91-9711005622



India and Sri Lanka in the Indian Ocean: Geopolitical Balancing and Strategic Interdependence

Mrs Ekta Agrawal

Abstract- India-Sri Lanka relations occupy a strategically significant position within the evolving geopolitical order of the Indian Ocean. Their relationship is grounded in centuries of cultural exchange, geographical proximity and commercial interaction, but has repeatedly been reshaped by shifts in regional power and competing domestic interests. Since the end of the Cold War, Sri Lanka has become increasingly important to India's regional strategy. Along with the development of Hambantota Port under Chinese involvement, China's role in Colombo Port, at the same time, Sri Lanka has sought to maximise its strategic and economic autonomy by maintaining relations with India and other external powers rather than aligning exclusively with any one major power.

This article employs a realist framework to examine India-Sri Lanka relations as a process of regional balancing under conditions of changing relative power. It argues that India's most sustainable strategy toward Sri Lanka is not to exclude other friendly neighbouring countries from the island, but to strengthen India's relative position by creating a dense network of economic, maritime, energy and infrastructural interdependence that simultaneously serves Sri Lankan interests. India's involvement in the Colombo West International Terminal, cooperation surrounding Trincomalee, proposed energy connectivity and digital integration illustrate this transition from predominantly security-oriented engagement toward a broader form of economic statecraft. The article further evaluates the Indo-Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA) and the stalled Economic and Technology Cooperation Agreement (ETCA), arguing that economic cooperation has not yet generated sufficiently balanced benefits for Sri Lanka. A more credible Indian balancing strategy therefore requires reforming existing trade arrangements, improving market access for Sri Lankan exports, reducing non-tariff barriers and designing ETCA around reciprocal gains. Such an approach could strengthen India's regional position while preserving Sri Lanka's strategic autonomy and reducing the incentives for excessive dependence on China.

Keywords: India, Sri Lanka, China, Indian Ocean, balancing, realism, geopolitics, ISFTA, ETCA, ports, economic statecraft

1. Introduction- The Indian Ocean has become an increasingly important arena of strategic competition as the distribution of power in Asia has shifted. Rapid economic expansion, growing naval capabilities and extensive infrastructure investments of other neighbouring countries have altered the strategic environment confronting India. Sri Lanka occupies an especially important position within this environment because of its location close to major maritime routes connecting the Middle East, Africa and Europe with East and Southeast Asia. The island's ports therefore

possess significance extending considerably beyond the country's relatively small economic size (Senevirathna, 2021). For India, Sri Lanka represents simultaneously a security concern, an economic opportunity and an essential component of its conception of regional order. India's proximity creates a structural asymmetry between the two countries: instability or the presence of an unfriendly major power in Sri Lanka can generate direct security consequences for India, while India has considerably greater economic and military capabilities. Sri Lanka, however, possesses an important strategic asset in the form of its geographic location and can therefore exercise agency by engaging competing external powers.

The contemporary relationship cannot be understood without considering China's growing role in Sri Lanka. Chinese involvement in commercial infrastructure of Hambantota and Colombo acquire strategic significance. In 2017, China Merchants Port Holdings entered a 99-year concession arrangement concerning Hambantota Port (Hillman, 2018) while China Merchants has also operated the Colombo International Container Terminal (Ministry of External Affairs, 2014). The Sri Lanka Ports Authority (2026) records the 2017 Hambantota concession as a public-private partnership and the formalisation of the long-term lease arrangement. Against this background, India's expanding economic and infrastructural engagement with Sri Lanka can be interpreted as a form of regional balancing. Yet this balancing strategy differs from traditional military balancing. India increasingly seeks to improve its relative strategic position by strengthening economic interdependence, infrastructure connectivity, energy security, port development and defence cooperation (High Commission of Sri Lanka in India, 2024; Mallempati, 2025; Trivedi, 2026; Wignaraja, 2026).

This article argues that **India's most effective strategy for balancing other nation's growing influence in Sri Lanka is not the exclusion or displacement of it, but the creation of an economically attractive and strategically resilient Indian-Sri Lankan partnership in which Sri Lanka has greater incentives to remain closely connected to India while retaining strategic autonomy.** The argument therefore combines a realist understanding of power competition with an examination of mutually beneficial economic cooperation. India's strategic interests and Sri Lanka's developmental interests are not inherently contradictory. They can become mutually reinforcing when Indian economic engagement generates tangible benefits for Sri Lankan consumers, producers, investors and the state.

2. Historical Foundations of India-Sri Lanka Relations

2.1 Antiquity, geography and the Indian Ocean- India-Sri Lanka relations predate the modern state system by centuries. The narrow Palk Strait and the proximity of southern India to northern Sri Lanka facilitated sustained movement of people, commodities, religious traditions and political influence. Buddhism travelled from the Indian subcontinent to Sri Lanka, most significantly through the missions associated with the Mauryan period. Cultural and religious connections subsequently became embedded within the political and social development of both societies. Trade also connected Sri Lanka to wider Indian Ocean networks. Sri Lankan ports were integrated into commercial routes connecting the Indian subcontinent with Southeast Asia and the western Indian Ocean. Geographic proximity therefore produced both cooperation and competition. The relationship was not historically one of simple cultural affinity; political interactions included periods of conflict, including Chola interventions in Sri Lanka. This historical complexity is important because contemporary strategic relations similarly combine cooperation with anxiety over asymmetry (Tyagi, 2006). The

significance of geography has remained constant despite changes in political institutions. Sri Lanka's position near major sea lanes means that great powers seeking influence in the Indian Ocean have incentives to develop relationships with the island. For India, this geographic reality is particularly consequential because Sri Lanka lies immediately south of the Indian subcontinent.

2.2 Colonial transformation and the emergence of modern geopolitics- European colonialism fundamentally altered the strategic environment of the Indian Ocean. Portuguese, Dutch and ultimately British control incorporated Sri Lanka into an imperial maritime system. Under British rule, Ceylon became strategically valuable because of its location and naval facilities, particularly Trincomalee (Senanayake, 2020). The end of British colonial rule in India in 1947 and Ceylon's independence in 1948 created the foundations for modern bilateral relations. Unlike a conventional relationship between distant sovereign states, India and Sri Lanka faced an unusual combination of geographic proximity, ethnic linkages and power asymmetry. Sri Lanka had strong incentives to preserve its sovereignty and avoid domination by its much larger neighbour, while India had incentives to ensure that external powers could not establish a strategically threatening position immediately adjacent to its southern coastline. This tension between sovereignty and security has remained a recurrent feature of bilateral relations (Aliff, 2015).

2.3 From regional leadership to intervention: the 1987 Accord and IPKF- The crisis surrounding Sri Lanka's ethnic conflict demonstrated the limits of India's conception of regional security. India's support for Tamil interests, humanitarian involvement and eventual military intervention culminated in the Indo-Sri Lanka Accord of July 1987. The Accord explicitly emphasised Sri Lanka's unity, sovereignty and territorial integrity while seeking a political resolution to the ethnic conflict (International Crisis Group, 2012).

The subsequent deployment of the Indian Peace Keeping Force (IPKF) exposed the contradictions inherent in India's regional role. Rather than generating a stable security partnership, military intervention created political resistance and eventually involved Indian forces in combat with the Liberation Tigers of Tamil Eelam. Thalawila (2014) argued that the intervention reflected India's position as the dominant regional power and demonstrated the difficulty of exercising regional influence without provoking resistance from the smaller state. PKF experience therefore provides an important preface to contemporary Indian strategy. It illustrates that military power alone cannot produce durable influence in Sri Lanka. India's contemporary emphasis on infrastructure, trade, investment, energy and connectivity can consequently be interpreted as a partial evolution from coercive or interventionist regionalism toward economic and strategic statecraft.

3. India as a Balancing Power: Contemporary Strategy- India's contemporary response should be understood as **balancing through connectivity**. Rather than attempting to curtail Sri Lanka's relation with other nations, India has increasingly sought to ensure that Developed nations does not become the island's dominant external partner.

One of the clearest examples is the Colombo West International Terminal (CWIT). Adani Ports holds 51% of the terminal joint venture, while John Keells Holdings holds 34% and the Sri Lanka Ports Authority 15%. The terminal operates under a 35-year build-operate-transfer concession. Phase I began operations in April 2025, and the project is expected to expand the capacity of Colombo Port significantly (Das et al., 2025). Calling this development an Indian "acquisition of a port" would therefore be misleading. It is more accurately understood as an Indian-linked investment

and operating concession within a Sri Lankan-controlled port system. Nevertheless, its strategic significance is considerable because the terminal places Indian capital and logistical capabilities within the same maritime environment as Chinese-operated infrastructure.

The comparison among the principal ports illustrates different strategic models. **Hambantota represents the depth of Chinese infrastructure involvement; Colombo demonstrates competitive coexistence between Chinese and Indian-linked investment; Trincomalee provides an opportunity for India to develop an alternative economic and energy relationship; and Kankesanthurai provides potential connectivity between northern Sri Lanka and southern India.** The objective is to construct a broader regional network in which India becomes an indispensable economic and security partner. Trincomalee is particularly important because its strategic significance extends beyond shipping. India, Sri Lanka and the United Arab Emirates agreed in 2025 to cooperate on developing Trincomalee as an energy hub. The initiative includes proposals involving energy infrastructure, while India and Sri Lanka have also discussed power-grid interconnection, LNG supplies, offshore wind and a multi-product pipeline (Jayasinghe & Patel, 2025). This creates a form of balancing that is both geostrategic and developmental. India gains greater regional connectivity and energy-security benefits, while Sri Lanka gains investment, infrastructure and the prospect of becoming an energy and logistics hub.

4. The Sri Lankan Perspective: Balancing for Autonomy- A realist analysis must not treat Sri Lanka as merely an object of competition among two better economies. Sri Lanka is itself a strategic actor pursuing national interests under conditions of asymmetrical power.

For Sri Lanka, maintaining relationships with competitive Nations like India and China can provide bargaining leverage. India offers geographical proximity, access to a vast market, emergency assistance and connectivity. China provides capital, infrastructure financing and access to global commercial networks. Sri Lanka therefore has little strategic incentive to choose an exclusive alignment unless one external power offers substantially greater benefits or poses significantly lower political costs. This explains why Sri Lankan policy can appear contradictory from an Indian perspective. Sri Lanka can welcome Indian investment while simultaneously maintaining partnerships with other countries. Such behaviour does not necessarily represent inconsistency. It can instead be understood as a classic smaller-state strategy of balancing, diversification and strategic autonomy. The 2022 economic crisis (Samarakoon, 2024) reinforced the practical importance of India. During the crisis, India provided extensive financial and material assistance, strengthening perceptions of India's role as a proximate regional partner. India's subsequent support therefore created political capital. Nevertheless, Sri Lankan dependence on India is also potentially problematic. Excessive Indian influence could generate the very security dilemma that India seeks to avoid. The memory of the IPKF intervention, political sensitivities surrounding the Tamil question, fisheries disputes and concerns regarding Indian economic dominance can all produce domestic resistance.

5. ISFTA: Achievements and Structural Limitations- The ISFTA provides evidence that economic integration can significantly deepen bilateral relations. Bilateral trade increased substantially after the agreement came into force. India's High Commission in Sri Lanka (2026a) reports bilateral merchandise trade of approximately US\$7.1 billion in FY2025-26, consisting of approximately US\$1.6 billion in Sri Lankan exports. The agreement has also created tangible opportunities for Sri Lankan exporters. Sri Lanka's Department of Commerce (2026) reports that exports under ISFTA increased

from approximately US\$16 million in 2000 to more than US\$634 million in 2025. Yet the distribution of gains remains problematic. Sri Lanka's imports from India remain substantially larger than its exports to India. In 2024, Sri Lankan exports to India were approximately US\$884 million, while imports from India were approximately US\$3.76 billion (Department of Commerce, 2026).

This imbalance does not mean that ISFTA has failed. From a realist perspective, trade deficits are not inherently undesirable if imports support productivity, investment or consumer welfare. However, persistent asymmetry can create political perceptions that the agreement benefits the stronger economy disproportionately. The deeper problem is that ISFTA is principally a goods agreement. Sri Lanka's modern growth opportunities increasingly involve services, logistics, tourism, digital trade, finance, education and technology. The bilateral relationship therefore requires an institutional framework capable of supporting sectors beyond tariff liberalisation. Sri Lanka's Department of Commerce (2026) also notes that ISFTA does not eliminate non-tariff barriers. This limitation is significant because formal tariff preferences may have limited practical value when exporters face standards, certification, customs, quotas, administrative procedures or other market-access constraints. The strategic implication is substantial. If India expects economic integration to function as an instrument of regional balancing, it must ensure that Sri Lankan firms see India not simply as a large market that imports Indian goods, but as a market in which Sri Lankan companies can establish durable competitive positions.

6. ETCA and the Next Phase of Economic Integration- The proposed Economic and Technology Cooperation Agreement represents a potential next stage of bilateral integration. Negotiations resumed in October 2023 after a five-year interruption, with the 14th round taking place in July 2024. Sri Lanka's Foreign Ministry subsequently reported the conclusion of the 14th round (High Commission of India in Sri Lanka, 2026b). The importance of ETCA extends beyond its commercial provisions. It could broaden bilateral relations from goods to services, technology, investment and professional mobility. Such integration could strengthen supply-chain connections between Indian and Sri Lankan firms and increase Sri Lanka's participation in larger regional markets.

However, ETCA also faces legitimate political concerns. The considerable asymmetry between the two economies means that unrestricted liberalisation could expose Sri Lankan firms to much larger Indian competitors. The agreement would therefore need carefully designed safeguards, phased liberalisation and mechanisms allowing weaker sectors to adjust.

The realist argument for ETCA should accordingly be based on **mutual strategic dependence rather than unilateral Indian market expansion**. India benefits from a more economically resilient Sri Lanka because economic instability can produce humanitarian pressures, irregular migration, political instability and opportunities for rival external powers. Sri Lanka benefits by securing more reliable access to India's enormous market, investment capital, technology and logistics networks. ETCA should therefore not be conceptualised simply as an extension of ISFTA. It should constitute a revised strategic economic architecture.

7. Challenges to India-Sri Lanka Strategic Cooperation- The first major challenge is **strategic mistrust**. India's size generates structural anxiety in Sri Lanka, while our neighbour's presence generates structural insecurity in India. The second is **economic asymmetry**. Without measures addressing the trade imbalance and market-access concerns, deeper integration may reinforce perceptions of dependency rather than partnership. The third is **domestic political sensitivity**.

Agreements involving ports, energy, land or foreign investment can become politicised in Sri Lanka. Indian policy must therefore recognise that commercially attractive projects may nevertheless produce domestic opposition. The fourth is **neighbouring country's continuing economic influence**. India cannot realistically expect Sri Lanka to abandon their investment. Their financial resources and infrastructure capabilities remain significant. An Indian strategy centred exclusively on geopolitical rivalry could therefore become counterproductive. The fifth is **the security dilemma created by maritime cooperation**. Greater Indian involvement in Sri Lankan ports and defence infrastructure can increase India's security. Sri Lanka's insistence that its territory not be used against another state should therefore be treated as a legitimate component of its strategic autonomy.

8. Policy Recommendations

8.1 Reform rather than replace ISFTA

India and Sri Lanka should prioritise systematic reform of ISFTA rather than treating ETCA as a substitute for an imperfect existing agreement. The immediate objective should be to identify the principal products for which Sri Lankan exporters face practical barriers and establish transparent mechanisms for their removal.

India should consider expanding tariff-rate quotas where genuine domestic sensitivities remain, while simplifying customs procedures and strengthening mutual recognition of standards. The objective should be to make market access measurable rather than merely nominal.

8.2 Make ETCA explicitly development-oriented

ETCA should contain asymmetric safeguards favouring sectors in which Sri Lanka requires adjustment time. Liberalisation should be phased rather than immediate, particularly in politically sensitive service sectors.

A bilateral mechanism should also monitor the distribution of benefits, including Sri Lankan exports, Indian investment in Sri Lanka, technology transfer and employment. This would transform ETCA from an agreement focused on liberalisation into an instrument of shared economic development.

8.3 Build Sri Lanka into an Indian Ocean logistics partner

India should pursue port cooperation as a commercial rather than exclusively geopolitical project. Colombo, Trincomalee, Kankesanthurai and other ports can be integrated into maritime logistics, transshipment, energy and supply chains linking India with the wider Indian Ocean.

8.4 Integrate energy cooperation into the economic relationship

The Trincomalee energy hub, electricity-grid interconnection, renewable energy and proposed pipeline cooperation should be treated as elements of a unified bilateral energy strategy. Energy dependence creates durable interdependence and can provide Sri Lanka with greater energy security while giving India strategic depth in the Indian Ocean.

8.5 Respect Sri Lankan strategic autonomy

Finally, India's long-term influence depends upon avoiding the mistakes associated with interventionism. The lesson of the IPKF period is that geographic proximity does not create a right to dictate political outcomes. India should therefore frame its contemporary relationship in terms of partnership, sovereignty and mutual benefit.

Conclusion

India-Sri Lanka relations demonstrate how geography continues to shape international politics even as the underlying distribution of power changes. Their historical relationship has evolved from cultural and commercial interaction through colonial strategic competition, post-independence diplomacy and the traumatic experience of India's military intervention in the 1980s. The emergence of China as a major economic and strategic power has introduced a new dimension to this relationship.

From a realist perspective, India cannot ignore other nations influence in Sri Lanka because changes in the strategic environment immediately south of India affect India's relative security. Equally, Sri Lanka cannot be expected to subordinate its own economic and strategic interests to Indian perceptions of other powers. The enduring solution lies in a form of balancing based upon mutually beneficial interdependence.

India's recent participation in the Colombo West International Terminal, its expanding engagement with Trincomalee and its support for energy, digital and connectivity projects demonstrate the emergence of such a strategy. These initiatives can strengthen India's position while contributing to Sri Lanka's economic development. Yet their success will depend upon whether India can offer something more durable than strategic competition: an economic partnership perceived in Sri Lanka as genuinely reciprocal.

The ISFTA demonstrates both the potential and limitations of this approach. Bilateral trade has expanded substantially, and Sri Lankan exports under the agreement have increased significantly. However, the persistent imbalance in bilateral trade and continuing non-tariff barriers indicate that formal market access does not automatically produce balanced economic integration. ETCA therefore represents an important opportunity, but only if it addresses these structural weaknesses rather than reproducing them in a broader agreement.

For India, the central lesson is that **regional balancing cannot rest solely upon ports, military capabilities or strategic geography. Economic resilience is itself a component of geopolitical power.** A prosperous, connected and strategically autonomous Sri Lanka that maintains deep economic and security relations with India would represent a stronger Indian strategic position than a Sri Lanka compelled to choose between its friendly countries.

The most sustainable Indian strategy is therefore not containment of other economic powers, but the construction of an Indian Ocean partnership in which India becomes indispensable without becoming coercive. Such a strategy would simultaneously advance India's regional security interests and Sri Lanka's developmental objectives. In this respect, the future of India-Sri Lanka relations will depend not on whether Sri Lanka chooses India over other nations, but on whether India can provide sufficient economic and strategic value for closer partnership to remain the rational choice for Sri Lanka.

References

- Aliff, S. M. (2015). *(PDF) An Analysis of India-Sri Lanka Relations Present and Future Trends*. ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/399829649_An_Analysis_of_India-Sri_Lanka_Relations_Present_and_Future_Trends

- Colombo West International Terminal. (2026, July 13). *CWIT Strengthens Colombo's Global Maritime Leadership; with the arrival of the Region's Tallest Electric Cranes*. <https://www.cwit.lk/cwit-news/cwit-strengthens-colombos-maritime-leadership-tallest-electric-cranes.html>
- Das, K. N., Jayasinghe, U., & Das, K. N. (2025, September 17). EXCLUSIVE: Adani-led Sri Lanka container terminal to double capacity ahead of deadline. *Reuters*. <https://www.reuters.com/business/energy/adani-led-sri-lanka-container-terminal-double-capacity-ahead-deadline-2025-09-17/>
- Department of Commerce. (2026). *Indo—Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA)*. https://www.doc.gov.lk/index.php?option=com_content&view=article&id=43&Itemid=154&lang=en
- High Commission of India in Sri Lanka. (2026a). *India-Sri Lanka Economic And Trade Engagement*. <https://www.hcicolombo.gov.in/page/india-sri-lanka-economic-and-trade-engagement/>
- High Commission of India in Sri Lanka. (2026b, November 8). *India-Sri Lanka Bilateral Relations*. <https://www.hcicolombo.gov.in/page/india-sri-lanka-bilateral-relations/>
- High Commission of Sri Lanka in India. (2024, December 16). *India—Sri Lanka Joint Statement Fostering Partnerships for a Shared Future*. https://www.slhcindia.org/index.php?option=com_content&view=article&id=1615:-india-sri-lanka-joint-statement-fostering-partnerships-for-a-shared-future-&catid=60:joint-statements&Itemid=152
- Hillman, J. E. (2018). *Game of Loans: How China Bought Hambantota*. <https://www.csis.org/analysis/game-loans-how-china-bought-hambantota>
- International Crisis Group. (2012, November 20). *Sri Lanka: Tamil Politics and the Quest for a Political Solution*. <https://www.crisisgroup.org/rpt/asia-pacific/sri-lanka/239-sri-lanka-tamil-politics-and-quest-political-solution>
- Jayasinghe, U., & Patel, S. (2025, April 5). India, UAE to develop Sri Lanka energy hub as Delhi competes with China for influence. *Reuters*. <https://www.reuters.com/world/asia-pacific/india-uae-develop-sri-lanka-energy-hub-delhi-competes-with-china-influence-2025-04-05/>
- Mallempati, Dr. S. (2025, July 5). *India-Sri Lanka MoU on Defence Cooperation: An Important Shift in Policy—Indian Council of World Affairs (Government of India)*. https://www.icwa.in/show_content.php?lang=1&level=3&ls_id=12855&lid=7855
- Mearsheimer, J. J. (2001). *The Tragedy of Great Power Politics*. W. W. Norton. https://books.google.com.au/books?id=sQcXRDD3w_IC
- Ministry of External Affairs. (2014, August 14). *Q. NO. *536 CHINESE-BUILT MEGA PORT TERMINAL IN SRI LANKA*. Government of India. https://www.mea.gov.in/rajya-sabha?dtl/23922/Q_NO_536_CHINESEBUILT_MEGA_PORT_TERMINAL_IN_SRI_LANKA
- Samarakoon, L. P. (2024). What broke the pearl of the Indian ocean? The causes of the Sri Lankan economic crisis and its policy implications. *Journal of Financial Stability*, 70, 101213. <https://doi.org/https://doi.org/10.1016/j.jfs.2023.101213>
- Senanayake, H. (2020, April 22). Examining the Sinhala-Tamil Conflict in the Historical Context of Colonialism. *Atlas Institute for International Affairs*. <https://atlasinstitute.org/examining-the-sinhala-tamil-conflict-in-the-historical-context-of-ceylon-and-south-indian-relations/>
- Senevirathna, A. (2021). *Belt and Road Initiative (BRI) and Indo-Pacific Strategy (IPS): Challenges and Opportunities for Sri Lanka* (pp. 181–192). https://doi.org/10.1007/978-981-16-3757-5_15
- Sri Lanka Ports Authority. (2026). *Sri Lanka Ports Authority—About*. <https://www.slpa.lk/port-colombo/hip>
- Thalpapwila, O. N. (2014, February). (PDF) *India-Sri Lanka Relations: In Post Civil War Era in Sri Lanka*. ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/283714398_India-Sri_Lanka_Relations_In_Post_Civil_War_Era_in_Sri_Lanka
- Trivedi, S. (2026, August 24). Rajnath Singh to visit Sri Lanka on September 9-10 to review defence cooperation.

- The Hindu*. <https://www.thehindu.com/news/national/rajnath-singh-to-visit-sri-lanka-on-september-9-10-to-review-defence-cooperation/article71385426.ece>
- Tyagi, M. (2006). Commercial Relations Between North India and Sri Lanka in Ancient Period: A Study. *Proceedings of the Indian History Congress*, 67, 106–117.
- Waltz, K. N. (2008). *Realism and International Politics*. Routledge.
- Wignaraja, G. (2026, August 12). *Opportunities for India-Sri Lanka open sub-regionalism: A practical agenda for trade, connectivity and resilience*. ODI: Think Change. <https://odi.org/en/insights/opportunities-for-india-sri-lanka-open-sub-regionalism-a-practical-agenda-for-trade-connectivity-and-resilience/>

Diploma in Russian Language ,
K.M.Institute ,
Dr. Bhimrao Ambedkar University,
Agra



Buddhism Beyond Borders: Tradition, Transformation and Social Change in a Globalized World

Dr. Sangita Kumar

Abstract- Globalization has changed the way people live, communicate, travel and understand cultures and religions. Buddhism, one of the world's oldest religious traditions, has also been deeply influenced by these changes. Although Buddhism originated in South Asia and spread across Asia centuries ago, it is now practiced in many parts of Europe, North America, Australia and other regions. Buddhist teachings, meditation practices, monks, institutions and cultural symbols increasingly cross-national boundaries through migration, tourism, education, mass media and digital technology. This research paper explores how globalization has influenced Buddhism in three major ways: through transnational movement, cultural transformation and social change. It argues that globalization has not simply taken Buddhism from Asia to the West. Instead, Buddhism has been adapted and reinterpreted in different societies, creating new forms of Buddhist identity and practice. Meditation and mindfulness, for example, are now widely practiced in secular settings such as workplaces, schools and healthcare institutions, sometimes without being explicitly associated with Buddhism. At the same time, Buddhist communities have become increasingly involved in issues such as peace, environmental protection, social justice and human rights.

However, globalization has also created challenges. The commercialization of mindfulness, the use of Buddhist symbols as commodities and the removal of practices from their traditional contexts raise questions about authenticity and cultural appropriation. The paper therefore argues that globalization should be understood as a two-way process: Buddhism is transformed by global forces, but it also contributes ideas, values and practices to the global world. Contemporary Buddhism is consequently neither completely traditional nor completely modern; it is constantly negotiating between the two.

Keywords: Buddhism, globalization, transnationalism, cultural transformation, Buddhist modernism, social change, mindfulness

1. Introduction

1.1 Background

Religion is often associated with particular places and cultures. Buddhism, for instance, is commonly associated with countries such as India, Sri Lanka, Thailand, Myanmar, China, Japan and Tibet. Yet Buddhism has never been limited to one geographical region. From its beginnings in the Indian subcontinent, Buddhist teachings travelled through merchants, monks, pilgrims and political networks

and gradually became part of very different Asian societies.

What is different today is the speed and scale at which this movement takes place. Globalization has made it possible for ideas, people and cultural practices to travel across the world almost instantly. A Buddhist teacher in India can give a lecture to people in Europe through an online platform. A meditation practice that developed in an Asian monastery can become part of a workplace programme in the United States. A Buddhist migrant can establish a temple in a European city while maintaining close religious and cultural connections with a community in Asia.

This has created what scholars increasingly refer to as **global Buddhism**. Borup (2021) explains global Buddhism as a transnational and transcultural phenomenon in which Buddhist people, teachings, institutions and practices move across geographical and cultural boundaries. Importantly, globalization does not simply mean that Buddhism is spreading into new countries. It also means that Buddhism itself changes when it encounters new cultures.

This is particularly visible in the way Buddhism is understood in contemporary societies. In some places, Buddhism is viewed primarily as a religion involving rituals, temples and monastic communities. In other contexts, it is presented as a philosophy, a form of meditation or even a psychological practice. McMahan (2008) describes this transformation through the concept of **Buddhist modernism**, arguing that modern forms of Buddhism have developed through interactions between traditional Buddhist ideas and modern values such as rationalism, science, individualism and psychology.

The global popularity of mindfulness is perhaps the clearest example. Practices with roots in Buddhist meditation traditions are now widely used in schools, hospitals, workplaces and wellness programmes. While this has introduced Buddhist-derived practices to millions of people, it has also raised an important question: what happens when a religious practice is removed from the wider religious and ethical framework in which it developed?

This question forms an important part of the present research.

1.2 Problem Statement

The relationship between Buddhism and globalization is more complicated than simply saying that globalization has helped Buddhism spread around the world. Globalization has also changed how Buddhism is practiced, represented and understood.

Migration has created Buddhist communities far from their traditional homelands. Digital technology has created new ways of accessing Buddhist teachings. Western societies have developed new interpretations of meditation and Buddhist philosophy. At the same time, Buddhist organizations have become involved in international discussions about peace, environmentalism and social justice.

These developments raise several questions. Does globalization help Buddhism preserve and strengthen itself, or does it gradually change Buddhism into something different? Does the global popularity of meditation represent the success of Buddhism, or does it separate meditation from its religious roots? And when Buddhist communities adapt to new societies, how much can change before questions of authenticity arise?

This paper therefore examines globalization as a process that creates both **continuity and change** within Buddhism.

1.3 Research Objectives

The main objectives of this research are:

1. To examine how globalization has contributed to the transnational spread of Buddhism.
2. To understand how Buddhist practices and identities have changed as Buddhism enters different cultural environments.
3. To examine the role of migration and digital technology in creating global Buddhist networks.
4. To explore the relationship between Buddhism and contemporary social issues.
5. To identify both the opportunities and challenges created by the globalization of Buddhism.

1.4 Research Questions

The research attempts to answer the following questions:

1. How has globalization contributed to the transnational spread of Buddhism?
2. How have Buddhist practices and identities changed through interaction with different cultures?
3. What role have migration and digital technology played in creating global Buddhist communities?
4. How has Buddhism responded to contemporary social issues?
5. Does globalization strengthen Buddhism globally while also creating problems of commercialization and cultural loss?

2. Literature Review

The relationship between Buddhism and globalization has been studied from several different perspectives. Earlier discussions often focused on the movement of Buddhism from Asia to Western societies. More recent research, however, suggests that this understanding is too simple. Buddhism does not move in only one direction, and globalization is not simply a process of Westernization.

Baumann (2001) was among the scholars who examined the emergence of what can be called global Buddhism. His work draws attention to migration, institutional development and changing Buddhist identities. Buddhist communities outside Asia are not all alike. Some consist mainly of migrants who maintain traditional religious practices, while others consist of people who have encountered Buddhism through meditation, philosophy or popular culture.

Borup (2021) develops this idea further by describing global Buddhism as a transnational and transcultural network. According to this perspective, globalization allows Buddhist teachings, institutions and people to travel, but these things are also changed during the process. Buddhism can therefore look quite different depending on where and how it is practiced.

One of the most useful concepts for understanding this change is **Buddhist modernism**. McMahan (2008) argues that modern Buddhism developed partly through encounters with Western modernity. Ideas associated with science, rationality, psychology and individual experience became increasingly important in the way Buddhism was presented to modern audiences.

This helps explain why meditation has become so popular outside traditional Buddhist communities.

Meditation can now be presented as something that improves concentration, reduces stress or supports psychological well-being. It does not necessarily require someone to become Buddhist or participate in a Buddhist institution.

This transformation is not necessarily negative. It allows people who might never enter a monastery or temple to encounter Buddhist practices. At the same time, it raises questions about what may be lost when meditation is separated from Buddhist ethics and philosophy.

Migration is another important part of the literature. Ashiwa and Wank (2005), in their study of Chinese Buddhism, show how Buddhist clergy and lay devotees created networks that extended across national borders. These networks demonstrate that Buddhist globalization is not simply a movement from one culture to another. Migrant communities can maintain connections with their places of origin while also adapting to their new surroundings.

Research on contemporary Mahâyâna Buddhism similarly demonstrates how migration and international institutions have contributed to the development of global Buddhist communities (Reinke, 2021).

Another important area is **engaged Buddhism**. Queen and King (1996) documented Buddhist movements that connected Buddhist principles with social and political concerns. Rather than treating Buddhism as something concerned only with individual spiritual liberation, engaged Buddhism asks how Buddhist ideas can respond to poverty, war, inequality and other forms of suffering.

Gleig (2021) notes that engaged Buddhist movements have become involved in issues such as peacebuilding, human rights, environmental protection and women's rights. Global communication has made it easier for such ideas to circulate between Buddhist communities in different countries.

However, Hsu (2022) points out that even the idea of “engaged Buddhism” needs to be examined critically. Much of the academic discussion surrounding it has been shaped by Western scholarship, which can sometimes create a particular image of what an “engaged” Buddhist should look like.

2.1 Research Gap

The existing literature provides valuable discussions of individual aspects of Buddhist globalization. Some scholars focus on migration and diaspora, others on Buddhist modernism, mindfulness, digital religion or socially engaged Buddhism.

The gap lies in the limited integration of these areas. Looking at them separately can make globalization appear to be a series of unrelated developments. In reality, they are connected.

Migration creates new Buddhist communities. These communities use digital technologies to maintain connections across countries. Their practices may then change as they interact with local cultures. At the same time, global forms of Buddhism can become involved in social movements and commercial markets.

This paper attempts to bring these dimensions together. It looks at **transnational flows, cultural transformation and social change as interconnected parts of the same process**. This allows globalization to be understood not simply as the spread of Buddhism, but as a process that changes the meaning and social role of Buddhism itself.

3. Research Methodology

This research uses a **qualitative and exploratory approach**. The purpose is to understand how

globalization has affected Buddhism rather than to measure the number of Buddhists in particular countries.

The study is based on secondary sources, including academic books, peer-reviewed journal articles and scholarly publications dealing with Buddhism, globalization, migration, Buddhist modernism, mindfulness and engaged Buddhism.

The selected literature was examined thematically. Four broad themes were identified: **transnational movement, cultural transformation, digitalization and social change**. These themes were then compared to understand how they influence one another.

A limitation of this approach is that it does not include original interviews or fieldwork. Buddhism is also extremely diverse, meaning that the experiences of a Buddhist community in Thailand may be very different from those of a Buddhist community in Europe or North America. The conclusions of this research should therefore be understood as broad analytical observations rather than statements that apply equally to every Buddhist community.

4. Results and Discussion

4.1 Buddhism on the Move: Migration and Transnational Networks

One of the most visible effects of globalization has been the movement of Buddhist communities across national borders.

Migration has played an important role in establishing Buddhist temples and organizations in countries where Buddhism was previously a relatively unfamiliar tradition. Migrants often establish religious institutions not only as places of worship but also as spaces for maintaining language, traditions, festivals and cultural identity.

A temple in a foreign country can therefore perform several roles at once. It may be a religious centre for older migrants, a cultural centre for younger generations and a place where local people can learn about Buddhism.

This creates an interesting situation. Migrant Buddhists may want to preserve traditions from their homeland, while younger generations may prefer practices that fit more comfortably into the culture of their new country.

As a result, Buddhist communities often negotiate between **preservation and adaptation**.

The globalization of Chinese Buddhism provides an example. Ashiwa and Wank (2005) show how clergy and lay devotees developed networks extending across national boundaries. Such networks allowed Buddhist institutions to maintain connections across different geographical locations.

This suggests that globalization does not necessarily weaken traditional religious identities. In some cases, it can actually help communities preserve them. Digital communication, international travel and transnational organizations make it easier for migrant communities to remain connected with religious institutions in their countries of origin.

At the same time, these connections allow ideas to move in the opposite direction. A Buddhist community in a Western country may develop practices that later influence communities elsewhere. Globalization is therefore not a one-way road.

4.2 Cultural Transformation: What Happens When Buddhism Enters a New Culture?

Buddhism has always adapted to the societies in which it has been practiced. Buddhism in Japan is not identical to Buddhism in Sri Lanka, just as Tibetan Buddhism differs from Chinese Buddhism.

Globalization continues this historical process, but at a much faster pace.

When Buddhist teachings enter new societies, they are interpreted through existing cultural ideas. In Western societies, for example, Buddhism has often been associated with meditation, rationality, personal experience and psychological well-being.

McMahan's concept of Buddhist modernism helps explain this development. He argues that modern Buddhism emerged through an interaction between Buddhist traditions and modern Western ideas, particularly science, psychology and individualism (McMahan, 2008).

This means that the Buddhism encountered by a modern global audience is sometimes quite different from the Buddhism practiced in traditional monasteries.

This does not necessarily mean that one version is “real” and the other is “fake.” Religions change as societies change. The important point is to recognize that the change is happening.

Global Buddhism is therefore characterized by **adaptation and hybridization**. Traditional rituals may coexist with modern interpretations. Meditation may be practiced alongside secular wellness programmes. Buddhist institutions may use social media while continuing centuries-old ceremonies.

The result is not one standardized global Buddhism but many different versions that overlap with one another.

4.3 Digital Buddhism and New Religious Spaces

The internet has changed the relationship between religious communities and physical space.

A person interested in Buddhism no longer has to live near a Buddhist temple or monastery to access Buddhist teachings. Online lectures, meditation sessions, podcasts, books and social media content make Buddhist ideas available across geographical boundaries.

This has created opportunities for both teachers and practitioners. A Buddhist teacher can reach an international audience, while an individual living in a country with very few Buddhist institutions can still participate in a Buddhist community online.

Borup (2021) identifies technological and media developments as important factors in the contemporary globalization of Buddhism.

However, digital Buddhism also changes religious authority. Traditionally, learning Buddhism often involved relationships with teachers and communities. Online, individuals can choose what they want to watch or practice. They may follow several teachers from different traditions without becoming part of any particular institution.

This can make Buddhism more accessible and personalized, but it can also encourage selective consumption. A person may learn meditation from one tradition, Buddhist philosophy from another and combine both with secular self-help ideas.

In this sense, the internet does not simply transmit Buddhism. It changes the way people **construct religious identity**.

4.4 Mindfulness: From Buddhist Practice to Global Wellness Culture

Few developments demonstrate the relationship between Buddhism and globalization as clearly as the worldwide popularity of mindfulness.

Mindfulness has roots in Buddhist meditation traditions, but its contemporary use has expanded far beyond explicitly Buddhist environments. It is now associated with stress reduction, education, healthcare, psychology and workplace well-being.

This has undoubtedly increased the visibility of Buddhist-derived practices. People who may have little interest in religion can nevertheless encounter meditation and ideas influenced by Buddhism.

However, there is another side to this development.

When mindfulness is presented primarily as a technique for becoming more productive, focused or successful, its connection with Buddhist ethics can disappear. Traditional Buddhist meditation exists within a larger framework concerned with suffering, attachment, compassion and ethical conduct. A purely commercial version of mindfulness may focus only on the immediate benefits of relaxation or productivity.

McMahan (2008) helps explain why this separation occurs. Modern Buddhist practices are often reshaped to fit the assumptions and expectations of modern societies.

This raises the issue of **commodification**. Buddhist-inspired practices can become products that are marketed and sold. Meditation apps, courses, retreats and wellness programmes can turn spiritual practices into consumer experiences.

It would be too simplistic, however, to say that commercialization automatically destroys Buddhism. It can also create opportunities for people to discover Buddhist ideas for the first time.

The real issue is therefore one of balance. Globalization can make Buddhist practices widely accessible, but there is a risk that accessibility comes at the cost of historical and philosophical context.

4.5 Buddhism and Social Change

Globalization has also changed how Buddhism interacts with social problems.

The concept of engaged Buddhism is especially important here. Engaged Buddhist movements attempt to apply Buddhist ethical principles to real-world problems rather than treating spirituality as separate from society.

Queen and King (1996) documented movements in several Asian countries where Buddhist principles became connected with social transformation. Gleig (2021) similarly highlights Buddhist engagement with peace, human rights, environmental concerns and other social issues.

This is significant because Buddhism has sometimes been portrayed in popular culture as a religion primarily concerned with meditation and personal peace. Engaged Buddhism presents a different picture.

The basic Buddhist concern with suffering can be interpreted not only as an individual psychological problem but also as a social and political one. If poverty, war or environmental destruction cause suffering, then responding to those problems can become part of Buddhist ethical practice.

Globalization has helped these movements communicate with one another. A Buddhist environmental campaign in one country can inspire activists elsewhere. International organizations can cooperate

through conferences, social media and transnational networks.

Environmentalism is particularly interesting in this context. Buddhist ideas about interdependence and the relationship between human beings and the natural world are increasingly discussed in relation to climate change. At the same time, it is important not to treat all Buddhists as activists. Many Buddhist communities remain primarily focused on ritual, meditation, family life and religious education. Engaged Buddhism is one part of contemporary Buddhism, not its universal definition.

4.6 The Question of Identity and Authenticity

Perhaps the most difficult issue raised by globalization is the question of authenticity. When Buddhism changes as it moves between cultures, who decides what counts as “real” Buddhism?

There is no simple answer.

If Buddhism has historically adapted to different cultures, then change itself cannot automatically be considered a loss of authenticity. At the same time, communities have legitimate concerns when practices are removed from their historical contexts or reduced to commercial products. The problem becomes even more complicated because different Buddhist communities may have different ideas about what is essential to Buddhism. For some, rituals and monastic traditions may be central. For others, meditation and philosophical inquiry may be more important. Globalization therefore creates a continuing negotiation between **tradition, adaptation and identity**.

Hsu’s (2022) criticism of the category of engaged Buddhism is useful here because it reminds researchers that even academic descriptions of Buddhism are shaped by cultural perspectives. Studying global Buddhism therefore requires attention not only to what changes but also to **who has the authority to describe and interpret that change**.

4.7 Globalization as a Two-Way Process

The overall findings suggest that globalization should not be viewed as something that happens *to* Buddhism from the outside. Buddhist institutions and practitioners are active participants in globalization. They use international networks, technology and migration to establish communities. Buddhist teachers travel internationally. Buddhist organizations organize global conferences. Buddhist activists participate in international environmental and peace movements. At the same time, Buddhist communities adapt to the societies in which they operate. This makes globalization a two-way process.

Buddhism is transformed by globalization, but Buddhist ideas and institutions also contribute to global cultural life. Meditation, compassion, non-violence and ideas of interdependence have become part of wider conversations about mental well-being, peace and environmental responsibility. The most appropriate way to understand contemporary Buddhism, therefore, is not as a tradition that has simply been “Westernized.” It is better understood as a tradition undergoing continuous **translation, negotiation and adaptation**.

5. Expected Outcomes and Recommendations

The research suggests several likely outcomes of the continuing relationship between Buddhism and globalization.

First, Buddhism is likely to become increasingly **transnational**. Migration and international mobility

will continue to connect Buddhist communities across countries. Temples and organizations will increasingly function as both religious and cultural institutions.

Second, Buddhist identity will probably become more diverse. Traditional practices will continue, but they will coexist with modern interpretations, secular meditation and hybrid forms of spirituality.

Third, digital technology will remain important. Online platforms will make Buddhist teachings accessible to people who do not have physical access to Buddhist institutions. At the same time, digital religion may encourage more individualized forms of practice. Fourth, the relationship between Buddhism and social activism is likely to grow. Climate change, conflict, inequality and migration provide new areas in which Buddhist ethics can be interpreted and applied. However, several recommendations can be made.

1. Preserve context while adapting practices

Buddhist institutions should provide historical and philosophical context when introducing practices such as meditation and mindfulness to new audiences. Adaptation is natural, but complete decontextualization can create misunderstandings.

2. Encourage intercultural dialogue

Global Buddhist organizations should encourage dialogue between different Buddhist traditions and between Asian and non-Asian practitioners. No single cultural interpretation should automatically be treated as the universal form of Buddhism.

3. Use technology responsibly

Digital platforms can make Buddhist education much more accessible. However, online learning should ideally complement meaningful community and teacher-student relationships rather than completely replacing them.

4. Address commercialization carefully

The popularity of mindfulness and Buddhist-inspired wellness should be approached critically. Commercialization can make practices accessible, but it should not completely reduce religious traditions to consumer products.

5. Encourage social engagement

Buddhist institutions can use their ethical resources to participate constructively in discussions surrounding peace, environmental protection, inequality and human rights.

6. Make scholarship more inclusive

Research on global Buddhism should include the voices of Buddhist practitioners from different geographical and cultural backgrounds. This would prevent global Buddhism from being understood mainly through Western academic perspectives.

6. Conclusion

Globalization has changed Buddhism in ways that go far beyond its geographical expansion.

Buddhism has travelled across national boundaries through migration, education, tourism, religious institutions and digital technology. In the process, it has entered new cultural environments and developed new forms of practice and identity.

The research shows that this transformation cannot be described simply as the decline of traditional Buddhism or the Westernization of an Asian religion. Buddhism has always adapted to different cultural contexts, and globalization has intensified this process.

The emergence of Buddhist modernism demonstrates how Buddhist ideas have interacted with science, psychology, individualism and modern culture. The popularity of mindfulness shows how a practice associated with Buddhist traditions can acquire new meanings in secular societies. Migration has allowed communities to preserve cultural and religious traditions while simultaneously adapting them to new environments. Digital technology has created new forms of religious participation that do not depend entirely on physical temples or monasteries. Globalization has also expanded Buddhism's engagement with society. Through socially engaged Buddhism, Buddhist principles have been connected with peacebuilding, environmentalism, human rights and social justice. Yet these developments come with tensions. The commercialization of mindfulness, the use of Buddhist symbols in consumer culture and the removal of practices from their traditional contexts can raise concerns about authenticity and cultural appropriation.

The central argument of this paper is therefore that **globalization is neither simply destroying Buddhism nor merely spreading it. It is transforming Buddhism.** The Buddhism of the contemporary world is increasingly diverse, interconnected and adaptable. Traditional and modern forms exist alongside one another. Migrant communities preserve practices from their homelands while creating new identities. Secular practitioners adopt meditation without necessarily becoming Buddhists. Digital communities connect individuals who may never meet physically. Activists reinterpret Buddhist ethics in response to global problems. In this sense, Buddhism is both a **participant in globalization and a subject of globalization.** It is shaped by global flows while also contributing ideas and practices to global society.

The future of Buddhism will therefore depend not on resisting all change or accepting every global transformation, but on how Buddhist communities negotiate the relationship between **tradition and modernity, local identity and global connection, and spiritual practice and social responsibility.**

References / Bibliography

- Ashiwa, Y., & Wank, D. L. (2005). The globalization of Chinese Buddhism: Clergy and devotee networks in the twentieth century. *International Journal of Asian Studies*, 2(2), 217–237.
- Baumann, M. (2001). Global Buddhism: Developmental periods, regional histories, and a new analytical perspective. *Journal of Global Buddhism*, 2, 1–43.
- Borup, J. (2021). Buddhism and globalization. In *Oxford Research Encyclopedia of Religion*. Oxford University Press.
- Gleig, A. (2021). Engaged Buddhism. In *Oxford Research Encyclopedia of Religion*. Oxford University Press.
- Hsu, A. O. (2022). Coming to terms with “Engaged Buddhism”: Periodizing, provincializing, and politicizing the concept. *Journal of Global Buddhism*, 23(1), 17–31.
- McMahan, D. L. (2008). *The Making of Buddhist Modernism*. Oxford University Press.
- Queen, C. S., & King, S. B. (Eds.). (1996). *Engaged Buddhism: Buddhist Liberation Movements in Asia*. State University of New York Press.

- Reinke, J. (2021). *Mapping Modern Mahayana: Chinese Buddhism and Migration in the Age of Global Modernity*. De Gruyter.
- Slott, M. (2015). Secular, radically engaged Buddhism: At the crossroads of individual and social transformation. *Contemporary Buddhism*, 16(2), 278–298.

Assistant Professor
Dept. of Sociology
Smt.B.D. Jain Girl's PG College
Agra, Uttar Pradesh
Mob- 7417222156



Reimagining India-Sri Lanka Relations the Interface of Geostrategy, Regional Geopolitics and Cultural Diplomacy

Prof. Sarika Dubey

Introduction- India and Sri Lanka share a relationship that extends far beyond the conventional framework of bilateral diplomacy. The two neighbouring countries have been connected by geographical proximity, historical interactions, shared civilizational traditions, religious linkages, maritime connectivity, and deep people-to-people contacts for centuries. Sri Lanka's strategic location in the Indian Ocean places it at the crossroads of major maritime routes connecting the East and the west. Its geographical location, has increased the geo-strategic importance of Sri Lanka while simultaneously making it an important factor in the regional geopolitical calculations of India and other major powers.

In the contemporary international order, India-Sri Lanka relations have acquired a renewed strategic significance. The India Ocean has become an important area of geopolitical competition. China has also increased its strategic presence in the region. At the same time, new maritime security challenges and the growing importance of the Indo Pacific have created both opportunities and challenges for bilateral relations. Sri Lanka's ports, maritime infrastructure, and location along critical Sea Lines of Communication have increased its strategic relevance. Consequently, India's engagement with Sri Lanka can no longer be examined exclusively through the prism of traditional neighbourhood diplomacy; it needs to be understood within the wider framework of regional security, maritime strategy, economic interdependence, and evolving power dynamics.

At the same time, India-Sri Lanka relations cannot be adequately understood through a purely strategic or geopolitical lens. The relationship possesses a distinctive cultural and civilizational dimension that provides an important foundation for mutual understanding and long-term cooperation. Buddhism represents one of the most enduring cultural bridges between the two societies, while the Ramayana tradition, religious pilgrimage, language, literature, education, yoga, ayurveda, art, tourism, and people-to-people exchanges have contributed to a wider cultural connectivity. These shared traditions provide India with significant opportunities to employ cultural diplomacy as an instrument of soft power and strategic engagement. Cultural diplomacy, in this context, assumes significance beyond the projection of cultural identity. It can contribute to building mutual trust, strengthening public goodwill, facilitating social connectivity, and creating an environment conducive to strategic cooperation. Cultural engagement may therefore function as a bridge between the hard realities of geo-strategy and the complex dynamics of regional geopolitics. India's initiatives relating to Buddhist heritage, religious tourism, educational exchanges, cultural institutions, humanitarian assistance, and people-centric development cooperation demonstrate the potential of culture to complement conventional diplomatic and strategic instruments. The contemporary phase of India-Sri Lanka

relations thus presents an interface between three interconnected dimensions: geostrategy, regional geopolitics, and cultural diplomacy. Geostrategy determines the importance of Sri Lanka in India's maritime and security calculations; regional geopolitics influences the opportunities and constraints within which bilateral relations operate; while cultural diplomacy provides a comparatively non-coercive mechanism for building trust and strengthening the social foundations of the relationship. Examining these dimensions in isolation may therefore provide only a partial understanding of the evolving bilateral relationship. An integrated approach is required to understand how cultural and civilizational linkages can complement strategic interests and contribute to regional stability.

Against this backdrop, the present study seeks to reimagine India–Sri Lanka relations by examining the interface of geostrategy, regional geopolitics, and cultural diplomacy it explores how India's strategic interests in the Indian Ocean intersect with Sri Lanka's geopolitical significance and how shared cultural and civilizational connections can be transformed into instruments of constructive diplomatic engagement. The study also examines the major challenges, external power competition, maritime security concerns, economic vulnerabilities, political developments and identifying a more resilient and mutually beneficial partnership.

The main theme of the paper is that the future of India-Sri Lanka relations cannot rest solely upon strategic calculations or economic interests. A sustainable of strategic cooperation, geopolitical understanding, economic engagement and cultural partnership requires connecting the simultaneous strengthening connectivity cultural diplomacy, when integrated with India's broader foreign policy and regional strategic objectives can serve not merely as an instrument of soft power but as a mechanism for building strategic trust and facilitating long term regional cooperation. In this sense, reimagining India-Sri Lanka relations implies moving from a predominantly transactional framework towards a more comprehensive partnership grounded in shared civilizational values mutual strategic interests, and people centred connectivity.

Historical and Civilizational Foundations of India–Sri Lanka Relations

India and Sri Lanka have shared historical and cultural ties for more than two thousand years. Their close geographical location helped in the development of early maritime contacts, trade, migration and cultural exchange across the Palk strait and the Indian Ocean. Archaeological evidence indicates that Sri Lanka was integrated into extensive maritime networks from the first millennium BCE, with India serving as one of its significant cultural and commercial linkages (Green, 2025; Munasinghe et al., 2021).

Buddhism has been one of the most important civilizational bridge between the two societies. The transmission of Buddhism to Sri Lanka during the reign of Emperor Ashoka, traditionally associated with the missions of Mahinda and Sanghamitra to the court of King Devanampiya Tissa, profoundly shaped Sri Lankan religious and cultural history. This Buddhist heritage continues to provide an important foundation for contemporary people-to-people relations and cultural diplomacy (Chakrabarty Manas 2020).

The Ramayana tradition represents one of the earliest cultural links between India and Sri Lanka. The narrative of Rama and Lanka has generated diverse literary, religious, and cultural interpretations across South Asia, including Sri Lanka, contributing to a shared cultural imagination while also developing distinctive local interpretations (Desai, 1970; Henry, 2022). Several places in Sri Lanka

are traditionally associated with events described in the Ramayana. The Ramayana continues to hold great cultural and religious significance that reflects the long standing civilizational and cultural connections between India and Sri Lanka. During the colonial period, both countries experienced the influence of European powers, particularly the British. The monuments of Indian labourers, traders and communities also contributed to cultural exchanges and commercial relations. The colonial period transformed these older networks through European political and economic domination, particularly under British rule. Sri Lanka's independence in 1948 and the establishment of diplomatic relations with India in the same year marked the beginning of a modern bilateral framework. After Independence, their historical connections continued to influence relations between India and Sri Lanka. Cultural and religious exchanges remained an important part of their bilateral relationship. Thus, the historical and cultural links developed over centuries provided a strong foundation for India-Sri Lanka relation in the post-independence period.

Regional Geopolitics and the Changing Strategic Landscape

The geopolitical environment surrounding India-Sri Lanka relations has undergone significant transformation with the emergence of the Indo-Pacific as a major strategic framework. The growing importance of the Indian Ocean for global trade, energy security, maritime connectivity, and strategic competition has enhanced Sri Lanka's geopolitical significance. Due to its strategic location along important maritime routes, Sri Lanka has increasingly become an important area of interest for regional and extra-regional powers, particularly India and China.

Sri Lanka's foreign policy can be understood through both realist and liberal perspectives. From a realist perspective, the international system is largely shaped by the interests of states and competition for power. According to Rosenau (1966: 27) and Elman (1996: 176), the analysis of the foreign policy of small countries is equally important for understanding the wider international environment. Sri Lanka's relations with India and China reflect this complexity, as the country has often adjusted its external relations according to changing regional and strategic circumstances.

At the same time, liberal thinking emphasizes the importance of economic interdependence and cooperation. According to Robert O. Keohane and Joseph S. Nye (1987: 741), contemporary human needs have increased the relevance of economic interdependence among nations. Sri Lanka's relations with both India and China demonstrate this aspect, as trade, investment, infrastructure development, and economic cooperation have become important instruments of foreign policy. Thus, Sri Lanka's external relations cannot be understood only in terms of power politics, as economic interests and interdependence also play an important role.

The growing strategic competition between India and China has further increased Sri Lanka's importance in the Indian Ocean. China's expanding economic and strategic presence, particularly through the Belt and Road Initiative and its activities associated with the Strings of Pearls, has raised strategic concerns for India. As Mollis (2006) argues, the power of a country is influenced not only by its comparative capabilities but also by its geopolitical position. In this context, Sri Lanka's strategic location has given it an important position in the wider regional balance of power. As a small state situated between two major powers, Sri Lanka has generally tried to maintain its strategic space rather than becoming exclusively aligned with either India or China. Smaller states often adopt different strategies, including balancing, bandwagoning, and hedging, to manage the influence

of larger powers. Gunasekara (2015: 212) notes that Sri Lanka was initially a bandwagoning state, as reflected in its close ties with Britain during the early post-independence period as a means of countering Indian influence. However, Sri Lanka's foreign policy relations can largely be said to have adopted a hedging approach in an attempt to balance the influence of India and China in its economy and strategic environment.

Tessman (2012: 200) explains that hedging enables smaller countries to develop relations with emerging major powers while maintaining cordial relations with traditional security partners and avoiding direct conflict with any large power. This approach is particularly relevant to Sri Lanka, which has expanded its economic and infrastructure cooperation with China while continuing to maintain close geographical, historical, cultural, political, and security ties with India. Sri Lanka's foreign policy, therefore, reflects a careful effort to benefit from relations with both powers without becoming excessively dependent on either one. This approach was also reflected in the foreign policy vision presented by Gotabaya Rajapaksa. In his manifesto, he emphasized a "Friendly and Non-aligned Foreign Policy" towards powerful nations such as China and India. During his first bilateral visit to India as President, he also stressed: "We will continue to work closely with India to ensure that the Indian Ocean remains a zone of peace" (Indian Express, 2019). This statement highlights Sri Lanka's attempt to maintain friendly relations with both major powers while supporting peace and stability in the Indian Ocean region.

India's response to the changing regional environment has increasingly been shaped through its Neighbourhood First Policy and the broader vision of SAGAR (Security and Growth for All in the Region). These initiatives emphasize development cooperation, connectivity, humanitarian assistance, economic engagement, and maritime security. Sri Lanka's severe economic and debt crisis of 2022 further transformed the bilateral relationship and also affected the wider regional geopolitical environment. India provided unprecedented assistance of nearly US\$4 billion in 2022 through credit lines, fuel, food, medicines, and other forms of support, while also advocating international assistance for Sri Lanka's recovery (High Commission of India, Colombo, 2022). India's crisis response demonstrated how economic and humanitarian diplomacy can complement strategic objectives and strengthen bilateral trust. The crisis also highlighted the risks associated with excessive economic dependence and increased the importance of reliable and timely regional partnerships. In this context, India's role during the crisis enhanced its significance as a key regional partner for Sri Lanka and demonstrated how economic assistance, humanitarian support, and strategic interests are increasingly interconnected in the changing geopolitical landscape of the Indian Ocean. Overall, the changing strategic landscape of the Indian Ocean reflects an intersection of geopolitical competition, geostrategic imperatives, economic interdependence, and diplomatic engagement. Sri Lanka's strategic location has made it increasingly important in the wider competition between India and China. However, rather than being merely a passive arena of great power rivalry, Sri Lanka has attempted to use its geopolitical position to preserve its strategic autonomy and protect its national interests. Its foreign policy thus represents a combination of realist calculations, liberal interdependence, bandwagoning, balancing, and strategic hedging within the evolving Indo-Pacific order.

Geostrategic Importance of Sri Lanka- Sri Lanka occupies a highly significant geostrategic position at the heart of the Indian Ocean. Although it is a relatively small island state, its location near major East-West maritime routes gives it importance far beyond its geographical size. Situated

close to the main Sea Lines of Communication connecting the Bay of Bengal and the Arabian Sea, as well as the South China Sea and the wider Indian Ocean, Sri Lanka has become strategically important for international trade, energy transportation, maritime connectivity, and regional security. **Robert D. Kaplan, in his book Monsoon: The Indian Ocean and the Future of American Power**, emphasizes Sri Lanka's importance in the emerging maritime geography of the Indian Ocean and views it as an important "geo-strategic hub" within the new maritime geography of the region (Kaplan, 2010).

Sri Lanka's strategic importance is further strengthened by its proximity to some of the world's busiest shipping routes. The busy East–West shipping route passes close to the southern coast of the island, making Sri Lanka an important point of connection between the Middle East, Africa, Asia, and Europe. As former Commander of the U.S. Indo-Pacific Command, Admiral Harry Harris observed, it is difficult to travel from Hormuz to Malacca or from the Red Sea to the South China Sea without passing near Sri Lanka, highlighting its location along one of the world's most critical maritime trade routes. (Jeff Smith 2019 & Harris 2016). Sri Lanka's geostrategic importance is further enhanced by the large volume of international maritime traffic passing close to the island. More than 60,000 vessels transit south of Sri Lanka annually, while the wider Indian Ocean carries approximately 75 per cent of global maritime trade, according to Sri Lanka's recent National Strategy and Action Plan for Sustainable Maritime Transport. Earlier official assessments have also noted that the East–West shipping route passing close to Sri Lanka carries a substantial share of global energy and container traffic, including approximately two-thirds of global petroleum supplies and half of all containerized cargo. These figures underline that Sri Lanka's location is strategically important not only for regional powers but also for the wider global trading system (United Nations ESCAP, 2026; Ministry of Foreign Affairs, Sri Lanka, 2017).

Among Sri Lanka's ports, Hambantota Port has acquired particular geostrategic importance because of its location near major international shipping lanes at the southern tip of the island. Its strategic position has made it an important subject of regional and international attention, particularly in the context of China's growing maritime presence in the Indian Ocean. The development of ports and maritime infrastructure under China's Belt and Road Initiative has further linked Sri Lanka to wider debates surrounding the String of Pearls and China's expanding strategic interests in the region. At the same time, Colombo Port continues to function as a major commercial and transshipment hub, while Trincomalee Port, with its natural harbour and location on Sri Lanka's eastern coast, holds significant potential for energy, logistics, and maritime cooperation.

The strategic value of Sri Lanka has also increased because the Indian Ocean has become an important arena of competition among major powers. The region has witnessed growing interaction between China's Belt and Road Initiative (BRI) and the broader Free and Open Indo-Pacific (FOIP) approach supported by countries such as India, the United States, Japan, and Australia. This has placed Sri Lanka at the centre of a changing regional strategic environment. However, Sri Lanka has generally attempted to avoid exclusive alignment with any single power. The country's foreign policy has sought to maintain relations with different major powers while preserving its own strategic autonomy. The policy of maintaining equidistance from all powers and presenting Sri Lanka as a neutral country reflects this broader effort to protect national interests without becoming directly involved in major-power rivalry.

Sri Lanka's geostrategic importance is closely connected with maritime security. The protection of Sea Lines of Communication, prevention of illegal fishing, trafficking and smuggling, search and rescue operations, disaster response, and marine environmental protection have become important areas of cooperation between India and Sri Lanka. India's maritime cooperation with Sri Lanka includes naval interactions, the SLINEX and MITRA SHAKTI exercises (Ministry of external affairs, Government of India 2025) maritime surveillance, and capacity-building initiatives. Such cooperation demonstrates that Sri Lanka's strategic importance is not limited to its geographical location but is also linked to its role in maintaining security and stability in the wider Indian Ocean region. The country's strategic relevance further extends to the emerging Blue Economy. Marine resources, fisheries, renewable ocean energy, coastal tourism, shipping, and marine biotechnology provide new opportunities for economic development and regional cooperation. Sri Lanka's location therefore creates an important connection between economic connectivity, maritime security, and sustainable development. Its ports and surrounding waters have the potential to support trade, logistics, energy cooperation, and wider regional connectivity.

Overall, Sri Lanka's geostrategic importance arises from the combination of its central location in the Indian Ocean, proximity to major Sea Lines of Communication, strategically important ports, and its position within the evolving competition among major powers. Its geographical location makes it relevant not only to India and China but also to the wider Indo-Pacific maritime order. The increasing volume of global trade and energy flows passing through the surrounding waters further strengthens its strategic value. Therefore, Sri Lanka remains an important strategic hub where maritime security, economic connectivity, geopolitical competition, and regional cooperation increasingly intersect.

Cultural Diplomacy, Spiritual Connectivity and India–Sri Lanka Relations

The discussion on regional geopolitics and the geostrategic importance of Sri Lanka naturally leads to another important dimension of India–Sri Lanka relations: cultural diplomacy and civilisational connectivity. While geopolitical competition and strategic interests often shape state behaviour, the relationship between India and Sri Lanka cannot be understood only through the lens of power politics. The two countries also share deep historical, religious, cultural, linguistic and civilisational connections. Among these, Buddhism occupies a particularly important place. Cultural and spiritual ties therefore provide an additional foundation for bilateral relations and can function as an important mechanism for building trust, mutual understanding and long-term cooperation.

A. Buddhist and Spiritual Connectivity: India's Civilisational Leverage

Buddhism represents one of the deepest links between India and Sri Lanka. India is the birthplace of Buddhism and possesses many of the most important sites associated with the life and teachings of Lord Buddha, including Bodh Gaya, Sarnath, Rajgir, Nalanda and Kushinagar. These places are important centres of pilgrimage for Buddhists from Sri Lanka and other parts of the world. In this sense, India's Buddhist heritage gives it a special civilisational position and a form of cultural and spiritual leverage in its relations with Buddhist countries, particularly Sri Lanka.

The Buddhist profile of India, Sri Lanka and China also provides an interesting context for understanding this relationship. According to the 2011 Census of India, Buddhists constituted around 0.7 per cent of India's population, amounting to approximately 8.4 million people. Despite this relatively

small proportion of Buddhists in India's population, India occupies a unique position because it is the land where Buddhism originated and where many of the most sacred Buddhist sites are located. Sri Lanka, on the other hand, has a predominantly Buddhist population, with Buddhism forming a central part of its cultural and national identity. The figures cited in the earlier literature indicate that around 70 per cent of Sri Lanka's population follows Buddhism. The country also has a strong monastic tradition, with thousands of Buddhist monasteries and a large community of monks. (World Focus Feb 2020)

China also has a large Buddhist population, and Chinese Buddhism, commonly associated with Mahayana and Han Buddhist traditions, represents a major stream of Buddhism in East Asia. Sri Lanka, however, is historically associated with the Theravada tradition. Thus, although China and Sri Lanka are both important Buddhist societies, their Buddhist traditions developed through different historical and cultural experiences. The same religion therefore took different institutional and cultural forms in different regions. India occupies a distinctive position in this wider Buddhist world because it is connected historically to the origins of both major Buddhist traditions and preserves many of the sacred sites associated with the Buddha.

India's advantage in this respect is not based simply on the number of Buddhist followers within its own population. Its greater strength lies in its civilisational geography. Bodh Gaya, where Siddhartha Gautama attained enlightenment; Sarnath, where he delivered his first sermon; Rajgir and Nalanda, which developed as important centres of Buddhist learning; and Kushinagar, associated with the Buddha's Mahaparinirvana, together form a sacred network for Buddhists across Asia. These places provide India with what may be described as a unique spiritual and civilisational leverage. The Buddhist Circuit therefore has significance not only for tourism but also for India's cultural diplomacy and engagement with Buddhist societies.

The historical development of Buddhist traditions further strengthens this connection. Buddhist philosophical and scholarly traditions developed through both Sanskrit and Pali. In India, Buddhist scholars produced important philosophical and literary works in Sanskrit, particularly during periods when Buddhist learning flourished at centres such as Nalanda and other ancient universities. At the same time, many of the Buddha's teachings, dialogues and early Buddhist accounts were preserved in Pali. This is particularly significant for Sri Lanka because the Theravada Buddhist tradition has played an important role in preserving and transmitting the Pali Canon and Buddhist scholarship.

Sri Lanka has historically been one of the most important centres of Theravada Buddhism. Buddhist learning, monastic institutions and the preservation of religious texts developed strongly in the island. The introduction of Buddhism to Sri Lanka is traditionally associated with the mission of Mahinda, during the reign of Emperor Ashoka, and the subsequent arrival of Sanghamitta with the sacred Bodhi tree. Over the centuries, Sri Lanka emerged as an important centre for Buddhist scholarship and the preservation of Buddhist traditions. The Sinhala language and literary culture also developed through long interaction with Pali and Sanskrit traditions, demonstrating the deep intellectual and cultural links between India and Sri Lanka.

This shared Buddhist heritage has important implications for contemporary diplomacy. India's position as the birthplace of Buddhism gives it a special opportunity to develop spiritual connectivity with Sri Lanka. Unlike purely economic or strategic engagement, spiritual relations are rooted in historical memory, pilgrimage, religious institutions and shared cultural traditions. Such relations can create a

deeper and more emotional form of connection between societies.

In this context, India's Buddhist connectivity can be understood as extending beyond conventional soft power. It represents a form of civilisational diplomacy that connects historical heritage with contemporary foreign policy. India can use Buddhist sites, religious exchanges, academic cooperation, monastic interaction and pilgrimage tourism to strengthen its relationship with Sri Lanka. This is particularly important because cultural and spiritual relations often continue to function even when political relations experience temporary difficulties.

The importance of Buddhist connectivity has also increased in the context of India's wider engagement with the Indo-Pacific and the Indian Ocean region. China and Sri Lanka share strong economic and strategic relations, and China has also developed extensive infrastructure and economic engagement in Sri Lanka. However, India possesses a different kind of advantage: a deep historical and civilisational connection rooted in Buddhism. This does not mean that cultural diplomacy can replace economic engagement or strategic cooperation. Rather, it provides an additional dimension through which India can strengthen its long-term relationship with Sri Lanka.

B. Cultural Diplomacy, People-to-People Contact and Strategic Trust Building

The civilisational and spiritual links between India and Sri Lanka have gradually been translated into more organised forms of cultural diplomacy. Cultural diplomacy today includes much more than traditional activities such as dance, music, literature and exhibitions. It increasingly involves religious heritage, pilgrimage, tourism, educational exchanges, language studies, institutional cooperation, connectivity and people-to-people contact. In the India–Sri Lanka context, these different dimensions together contribute to a broader process of relationship building.

The formal institutional foundation of contemporary cultural cooperation between the two countries was strengthened through the Cultural Cooperation Agreement signed by the Governments of India and Sri Lanka on 29 November 1977 in New Delhi. The agreement provided the basis for periodic cultural exchange programmes and cooperation in areas such as art, education, language and cultural heritage. Over the years, institutions such as the Indian Cultural Centre in Colombo have played an important role in promoting awareness of Indian culture through activities related to Indian music, dance, Hindi, yoga and other cultural traditions. (World Focus Feb 2020)

Several cultural programmes and events have further strengthened bilateral relations. The Festival of India in Sri Lanka, including cultural performances such as Nrityarupa, brought Indian artistic traditions to different parts of Sri Lanka. Similarly, cultural exchanges, dance performances and the establishment of institutions for cultural learning have contributed to greater interaction between the two societies. These activities may appear symbolic, but they help maintain regular contact between people and cultural communities.

Buddhist diplomacy has emerged as one of the most important areas of this cultural engagement. India and Sri Lanka jointly commemorated the 2600th year of the attainment of enlightenment by Lord Buddha, also known as Sambuddhatva Jayanthi. Such commemorations highlighted the common spiritual heritage of the two countries. The celebration of Vesak, or Buddha Purnima, has also provided an important occasion for cultural and religious cooperation. Vesak symbolically connects important events in the life of the Buddha—his birth, enlightenment and Mahaparinirvana—and is

celebrated with great reverence in Sri Lanka. (World Focus Feb 2020)

The exchange and exposition of Buddhist relics has become a particularly powerful instrument of spiritual diplomacy. Sacred relics from India have been displayed in Sri Lanka on several occasions. The exposition of Kapilavastu relics in 2012 formed part of the commemoration of the 2600th anniversary of the Buddha's enlightenment, while sacred relics from Sarnath were exhibited in Sri Lanka during Vesak celebrations in 2018. These events attracted large numbers of devotees and demonstrated how religious heritage can directly strengthen people-to-people relations.

A particularly significant recent development took place following Prime Minister Narendra Modi's State Visit to Sri Lanka in April 2025. During the visit, India announced assistance for the development of the Sacred City Complex in Anuradhapura, one of the most important Buddhist heritage centres in Sri Lanka. India also announced support for the development of the Thirukoneswaram Temple in Trincomalee and the Sita Eliya Temple complex in Nuwara Eliya. These initiatives are important because they recognise both Buddhist and Hindu civilisational heritage and therefore broaden the scope of cultural diplomacy beyond a single religious tradition. The visit also included the announcement of a comprehensive capacity-building programme covering 700 Sri Lankans annually. (Prime Minister of India 2025)

Another major initiative was the decision to bring the sacred Devnimori Relics of Lord Buddha from Gujarat to Sri Lanka. The exposition, announced during Prime Minister Modi's 2025 visit, took place at the Gangaramaya Temple in Colombo in February 2026. The event attracted more than one million devotees and became a major example of how shared religious heritage can be used to deepen contemporary cultural and people-to-people relations. The exposition was especially significant because it represented the first public veneration of these relics outside India. (Government of India, Ministry of Culture 2026)

Language and scholarship are also important components of Buddhist cultural diplomacy. The historical connection between Pali, Sanskrit and Buddhist scholarship provides a strong basis for academic cooperation between India and Sri Lanka. In 2024, India granted Classical Language status to Pali, a development welcomed by Sri Lankan Buddhist monks and scholars. The decision has opened possibilities for greater research cooperation between academic and monastic communities in the two countries. Recent initiatives have also included the publication of Pali learning material and the Sinhala translation of Jataka Tales, further linking Buddhist scholarship with contemporary cultural exchange. (High Commission of India, Colombo 2024)

Cultural diplomacy is also increasingly connected with religious tourism and physical connectivity. India has developed the Buddhist Circuit to connect important sites associated with the life of the Buddha. For Sri Lankan pilgrims, easier access to Bodh Gaya, Sarnath, Kushinagar, Rajgir and Nalanda has both religious and symbolic significance. The inauguration of the Colombo–Kushinagar flight in 2021 was therefore more than a transport initiative. It represented an effort to strengthen direct spiritual connectivity between Sri Lankan Buddhists and important Buddhist sites in India. (Prime Minister of India 2025)

Similarly, efforts to improve connectivity through air routes and maritime links can also support cultural diplomacy. Connectivity between Chennai and Jaffna, the Colombo–Kushinagar connection, and the possibility of strengthening maritime links such as the Rameswaram–Talaimannar route demonstrate that cultural relations are increasingly linked with mobility. In this sense, cultural diplomacy

is no longer confined to exhibitions, music or dance. It also involves the movement of pilgrims, tourists, students, scholars and cultural communities.

The Ramayana Trail provides another important example of this broader approach. India and Sri Lanka share a civilisational connection through the Ramayana tradition, and several sites in Sri Lanka have become associated with Ramayana tourism. The development of the Ramayana Trail has the potential to encourage religious tourism, contribute to economic activity and strengthen awareness of shared cultural narratives. Similarly, Buddhist and Hindu religious sites can be developed through better infrastructure, connectivity and tourism facilities. Such initiatives can simultaneously promote cultural understanding, people-to-people interaction and local economic development.

The relationship between cultural diplomacy and tourism is therefore significant. Religious tourism brings together several dimensions: civilisational heritage, people-to-people contact, economic benefits and diplomatic engagement. A Buddhist pilgrim travelling from Sri Lanka to Bodh Gaya or Kushinagar does not simply participate in tourism; such travel also strengthens emotional and historical connections between societies. Similarly, Indian tourists visiting Ramayana-related sites in Sri Lanka develop a greater awareness of Sri Lanka's cultural and religious landscape.

The importance of people-to-people contact deserves special attention in this context. Cultural exchanges, religious pilgrimages, academic programmes, student interaction and tourism create direct links between ordinary people. Such interaction can contribute to what may be described as a **security community**, where societies develop greater familiarity, mutual confidence and a shared interest in maintaining peaceful relations. This is an important idea because security is not created only through military agreements or strategic partnerships. Long-term security can also be supported by social trust, cultural familiarity and sustained human interaction.

Therefore, people-to-people relations should not be treated as a secondary aspect of foreign policy. They can become an important instrument for strengthening bilateral stability. When cultural, religious and social communities maintain regular contact, they create constituencies that support continued cooperation. Buddhist pilgrims, scholars, monks, students, artists and tourists can all contribute to this broader network of relations.

This understanding is particularly important in the India–Sri Lanka relationship. Political relations between states may sometimes be influenced by domestic politics, strategic competition or differences of interest. However, cultural and spiritual connections often provide a deeper and more durable foundation. They create what may be called strategic trust-building mechanisms. Through regular cultural interaction, countries can reduce misunderstanding and create a more positive environment for cooperation in other areas.

The concept of cultural diplomacy can also be understood through Joseph Nye's idea of soft power. (Nye J.S.Jr. 2004) Nye explained that countries can influence others not only through military or economic power but also through attraction, culture and values. In the case of India and Sri Lanka, however, cultural diplomacy goes beyond the simple projection of soft power. It is based on an already existing civilisational relationship. India is not creating an entirely new cultural connection with Sri Lanka; rather, it is revitalising and institutionalising historical connections that have developed over many centuries.

For this reason, Buddhist diplomacy and cultural connectivity should not be viewed merely as symbolic

activities. They can support broader strategic objectives by creating goodwill and strengthening trust. Cultural relations may contribute indirectly to economic cooperation, tourism, educational exchanges and even strategic understanding. Thus, civilisational heritage, religious tourism, people-to-people contact, economic benefits, mutual understanding and strategic interests are interconnected rather than separate dimensions.

The relationship can be understood as a broader chain:

Shared Civilisational Heritage '! Spiritual Connectivity '! Religious Tourism and Mobility '! People-to-People Contact '! Mutual Understanding '! Trust Building '! Stronger Bilateral Cooperation '! Support for Long-Term Strategic Stability

This does not suggest that cultural diplomacy alone can resolve geopolitical competition or strategic differences. India and Sri Lanka continue to operate in a complex regional environment shaped by the rise of China, maritime competition, economic interdependence and Indo-Pacific geopolitics. However, cultural diplomacy provides an important complementary mechanism. While geostrategy focuses on location, maritime routes and security interests, cultural diplomacy focuses on relationships, historical memory and human connections.

In this sense, the three dimensions of this study are closely interconnected. Sri Lanka's geostrategic location makes it important in the Indian Ocean; regional geopolitics explains the strategic competition surrounding the island; and cultural diplomacy provides an additional framework through which India and Sri Lanka can build trust and cooperation. Cultural diplomacy therefore adds a human and civilisational dimension to what might otherwise appear to be only a relationship shaped by strategic calculations.

The Interface of Geostrategy, Regional Geopolitics, and Cultural Diplomacy

The preceding analysis demonstrates that Sri Lanka's geographical position, maritime significance, and increasing geopolitical relevance have made India-Sri Lanka relations an important component of the evolving regional order. However, strategic partnerships cannot be sustained exclusively through military capabilities, economic investments, or geopolitical calculations. They also require legitimacy, mutual confidence, societal acceptance, and a sense of shared interests. It is at this intersection that cultural diplomacy assumes strategic significance. In the India-Sri Lanka context, cultural diplomacy should therefore not be understood merely as an instrument of cultural promotion or conventional soft power; rather, it can function as a complementary strategic instrument through which India builds trust, reduces geopolitical anxieties, and creates the social foundation for a sustainable partnership.

(A) Cultural Diplomacy Beyond Conventional Soft Power

Joseph Nye's concept of soft power emphasizes the ability of a state to influence others through attraction rather than coercion or payment (Nye, 2004). Cultural diplomacy constitutes an important component of such attraction. However, in the India-Sri Lanka context, its strategic relevance extends beyond the conventional understanding of soft power. Shared Buddhist heritage, cultural institutions, pilgrimages, educational exchanges, yoga, Ayurveda, literature, and people-to-people contacts create relationships that operate at the societal level and therefore have the potential to support diplomatic objectives over the long term. Cultural diplomacy, in this sense, becomes a deeper

form of engagement that connects state interests with historical memory, civilizational identity, and social interaction.

This broader understanding is particularly important because India-Sri Lanka relations are not based only on contemporary political or economic interests. They are also supported by long-standing cultural, civilizational, geographical, and people-to-people connections. Cultural engagement can therefore provide a social and emotional foundation to bilateral relations that cannot be created through strategic agreements alone. As Nye (2004) argues, attraction and legitimacy can become important sources of influence in international relations. In the India-Sri Lanka context, cultural diplomacy adds a civilizational dimension to this influence and strengthens the long-term foundations of bilateral cooperation.

(B) Cultural Diplomacy as a Strategic Confidence-Building Measure

One of the most important contributions of cultural diplomacy is its capacity to function as a strategic confidence-building measure (CBM). Strategic trust cannot be generated solely through defence agreements, military exercises, or high-level political dialogue. It also develops through familiarity, regular interaction, shared experiences, and the perception that a neighbouring power respects the cultural identity and sovereignty of its partner.

The shared civilizational heritage between India and Sri Lanka provides an important basis for such confidence-building. Cultural and spiritual engagement creates an atmosphere of goodwill in which sensitive political and strategic issues can be addressed with greater mutual understanding. In this sense, cultural diplomacy operates as an informal but significant mechanism of strategic reassurance. It helps reduce suspicion and strengthens the perception that bilateral relations are based not merely on immediate geopolitical interests but also on deeper historical and societal connections.

This interpretation can also be understood through the broader idea of cooperative security. Karl Deutsch's concept of a security community is relevant here because it emphasizes the importance of social communication, mutual understanding, and peaceful expectations among societies (Deutsch et al., 1957). Regular cultural interaction and people-to-people engagement may not directly resolve strategic disputes, but they can contribute to an environment in which mutual confidence and peaceful cooperation become easier to sustain. Thus, cultural diplomacy can complement formal diplomacy by strengthening the societal foundations of strategic trust.

(c) Cultural Diplomacy as a Means of Mitigating Geopolitical Competition

The contemporary Indian Ocean is characterized by the presence and interaction of multiple powers. China's expanding economic footprint in Sri Lanka, India's strategic interests, and the wider involvement of Indo-Pacific powers have created a complex geopolitical environment. In such circumstances, excessive dependence on strategic competition can generate perceptions of rivalry, insecurity, and pressure on smaller states.

Cultural diplomacy offers an alternative channel of engagement that is less confrontational and more socially rooted. It does not replace economic cooperation, security engagement, or geopolitical strategy; rather, it complements them by providing a form of engagement that is based on attraction, shared heritage, and societal goodwill. For India, this is particularly significant in Sri Lanka because cultural and civilizational connections represent a form of relationship that cannot be understood only through the language of strategic competition.

Therefore, cultural diplomacy can help create a more balanced environment in which geopolitical differences do not completely dominate the bilateral relationship. By strengthening mutual trust and social connections, it can reduce the possibility that strategic competition alone will define perceptions of India-Sri Lanka relations. Cultural diplomacy thus becomes an important supporting instrument of India's broader regional strategy—not as a substitute for geopolitics, but as a means of moderating its negative effects and creating greater space for cooperation.

India as a Trusted Partner: Sri Lanka's Perspective

For Sri Lanka, India is important not merely as a neighbouring country but as a geographically proximate, historically connected and strategically relevant partner. While the earlier sections examined Sri Lanka's strategic importance for India, it is equally important to understand why India matters to Sri Lanka. From Sri Lanka's perspective, India's importance rests on geographical proximity, civilizational links, economic opportunities, security capabilities, humanitarian support and a shared regional future. India is officially described as Sri Lanka's closest neighbour, and the relationship between the two countries is rooted in more than 2,500 years of historical and civilizational interaction. India holds significant importance for Sri Lanka from the following perspectives:

- **Geographical Proximity and the Natural Neighbourhood**

Sri Lanka's geographical position as an island nation makes India its most immediate and natural neighbour. Unlike continental states, Sri Lanka does not share land borders with multiple countries. Its closest geographical connection is with India across the Palk Strait. This proximity gives India a natural advantage in terms of transportation, communication, trade, emergency assistance and humanitarian response.

Geography, therefore, creates a practical reality: in times of crisis, India is among the countries most capable of responding quickly. This geographical closeness cannot be replaced by distant partnerships. As Jawaharlal Nehru observed in the context of India-Sri Lanka relations, geography compels close cooperation, while history and common culture further strengthen that relationship. (Nehru Archive 1950)

- **Civilizational and Historical Familiarity**

India and Sri Lanka are connected by deep historical, cultural, religious, linguistic and social links. The movement of people, ideas and traditions across the Palk Strait has continued for centuries, creating a degree of civilizational familiarity between the two societies. Buddhism, linguistic traditions, Ramayana connections and wider cultural exchanges have already been discussed in earlier sections of this study; from Sri Lanka's perspective, however, their importance lies in the fact that they create a foundation of familiarity and mutual understanding.

Thus, India's relationship with Sri Lanka is not based solely on contemporary strategic interests. It is supported by a deeper civilizational memory. Such historical familiarity can make cooperation easier because relations are not built entirely from the beginning on political or economic calculations. The official Indian and Sri Lankan descriptions of bilateral relations similarly emphasize the long-standing historical, cultural, religious, spiritual and linguistic connections between the two countries.

- **India as a Capable and Immediate Partner**

India's importance for Sri Lanka also arises from its capabilities. As a large regional power with

significant economic resources, technological capacity, developmental experience and military capabilities, India is in a position to assist Sri Lanka during emergencies and periods of instability.

The Sri Lankan economic crisis demonstrated the importance of having a reliable partner in the immediate neighbourhood. Although the crisis resulted from a combination of structural economic weaknesses, debt vulnerabilities and policy challenges, it highlighted the risks associated with excessive dependence and the importance of diversified and reliable partnerships. (World Bank Sri Lanka Development update 2023)

For Sri Lanka, therefore, India represents not merely a powerful neighbour but also a country that can provide relatively immediate support because of geographical proximity and established institutional links. This makes India particularly important during humanitarian, economic or security-related emergencies.

- **India's Neighbourhood Approach and Respect for Sovereignty**

Another important factor is India's approach towards its neighbours. Sri Lanka occupies an important place in India's Neighbourhood First policy, which seeks to strengthen cooperation, connectivity, trade and people-to-people relations within the region.

India's foreign policy tradition has also emphasized peaceful coexistence, mutual respect and respect for sovereignty and territorial integrity. The principles associated with Panchsheel provide an important normative framework for such relations. For a smaller neighbouring state like Sri Lanka, this is significant because a stable partnership requires confidence that cooperation will not necessarily undermine national autonomy.

Therefore, India's value as a partner lies not simply in its size and capabilities but also in the possibility of building a relationship based on mutual respect and shared interests rather than a hierarchical relationship.

- **Indian Philosophical Foundations and the Idea of Partnership**

An important dimension that deserves particular attention is the philosophical foundation of Indian civilization. India's approach towards international relations is not based only on power and material interests; it is also influenced by broader philosophical ideas emphasizing coexistence, dialogue and collective welfare.

The idea of **Vasudhaiva Kutumbakam**—the world as one family—reflects a wider vision of interconnectedness and shared responsibility. Similarly, the **Rigvedic idea of “Â No Bhadrâ% Kratavo Yantu Viœvata%”** expresses openness to noble ideas from all directions. The spirit of **“Sangacchadhvam Samvadadhvam”** emphasizes moving together and engaging in dialogue, while the broader Indian tradition of respect for diverse beliefs encourages coexistence rather than uniformity.

These philosophical traditions are important in understanding India's potential role as a regional partner. They suggest an approach based on dialogue, cooperation and coexistence. Although foreign policy is naturally shaped by national interests, these civilizational ideas provide an important normative foundation for India's engagement with its neighbours.

For Sri Lanka, this philosophical orientation can strengthen the idea of India as a partner with whom cooperation can be based not only on strategic calculations but also on principles of dialogue, mutual respect and collective progress.

- **Economic Opportunities and Market Access**

India's large economy and geographical proximity also make it an important economic partner for Sri Lanka. Access to the Indian market offers opportunities for trade, investment, tourism and commercial cooperation. The close geographical location can reduce the practical difficulties associated with transportation and connectivity compared with distant markets.

Sri Lanka's island geography makes maritime connectivity essential for its external economic relations, whereas India provides both maritime and extensive land connectivity with the wider region. Thus, closer engagement with India can potentially help Sri Lanka connect more effectively with South Asia and broader regional markets. Official sources describe the bilateral economic relationship as an important component of the wider India-Sri Lanka partnership.

- **A Strategic Partnership Without Strategic Dependence**

India's importance to Sri Lanka should not be understood as requiring Sri Lanka to depend exclusively on India or to limit its relations with other countries. Sri Lanka, as a sovereign state, has legitimate interests in maintaining diversified international partnerships. However, geographical realities, historical familiarity and practical experience make India a partner that Sri Lanka cannot easily overlook.

The value of India lies in the combination of several factors: geographical proximity, civilizational familiarity, economic capacity, security relevance and the ability to provide assistance during periods of difficulty. These factors together distinguish India from more distant external partners.

Therefore, from Sri Lanka's perspective, a stable and cooperative relationship with India can contribute to economic resilience, strategic stability and a more balanced foreign policy. India and Sri Lanka may have different sizes, capabilities and interests, but geographical proximity and centuries of interaction make constructive cooperation a strategic necessity as well as a natural partnership.

Reimagining India–Sri Lanka Relations: Towards a Sustainable and Multidimensional Partnership

The preceding analysis shows that India–Sri Lanka relations are shaped by a combination of historical and civilizational ties, contemporary geopolitics, maritime security, economic interdependence and cultural connectivity. Sri Lanka's strategic importance has increased considerably in the changing geopolitical environment of the Indian Ocean, while the growing presence of external powers has created new challenges for its foreign policy. In this context, the future of bilateral relations requires a broader approach that goes beyond narrow security concerns or purely transactional engagement. A sustainable India–Sri Lanka partnership should therefore combine strategic interests with economic cooperation, cultural diplomacy, technological connectivity and people-to-people relations.

Policy Suggestions

The first priority should be to develop a comprehensive India–Sri Lanka strategic partnership that integrates security, economic, cultural, technological and social dimensions. India's Neighbourhood First policy and the MAHASAGAR vision provide an important foundation, while Sri Lanka's concerns regarding sovereignty and strategic autonomy must also be respected. The objective should not be to seek Sri Lanka's exclusive strategic alignment, but to strengthen India's position as a reliable, predictable and development-oriented partner. Recent bilateral initiatives, including cooperation in

research, education, energy, digital transformation and defence, provide a useful basis for expanding this partnership.

A second priority should be the development of Cultural Diplomacy 2.0. Traditional cultural diplomacy has largely focused on festivals, exhibitions, language promotion and religious exchanges. The next phase should be broader and more technology-enabled, combining education, tourism, youth exchanges, digital platforms, academic cooperation, creative industries and heritage conservation. India's cultural relationship with Sri Lanka, based on more than 2,500 years of historical and civilizational interaction, provides a strong foundation for such an approach. Existing initiatives relating to Buddhist heritage, cultural centres, academic exchanges and sacred relic exhibitions can further strengthen this process.

A particularly promising initiative would be the creation of a Buddhist Heritage Corridor linking important Buddhist sites in India and Sri Lanka. Bodhi Gaya, Sarnath, Kushinagar and other major Indian Buddhist centres could be connected with Anuradhapura, Kandy and other significant Sri Lankan sites through coordinated pilgrimage, tourism, scholarship and heritage-conservation programmes. Such a corridor could have both cultural and economic benefits by promoting religious tourism, creating employment, encouraging archaeological cooperation and increasing interaction among pilgrims and scholars. India's recent exhibition of the Devnimori Buddha relics in Colombo in February 2026, which attracted significant public participation, also demonstrates the continuing social relevance of Buddhist cultural diplomacy.

Alongside this, a Ramayana–Buddhist Tourism Circuit could provide a distinctive model of shared cultural tourism. The Ramayana tradition has long served as an important cultural reference between India and Sri Lanka, while Buddhism represents a deeper and historically established civilizational connection. Rather than presenting these traditions as a single homogeneous cultural narrative, such initiatives should recognise their different interpretations and promote mutual understanding through tourism, scholarship and cultural exchange.

Overall, the future of India–Sri Lanka relations should be based on a balanced and multidimensional partnership in which strategic cooperation is supported by economic engagement, cultural understanding and people-to-people contact. Such an approach can make the relationship more resilient, reduce mistrust and help both countries respond more effectively to the changing geopolitical environment of the Indian Ocean.

Conclusion

The study demonstrates that India–Sri Lanka relations can no longer be understood through a single strategic, economic or cultural perspective. The relationship is shaped by the interaction of geostrategy, regional geopolitics and cultural diplomacy. Sri Lanka's strategic location in the Indian Ocean makes it important for India's security and regional interests, while changing geopolitical competition has added new complexities to the bilateral relationship.

The study further shows that a purely security-centred or transactional approach is not sufficient for building a stable and long-term partnership. India's engagement with Sri Lanka needs to balance its legitimate strategic interests with respect for Sri Lanka's sovereignty, domestic sensitivities and strategic autonomy. In this context, cultural diplomacy assumes greater importance. Shared

civilizational links and people-to-people relations can strengthen trust and provide a social foundation for bilateral cooperation.

The central conclusion of the study is that the future of India–Sri Lanka relations lies in developing a balanced, inclusive and multidimensional partnership. Strategic cooperation, economic engagement and cultural connectivity should not be treated as separate areas, but as interconnected elements of a broader relationship. A partnership based on mutual trust, equality and shared interests can help both countries manage regional geopolitical challenges and contribute to greater stability in the Indian Ocean region.

References

- Chakrabarti Manas, 2020 Feb. India and Sri Lanka vis Avis China. World focus. ISSN 2230-8458
- Desai, S. N. (1970). Rāmāyaṅa—An instrument of historical contact and cultural transmission between India and Asia. *The Journal of Asian Studies*, 30(1), 5–20.
- Deutsch, K. W., Burrell, S. A., Kann, R. A., Lee, M., Lichterman, M., Lindgren, R. E., Loewenheim, F. L., & Van Wagenen, R. W. (1957). *Political community and the North Atlantic area: International organization in the light of historical experience*. Princeton University Press.
- Elman, M. F. (1995). The foreign policies of small states: Challenging neorealism in its own backyard. *British Journal of Political Science*, 25(2), 171–217. <https://doi.org/10.1017/S0007123400007146>
- Government of India. (2021). *Brief on India–Sri Lanka relations*. Ministry of External Affairs.
- Green, N. (Ed.). (2025). *Serendipitous translations: A sourcebook on Sri Lanka in the Islamic Indian Ocean*. University of Texas Press.
- Gunasekara, S. N. (2015). Bandwagoning, balancing, and small states: A case of Sri Lanka. *Asian Social Science*, 11(28), 212–220. <https://doi.org/10.5539/ass.v11n28p212>
- Government of India, Ministry of Culture. (2026, February 4). India strengthens cultural ties with Sri Lanka through exposition of Devnimori Buddha relics. Ministry of Culture, Government of India
- Henry, J. W. (2022). *Ravana's kingdom: The Ramayana and Sri Lankan history from below*. Oxford University Press.
- High Commission of India, Colombo. (2022, September 20). Statement by High Commission of India. Government of India.
- High Commission of India, Colombo. (2022, July 15). India supports early solution in Sri Lanka through democratic means and values and a constitutional framework. Government of India.
- Harris, H. B., Jr. (2016). Remarks at the Sri Lanka Galle Dialogue. U.S. Pacific Command.
- High Commission of India, Colombo. (2024, October 23). Sri Lanka's monastic community and Buddhist scholars welcome India's decision to grant classical language status to Pali. High Commission of India, Colombo
- High Commission of India, Colombo. (2026, February 4). Exposition of the Holy Devnimori relics. High Commission of India, Colombo
- High Commission of India, Colombo. (2026, February 11). Over a million devotees venerate the Holy Devnimori relics: Exposition concludes successfully. High Commission of India, Colombo
- High Commission of India, Colombo. (n.d.). India–Sri Lanka bilateral relations. High Commission of India, Colombo
- High Commission of India, Colombo. (n.d.). India–Sri Lanka cultural relations. High Commission of India, Colombo

- High Commission of India, Colombo. India-Sri Lanka Bilateral Relations.
- High Commission of India, Colombo. India-Sri Lanka Cultural Relations.
- Indian Express. (2019, November 29). Won't allow third country affect our ties: Gotabaya on India's China worry.
- Jeff smith (2019). "Sri Lanka: A test case for the free and open Indo-pacific strategy" Available at <https://www.heritage.org/asia/report/Sri-Lanka-test-case-the-free-and-open-indo-pacific-strategy>,
- Jawaharlal Nehru Archive (1950), Jawaharlal Nehru, "India and Sri Lanka", speech delivered at a public perception in Colombo, 15 January 1950.
- Keohane, R. O., & Nye, J. S. (1987). Power and interdependence revisited. *International Organization*, 41(4), 725–753.
- Kaplan, R. D. (2010). *Monsoon: The Indian Ocean and the future of American power*. Random House.
- Ministry of External Affairs, Government of India. (2015). *Security and Growth for All in the Region (SAGAR)*. Government of India.
- Ministry of External Affairs, Government of India. (2024). *India–Sri Lanka bilateral relations*. Government of India.
- Ministry of Foreign Affairs, Foreign Employment and Tourism, Sri Lanka. (2026). *Economic affairs division: China—Bilateral trade and investment relations*. Government of Sri Lanka.
- Molis, A. (2006). The role and interests of small states in developing European security and defence policy. *Baltic Security & Defence Review*, 8, 81–100.
- Molis, A. (2006). The role and interests of small states in developing European security and defence policy. *Baltic Security & Defence Review*, 8, 81–100.
- Ministry of External Affairs, Government of India. (2025). *India–Sri Lanka bilateral relations*. Government of India.
- Ministry of Foreign Affairs, Foreign Employment and Tourism, Sri Lanka. (2017). *Sri Lanka's role in the Indian Ocean and the changing global dynamic: Speech by Deputy Foreign Minister Dr. Harsha de Silva at the Institute of South Asian Studies*. Government of Sri Lanka.
- Ministry of Foreign Affairs
- Ministry of External Affairs, Government of India. (n.d.). *India–Sri Lanka cultural relations*. Consulate General of India, Jaffna. Consulate General of India, Jaffna
- Ministry of External Affairs, Government of India. *India and Neighbours: Sri Lanka*.
- National Transport Commission, Sri Lanka. (2024). *National transport statistics 2024*. National Transport Commission.
- Prime Minister of India. (2025). *List of outcomes: Visit of Prime Minister to Sri Lanka*. Prime Minister of India
- Prime Minister of India. (2025). *PM holds bilateral talks with President of Sri Lanka*. Prime Minister of India
- Rosenau, J. N. (1966). Pre-theories and theories of foreign policy. In R. B. Farrell (Ed.), *Approaches to comparative and international politics* (pp. 27–92). Northwestern University Press.
- Sri Lanka Coast Guard. (2026). *Maritime safety*. Government of Sri Lanka.
- Tessman, B. F. (2012). System structure and state strategy: Adding hedging to the menu. *Security Studies*, 21(2), 192–231. <https://doi.org/10.1080/09636412.2012.679203>
- United Nations Economic and Social Commission for Asia and the Pacific. (2026). *National strategy and action plan for sustainable maritime transport of Sri Lanka (2026–2035)*. United Nations ESCAP.

Principal

Krishna Devi Girls Degree College, Lucknow



Security Systems in Libraries: Protecting Knowledge, Preserving Access

Akhil Sharma

Abstract- Libraries are built on open access, and that openness is both their greatest strength and their weakest point. A collection anyone may use is also one anyone may damage or steal. This paper examines how library security has grown from door checks and ownership stamps into mixed systems combining building design, electronic detection, network defences and trained staff. Seven studies published between 2008 and 2025, drawn from Nigeria, Ghana, India, Sweden and the United States, are reviewed to show what is known and where gaps remain. The paper then describes the main types of security system in use, including electronic article surveillance, radio frequency identification, closed circuit television, access control and cybersecurity measures, and maps them onto the sections of a library, since a rare book room and a children's corner do not need the same protection. The uses, benefits and disadvantages of these systems are then discussed. The main finding is that technology alone does not make a library secure. Policy, staff training and honest attention to user privacy matter just as much, and libraries that install equipment without them often gain less than they expect.

Keywords- Library security (LS); radio frequency identification (RFID); closed circuit television; electronic article surveillance (EAS); cybersecurity (CS); patron privacy.

1. Introduction- For most of their history, libraries worried about two things: books that walked out of the door and readers who made too much noise. Those worries remain, but they now sit alongside a much wider set of concerns. A library today may hold rare manuscripts worth more than the building itself, thousands of licensed electronic journals, borrowing records for tens of thousands of readers, and a reading hall that stays open late into the evening. Each needs a different kind of protection. The loss of library material is not a small problem. Studies from several countries report that theft, mutilation and deliberate misplacement remain common in academic libraries, and that reference works and journals suffer most because they cannot be borrowed (Ajala & Oyeboade, 2008; Pandey, 2019). When one page is cut out of a journal, the item is often useless for every reader who comes after. Digital collections face a parallel threat. The ransomware attack on the British Library in October 2023 closed catalogues and services for months and showed that a cyber incident can shut a library as effectively as a fire (Houghton et al., 2025).

Security also carries a cost that is not only financial. Cameras, gates and identity checks change how a reading room feels. Libraries have long defended the right of readers to seek information without being watched or recorded, and every new security tool tests that commitment (American Library Association, 2019). The task is not to install more equipment, but to choose

measures that protect the collection and the people in the building while keeping the library open and welcoming. This paper describes the security systems now available to libraries, explains where and how they are applied, and weighs their benefits against their drawbacks. It draws on published research rather than vendor claims, with particular attention to studies from India and Africa, where budgets are tighter and the choices harder.

2. Literature Review- Research on LS has moved through three phases: early work counted losses, later work evaluated the equipment brought in to stop them, and recent work asks whether the equipment itself creates new problems.

Ajala and Oyeboade (2008) surveyed 120 library staff and security personnel across four academic institutions in south western Nigeria and received 78 usable replies. Reference materials, journals and newspapers suffered the heaviest losses, and almost all respondents agreed that theft and mutilation threatened their collections. The authors recommended working detection systems and, in a point often forgotten, better photocopying services, since readers mutilate journals mainly when copying is slow or expensive.

Senyah and Lampsey (2011) shifted attention from books to people. Their case study at the Kwame Nkrumah University of Science and Technology Library in Kumasi, Ghana, used questionnaires, interviews and observation, with 84 responses and a 67.7% response rate. They found that a library, although a service institution, is not free of threats to the safety of its own staff, and that existing measures were not enough.

Ferguson et al. (2015) interviewed 18 people across ten libraries that had introduced RFID, focusing on the decision making process rather than the technology. Ethical and privacy questions were not a central part of how these libraries chose and installed their systems. The authors argued that libraries must decide who inside the organisation owns the ethics of a new technology, since in practice nobody did.

Gupta and Madhusudhan (2021) surveyed librarians in 24 Indian academic libraries. Closed circuit television (CCTV) was rated useful against theft, mutilation and vandalism, and more than half of the institutions had a written CCTV policy. The weakness lay in follow through, as most libraries offered no compulsory staff training and had no method for keeping the policy current.

Wang et al. (2023) approached the question from the reader's side. Their national survey, sent to more than 12,500 librarians in United States public library systems, examined how patron privacy is actually protected rather than how policy says it should be. Protections varied sharply with the size of the library and the community served, which suggests that privacy in practice depends on local resources.

Ceccato et al. (2023) combined a visitor survey, staff interviews and incident records at a public library in Stockholm. Staff felt least safe with visitors under the influence of alcohol or drugs, or when facing groups of young people, while visitors saw disturbances but still described the library as broadly safe. The authors recommended stronger informal social control, staff training and cooperation with local agencies.

Farid et al. (2025) reviewed digital information security policy in academic libraries between 2010 and 2022. Some libraries had full frameworks covering data protection, backups, staff training and defences against malware and social engineering. Many others had no formal policy, or applied

one inconsistently. Budget limits, weak technical support, gaps in staff readiness and the speed of technological change were the barriers most often named.

These studies show a consistent pattern. The equipment works reasonably well when maintained, but the human and policy layers around it are thin. Very little research follows a library over time to test whether a security investment reduced losses, and almost none weighs cost against the value of what is saved.

3. Types of Security Systems in Libraries

3.1 Architectural and physical security- The cheapest security measure is good design. A single controlled entrance, a counter placed where staff can see who comes and goes, sight lines that leave no hidden corners, and even lighting all reduce opportunity before any device is switched on. Lockable cabinets, window grilles and controlled temperature in closed stacks belong to the same layer. Disaster planning also counts as physical security, since floods and fires destroy more material in one event than thieves take in a decade, yet a survey of national libraries found only 39 out of 177 with a disaster plan (McIlwaine, 2006).

3.2 EAS- EAS is the familiar gate at the library door. A thin magnetic strip hidden in the spine or gutter of each item is desensitised when the item is issued and reactivated when it is returned, so an item carried out with an active strip sets off an alarm. Three technologies are common: electromagnetic strips, radio frequency labels and acoustomagnetic systems. Electromagnetic strips suit libraries because they are thin, cheap and can be switched on and off repeatedly without damage.

3.3 RFID- RFID goes further than EAS. A tag holding a small chip and antenna is fixed inside each item and carries an identifier that a reader can pick up without line of sight, so the same tag handles security, issue and return, and stock taking at once. Staff can inventory a shelf by walking past it with a handheld reader instead of pulling out every book. Chanda and Sinha (2019) reported that academic libraries in North East India that adopted RFID saw faster circulation, easier stock verification and better theft detection.

RFID also brings risks that a magnetic strip does not. Because a tag answers any reader that queries it, someone outside the library could in principle scan a bag and learn what a person is carrying. Molnar and Wagner (2004) showed that this risk is real even without access to the library database, and named private authentication as the central unsolved problem. The American Library Association (2019) advises libraries to store as little data as possible on the tag, to tell readers that tags are in use, and to protect the link between tag number and borrower record.

3.4 Access control and user authentication- Access control decides who may enter which space and use which resource. Physically it means turnstiles, swipe or smart cards, keypad locks on staff areas, and in some libraries biometric readers using fingerprint or iris patterns. Kumbargoudar and Mestri (2008) compared RFID, electromagnetic and smart card systems and argued that the right choice depends on cost, the user community and the parent institution rather than technical sophistication. Digitally it means usernames, passwords, single sign on and multi factor authentication for remote access to licensed databases.

3.5 Closed circuit television- CCTV covers entrances, corridors, stack areas, photocopy

points and cash counters, using high definition cameras, motion triggered recording and remote viewing. Indian academic librarians regard it as effective (**Gupta & Madhusudhan, 2021**), but a camera is only worth what the surrounding practice makes it: who watches the screen, how long recordings are kept and who may request them. **Newell and Randall (2013)** described a United States public library system that removed all its cameras in 2011 after uncomfortable police requests for footage.

3.6 CS and data protection- Digital collections and user records need their own defences: firewalls, encrypted connections, regular patching, antivirus tools, separated backups and controlled administrator rights. **Corrado (2024)** treats library CS as a question of reader privacy rather than a purely technical matter, and identifies ransomware as the most damaging threat because it stops services rather than merely stealing data. **Houghton et al. (2025)** concluded that underfunding and weak threat identification, not exotic attacker skill, left the British Library exposed, while **Fiscus (2024)** drew the wider lesson that education holds valuable data on thin security budgets and that open reporting after an attack helps the whole sector learn.

3.7 Personnel based security- Staff remain the most flexible security system a library has. They watch the floor, check bags where policy allows, help readers before frustration turns into damage, and handle difficult situations calmly. Training matters. **Ceccato et al. (2023)** found staff confidence with intoxicated or aggressive visitors depended on preparation, and **Garner (2026)**, interviewing 59 staff across six Australian public library services, reported that repeated exposure to challenging behaviour caused stress and lasting strain where institutional support was missing.

3.8 Emerging technologies- Newer systems combine sensors, networks and analytics. **Adewojo and Monjolaoluwa (2025)** found that connected RFID and smart gates support self-service circulation with real time tracking, that environmental sensors let closed stacks be watched continuously for heat and humidity, and that dashboards bring several information streams together. They also named the obstacles: integration with older systems, capital and maintenance cost, and privacy. Artificial intelligence is now applied to video analysis for unusual movement and to network monitoring for irregular logins, although published evaluation in libraries is still thin.

4. Application of Security Systems in Different Sections- Security is not spread evenly across a library. Each section carries a different level of risk and a different tolerance for control.

The **entrance and circulation area** is the main checkpoint, holding the EAS or RFID gates, the primary camera and the staffed counter. Because every user passes through it, one well-placed member of staff prevents more loss here than any device. **Ameyaw et al. (2024)**, studying a university library in Ghana, traced its losses to this point, listing a weak security system, no cameras, too few staff and poor entrance monitoring as the main weaknesses. The **open stacks and reading rooms** need visibility more than hardware. Low shelving at sight line height, cameras at the ends of aisles, and staff who move through the floor rather than sit behind a desk all help. This is where mutilation happens, since a reader alone among the shelves can remove pages quietly. The **reference and periodical sections** hold material that cannot be borrowed, which makes them the most frequent targets in the studies reviewed above (**Ajala & Oyeboade, 2008**). Non circulating items should still carry tags, and affordable copying should be available nearby to remove the motive for damage. **Rare books, manuscripts and archives** require the tightest control: a separate supervised reading room, identity checks, lockers for bags and coats, delivery of one item at a time, inspection

before and after use, and detailed condition records. **Seppi and Skeem (2020)** analysed the 2018 thefts at Brigham Young University and set out reporting checklists and methods for proving that a recovered item belongs to an institution, which shows how much depends on good records rather than good locks.

The **digital section and server room** need door access control, environmental monitoring, network segmentation and backup copies kept away from the main site. **Farid et al. (2025)** found written policy here often absent, and policy is what makes backups happen on schedule.

The **children's section** calls for a different balance, since sight lines, controlled exits and staff presence protect young users while heavy surveillance would be inappropriate. **Staff areas and store rooms** are usually protected by card or key access, as they hold cash, equipment and unprocessed stock.

5. Discussion

5.1 Uses- Security systems serve several practical purposes. They deter and detect theft at the exit, control who enters restricted spaces, and provide a record that can be reviewed after an incident, whether a missing volume or an argument between users. They support stock control, since RFID readers verify shelf order and locate misplaced items. They protect user data and licensed content from unauthorised access, and protect staff by discouraging aggression and supplying evidence when a complaint is made. The same systems often double as management tools, producing visitor counts and use patterns that inform staffing and opening hours.

5.2 Benefits- The clearest benefit is reduced loss, which matters most for reference works and out of print items that cannot easily be bought again. The second is efficiency, since RFID shortens counter queues and cuts stock verification time, releasing staff for work that needs judgment. The third is confidence: when readers and staff feel the building is looked after they use it more freely, and **Ceccato et al. (2023)** found most visitors to a busy public library still judged it safe after witnessing disturbances. The fourth is continuity, since backups, patching and disaster planning let a library recover from an attack rather than lose years of work. Good records also aid recovery, as **Seppi and Skeem (2020)** showed that stolen rare material can be identified and returned when an institution has documented what it holds.

5.3 Disadvantages- The disadvantages are real. Cost comes first. Gates, tags, cameras and network defences need capital spending and then continuing spending on maintenance, licences and replacement, and **Farid et al. (2025)** named budget as the most common barrier to good practice. Small libraries often buy equipment and then cannot afford to keep it working.

Privacy is the second and more serious problem. Every system that identifies a reader creates a record, and records can be requested, leaked or misused. Tags may be readable outside the building (**Molnar & Wagner, 2004**), footage may be handed to police (**Newell & Randall, 2013**), and authentication logs show who read what and when. **Wang et al. (2023)** found wide variation in how well public libraries protect such records. Third, security can discourage use. A reader who must show identity documents, submit to a bag search and pass under a camera may simply not come back, and this falls hardest on people who already feel unwelcome. Heavier monitoring is also applied more often to homeless users, young people and minority groups, which

turns a neutral tool into an unequal one. Fourth, the technology is imperfect. Gates raise false alarms on tagged personal items and miss items whose strips have been removed, cameras record but do not prevent, and tags can be peeled out. A system trusted more than it deserves creates a false sense of safety.

Fifth, there is a burden on staff. **Ferguson et al. (2015)** found RFID adopted without deciding who owned the ethical questions it raised, and **Gupta and Madhusudhan (2021)** found CCTV installed without compulsory training. Equipment given to untrained staff produces alarms nobody answers.

6. Conclusion- LS has widened from a concern with missing books into a field covering buildings, collections, networks, records and people. The systems available are capable. Gates and RFID reduce loss and speed up routine work, cameras support investigation, access control protects restricted spaces, and cybersecurity measures keep digital services running. The research reviewed here shows just as clearly that technology is the easier half of the problem. Libraries that installed systems without written policy, training, or a decision about who is responsible for privacy gained less than they expected.

Several practical steps follow. Libraries should begin with a risk assessment of their own building and collection rather than a product catalogue. They should write and review a security and privacy policy stating what data is collected, how long it is kept and who may see it. They should budget for maintenance and training at the time of purchase, and hold as little personal data as the service allows, which is the cheapest privacy protection available. They should plan for disaster and cyber incidents in advance and test those plans. Above all, they should measure security decisions against the purpose of the library. A collection that is perfectly protected and hard to reach has not been saved. It has only been closed.

References

- Adewojo, A. A., & Monjolaoluwa, O. P. (2025). Smart library environments: IoT and automation for next-generation services. *Business Information Review*, 42(4), 232–237. <https://doi.org/10.1177/02663821251384884>
- Ajala, I. O., & Oyeboade, S. A. (2008). Theft and mutilation of library materials in Nigerian academic libraries. *Library & Archival Security*, 21(1), 21–32. <https://doi.org/10.1080/01960070802142827>
- American Library Association. (2019). *RFID in libraries: Privacy and confidentiality guidelines*. <https://www.ala.org/advocacy/intfreedom/statementspols/otherpolicies/rfidguidelines>
- Ameyaw, S., Amoah, C. N. E., & Frempong-Kore, A. (2024). Who are the culprits? Evaluation of theft and mutilation of academic library materials: Experience from the Walton Whaley Library. *International Journal of Librarianship*, 9(3), 47–74. <https://doi.org/10.23974/ijol.2024.vol9.3.378>
- Ceccato, V., Ercin, E., Hazanov, J., Elfström, S., & Sampaio, A. (2023). Safety in a public library: The perspective of visitors and staff. *Library Management*, 44(3/4), 229–245. <https://doi.org/10.1108/LM-12-2022-0127>
- Chanda, A., & Sinha, M. K. (2019). RFID technology in academic libraries of North-East India. *Library Philosophy and Practice*, Article 3005. <https://scholarworks.sjsu.edu/libphilprac/3005>
- Corrado, E. M. (2024). Cybersecurity and libraries. *Technical Services Quarterly*, 41(1), 82–95. <https://doi.org/10.1080/07317131.2023.2300530>
- Farid, G., Warraich, N. F., & Iftikhar, S. (2025). Digital information security management policy in academic libraries: A systematic review (2010–2022). *Journal of Information Science*, 51(4), 1000–1014. <https://doi.org/10.1080/01674844.2025.2471111>

doi.org/10.1177/01655515231160026

- Ferguson, S., Thornley, C., & Gibb, F. (2015). How do libraries manage the ethical and privacy issues of RFID implementation? A qualitative investigation into the decision-making processes of ten libraries. *Journal of Librarianship and Information Science*, 47(2), 117–130. <https://doi.org/10.1177/0961000613518572>
- Fiscus, M. (2024). Knowledge held hostage: What the British Library ransomware attack can teach us. *College & Research Libraries*, 85(5). <https://doi.org/10.5860/crl.85.5.26408>
- Garner, J. (2026). The hidden toll: Exploring the impact of challenging patron behaviors on Australian public library staff. *Public Library Quarterly*, 45(1), 51–69. <https://doi.org/10.1080/01616846.2024.2416271>
- Gupta, P., & Madhusudhan, M. (2021). CCTV as an efficient surveillance system? An assessment from 24 academic libraries of India. *Global Knowledge, Memory and Communication*, 70(4/5), 355–376. <https://doi.org/10.1108/GKMC-04-2020-0052>
- Houghton, F., Winterburn, M., & Oakley, K. (2025). The 2023 Rhysida ransomware attack on the British Library: Prioritisation, expertise, and funding issues. *Information Technology and Libraries*, 44(1). <https://doi.org/10.5860/ital.v44i1.17112>
- Kumbargoudar, P., & Mestri, M. (2008). Biometric security technology for libraries. *Journal of Information and Knowledge*, 45(1), 37–44. <https://doi.org/10.17821/srels/2008/v45i1/44161>
- McIlwaine, J. (2006). *IFLA disaster preparedness and planning: A brief manual* (International Preservation Issues No. 6). IFLA-PAC. <https://www.ifla.org/wp-content/uploads/2019/05/assets/pac/ipi/ipi6-en.pdf>
- Molnar, D., & Wagner, D. (2004). Privacy and security in library RFID: Issues, practices, and architectures. In *Proceedings of the 11th ACM Conference on Computer and Communications Security* (pp. 210–219). Association for Computing Machinery. <https://doi.org/10.1145/1030083.1030112>
- Newell, B. C., & Randall, D. P. (2013). Video surveillance in public libraries: A case of unintended consequences? In *Proceedings of the 46th Hawaii International Conference on System Sciences* (pp. 1932–1941). IEEE. <https://doi.org/10.1109/HICSS.2013.595>
- Pandey, R. K. (2019). Theft, mutilation and misplacement of academic library resources: A study of selected colleges of CSJMU, Kanpur, UP. *Library Philosophy and Practice*, Article 2755. <https://scholarworks.sjsu.edu/libphilprac/2755>
- Senyah, Y., & Lamprey, R. B. (2011). Personal security and safety in academic libraries: A case study of the Kwame Nkrumah University of Science and Technology Library, Kumasi, Ghana. *Library & Archival Security*, 24(2), 83–102. <https://doi.org/10.1080/01960075.2011.604642>
- Seppi, G., & Skeem, D. (2020). Picking up the pieces: Library processes and the theft of rare materials. *RBM: A Journal of Rare Books, Manuscripts, and Cultural Heritage*, 21(2), 98–118. <https://doi.org/10.5860/rbm.21.2.98>
- Wang, T., Chin, C.-L., Benner, C., Hayes, C. M., Wang, Y., & Bashir, M. (2023). Patron privacy protections in public libraries. *The Library Quarterly*, 93(3), 294–312. <https://doi.org/10.1086/725069>

Research Scholar

Department of Library and Information Science

Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra



Sacred Crossings: The Bodhi Tree, Shared Sacred Spaces and the Spiritual Imagination of India and Sri Lanka

Dr. Shereen Zaidi

Abstract- India and Sri Lanka are separated by a relatively narrow stretch of ocean, yet their relationship has never been limited by geography. For more than two thousand years, people, religious ideas, sacred objects, stories and practices have travelled between the two lands. Buddhism forms one of the strongest foundations of this relationship, but the connection is more complex than the simple historical narrative of Buddhism moving from India to Sri Lanka. This paper explores the India–Sri Lanka relationship through the idea of a shared spiritual geography. It focuses on three interconnected examples: the journey of the Bodhi Tree from India to Sri Lanka through Sanghamitta Theri, the existence of shared and multi-religious sacred spaces such as Kataragama, and the contemporary movement of Buddhist relics between the two countries, with particular attention to the Devnimori relic exposition in Colombo in February 2026. The paper argues that sacred objects and sacred places do not merely preserve history; they keep history active through ritual, pilgrimage, memory and collective participation. The relationship between India and Sri Lanka can therefore be understood not only as a political or cultural relationship between two neighbouring states, but as a continuing spiritual relationship in which national boundaries coexist with a much older sacred landscape. The paper proposes that this shared spiritual geography offers a useful way of rethinking cultural diplomacy, pilgrimage and civilisational memory in South Asia.

Keywords: India–Sri Lanka relations, spiritual geography, Buddhism, Bodhi Tree, Sanghamitta Theri, pilgrimage, sacred spaces, Hindu–Buddhist interaction, cultural memory, Buddhist relics

Introduction- When India and Sri Lanka are discussed together, the first things that usually come to mind are geography, Buddhism, trade, history and cultural exchange. All of these are important. Yet there is something more intimate in the relationship, something that cannot be fully explained through political agreements or historical chronology. Across centuries, sacred places in India have remained meaningful to Sri Lankan Buddhists, while sacred traditions that travelled from India have become deeply rooted in Sri Lankan society.

The relationship is therefore not simply between two countries. It is also between two sacred landscapes. The Government of India describes India and Sri Lanka as sharing historical, cultural, religious, spiritual and linguistic links extending back more than 2,500 years. Buddhism is identified as one of the principal pillars of this relationship, particularly since the arrival of Arahata Mahinda and Sanghamitta Theri in Sri Lanka during the third century BCE (High Commission of India, Colombo, 2026). But the significance of this history becomes clearer when we look at what actually travelled between the two countries. It was not only a doctrine. It was also a tree, relics, pilgrimage routes,

rituals, memories and forms of devotion.

This paper asks: How have sacred objects, sacred spaces and shared religious practices transformed the historical relationship between India and Sri Lanka into a continuing spiritual relationship? The central argument is that the spiritual relationship between the two countries survives because the past has not remained confined to texts or monuments. It continues to be embodied in living practices. The Sri Maha Bodhi is still venerated. Pilgrims continue to travel to sacred places. Multi-religious sites continue to bring different communities into contact. Buddhist relics continue to move between India and Sri Lanka and attract large numbers of devotees.

This makes it possible to understand India and Sri Lanka through the concept of a shared spiritual geography: a geography that is not defined only by territory, but also by sacred memory, pilgrimage, ritual and emotional attachment.

The Bodhi Tree: When History Becomes Living Memory

Perhaps the most powerful symbol of the spiritual relationship between India and Sri Lanka is the Bodhi Tree. Bodh Gaya in India occupies a unique position in Buddhist memory because it is associated with the enlightenment of the Buddha. The tree under which the Buddha is believed to have attained enlightenment consequently became more than a tree. It became a sacred symbol of awakening. When a sapling from the sacred Bodhi Tree was carried to Sri Lanka by Sanghamitta Theri, traditionally dated to the third century BCE, the meaning of the original sacred landscape was extended across the sea.

The Sri Maha Bodhi at Anuradhapura is therefore important not merely because it is old. Its deeper significance comes from the relationship it creates between two places: Bodh Gaya in India and Anuradhapura in Sri Lanka. The Government of India continues to describe the tree at Anuradhapura as a direct descendant of the Bodhi Tree associated with the Buddha's enlightenment and as an important symbol of the civilisational relationship between the two countries (High Commission of India, Colombo, 2026).

There is something remarkable about a living tree as a carrier of cultural memory. A stone monument remains largely unchanged while it preserves the memory of the past. A living tree does something different. It grows. It survives seasons, political changes and generations of human beings. People who worship it today are not simply looking at an archaeological object. They are participating in a tradition that connects them with people who lived centuries before them.

This is why the Sri Maha Bodhi can be understood as a living archive.

The word "archive" usually suggests documents, manuscripts and records. But cultural memory does not exist only in written form. It can also exist in objects, rituals and places. The tree at Anuradhapura carries memory through continued veneration. Its history is repeatedly recreated every time devotees approach it, offer flowers, light lamps or participate in ceremonies.

The continuity becomes even more striking when we consider the families who have traditionally been associated with the protection and rituals surrounding the sacred tree. In July 2025, the High Commission of India documented its interaction with descendants of members of Sanghamitta Theri's entourage who continue to be involved in safeguarding the Sri Maha Bodhi. The families described a responsibility passed from one generation to another (High Commission of India, Colombo, 2025).

Here, history is not something that has ended.

It has become a responsibility.

That distinction is important. It suggests that the India–Sri Lanka relationship is not sustained only by governments remembering a shared past. It is also sustained by ordinary acts of continuity. A family performs a duty. A devotee visits a shrine. A pilgrim crosses a border. A sacred object is brought from one country to another.

In such moments, history becomes lived experience.

Shared Sacred Spaces: Difference Without Complete Separation

The spiritual connection between India and Sri Lanka becomes even more interesting when we move from sacred objects to sacred spaces.

Religious traditions do not always occupy separate worlds. In South Asia, sacred spaces have often been shared, negotiated and reinterpreted by different communities. Sri Lanka offers particularly important examples of this phenomenon.

Kataragama is one of them. The shrine attracts both Tamil Hindu and Sinhalese Buddhist pilgrims and has long been studied as a site of Hindu–Buddhist interaction. Pfaffenberger's (1979) influential study of the Kataragama pilgrimage shows that the two communities do not necessarily understand the deity or the rituals in exactly the same way. Yet their participation in the same sacred landscape creates an important form of religious encounter.

This point is crucial for the argument of the present paper.

Shared spirituality does not mean that all religions become the same. It would be historically inaccurate to suggest that Hinduism and Buddhism simply merge at such sites. Their theological ideas, ritual practices and understandings of sacredness can remain very different.

What is shared, however, is the space.

And sometimes the journey.

And sometimes the ritual environment.

Recent scholarship on pilgrimage in Sri Lanka similarly shows that collective ritual can create temporary spaces in which Sinhala-Buddhist and Tamil-Hindu participants interact despite strong ethnic and religious boundaries (De Silva, 2016). The Kataragama Pâda Yâtrâ, for example, has been studied as a form of collective ritual through which differences can be negotiated rather than simply erased.

This gives us a more nuanced understanding of spiritual similarity between India and Sri Lanka. Similarity does not necessarily mean sameness. It may mean the ability of different traditions to occupy, interpret and experience a sacred landscape together.

The same complexity can be seen at other sacred places in Sri Lanka. Sri Pada, for example, has acquired different sacred meanings for Buddhists, Hindus, Muslims and Christians. Its history demonstrates both the possibilities and the tensions of shared sacred space.

This is where the concept of shared spiritual geography becomes useful.

A geographical map tells us where one country ends and another begins. A spiritual map can tell us something different: where people travel, where they pray, what they remember and which places

they consider sacred.

On such a map, India and Sri Lanka appear much closer than they do on a political map.

From Sacred Tree to Sacred Relics: The Past Returns in the Present

If the Bodhi Tree represents the continuity of sacred memory, Buddhist relics demonstrate the continuing movement of that memory.

Relics are unusual cultural objects. They are historical, but they are not experienced merely as historical. For devotees, they possess a living sacred presence. Their importance therefore depends not only upon their age or archaeological value but also upon the emotional and spiritual response they generate.

This became particularly visible in February 2026, when the sacred Devnimori relics of the Buddha from Gujarat were taken to Colombo for a public exposition at Gangaramaya Temple. The relics were exhibited from 4 to 11 February, and the event attracted more than one million devotees. The exposition was the first international exposition of the Devnimori relics (Press Information Bureau, Government of India, 2026).

The scale of the response is significant.

More than a million people did not gather simply to observe an archaeological artefact. They came to pay homage to something they understood through faith and devotion. The relic therefore became a point at which India's Buddhist heritage and Sri Lanka's living religious culture met.

This event also shows that the India–Sri Lanka spiritual relationship is not a story belonging only to the ancient world.

It is happening now.

The contemporary movement of relics is especially revealing because it reverses the idea that cultural transmission happened only in the past. Sacred objects continue to travel. In 1978, Kapilavastu relics were exhibited in Sri Lanka and reportedly attracted nearly ten million devotees; further expositions took place in later years, including the exhibition of relics associated with Sarnath in 2018. The Devnimori exposition in 2026 belongs to this continuing tradition of sacred exchange (High Commission of India, Colombo, 2026).

The significance of these events can also be understood through the idea of spiritual diplomacy.

Diplomacy is generally associated with states, treaties, negotiations and political leadership. Cultural diplomacy is broader and includes education, art, literature and heritage. Spiritual diplomacy adds another dimension: the creation of relationships through objects and practices that carry sacred meaning for ordinary people.

The Devnimori relics were not merely transported from one country to another. They created a shared moment of devotion.

This matters because people-to-people relationships are often stronger when they are experienced rather than merely described. A government can announce friendship, but a shared pilgrimage or a collective act of reverence can make that friendship tangible.

In this sense, sacred relics become cultural bridges.

The Indian Ocean as a Bridge

There is a tendency to imagine the sea primarily as a boundary. India and Sri Lanka, however, offer a different picture.

The waters between them have separated territories, but they have also carried people, goods, ideas and religious traditions. The movement of Mahinda and Sanghamitta, the movement of pilgrims, and the later circulation of sacred relics all demonstrate that the sea could function as a route rather than simply an obstacle.

This is particularly important for understanding the phrase “shared spiritual geography.”

Geography is usually understood in terms of physical space. Spiritual geography is created through movement and meaning.

A pilgrimage route can connect two distant locations.

A sacred object can connect two communities.

A religious story can connect two generations.

And a ritual can connect people who do not necessarily share the same language, ethnicity or political identity.

India and Sri Lanka therefore share something more profound than geographical proximity. They share a network of sacred associations.

Bodh Gaya and Anuradhapura form one such connection.

Pilgrimage routes between India and Sri Lanka form another.

The movement of relics creates another.

The continued exchange of Buddhist scholarship and heritage initiatives adds yet another layer. Contemporary India–Sri Lanka cultural programmes include Buddhist heritage exhibitions, scholarly exchanges, Pali-related initiatives and pilgrimage connections. In 2026, the Indian High Commission also organised Buddhist heritage activities in Sri Lanka as part of Vesak celebrations, again presenting Indian Buddhist sites as part of a shared civilisational heritage (High Commission of India, Colombo, 2026).

The important point is that none of this requires India and Sri Lanka to become culturally identical.

They do not need to.

A shared spiritual geography can exist precisely because two distinct cultures encounter one another while retaining their own identities.

Rethinking India–Sri Lanka Relations Through Spiritual Memory

The idea of spiritual memory also helps us rethink the relationship between history and the present. History is often treated as something that happened in the past. Memory is different because it can remain active. When a sacred tree is worshipped today because of an event associated with ancient India, the past is being brought into the present. When Sri Lankan devotees travel to Bodh Gaya, an ancient relationship is being physically repeated. When Indian relics are exhibited in Colombo, an old connection acquires a new public form.

The past therefore does not simply survive.

It is re-enacted.

This may be the most important insight emerging from the India–Sri Lanka spiritual relationship.

The relationship has survived for centuries not because history has remained frozen, but because communities have repeatedly found new ways of giving that history meaning.

There is also a lesson here about the nature of cultural similarity.

Similarity is often measured through language, food, dress, architecture or festivals. These are visible forms of culture. Spiritual similarity is less visible. It is found in attitudes towards pilgrimage, sacred places, ritual, compassion, renunciation, meditation, reverence for teachers and the idea that physical journeys can have an inner significance.

The Buddhist connection provides the strongest example, but it exists within a broader South Asian environment in which Hindu and Buddhist ideas and practices have interacted for centuries.

The result is not a single religious identity.

It is a shared cultural vocabulary.

Conclusion

The relationship between India and Sri Lanka is often described as ancient, close and civilisational. Such descriptions are correct, but they do not fully explain why the relationship continues to carry emotional and spiritual force.

The answer lies partly in the persistence of sacred memory.

The Bodhi Tree connects Bodh Gaya with Anuradhapura. Sanghamitta Theri's journey remains present not merely in historical narratives but in the living worship of the Sri Maha Bodhi. Shared sacred sites such as Kataragama demonstrate that different religious traditions can meet within the same sacred landscape, even when their interpretations are not identical. Contemporary Buddhist relic expositions, most recently the Devnimori relic exposition in Colombo in 2026, show that the movement of sacred objects between India and Sri Lanka continues to create powerful experiences of spiritual connection (High Commission of India, Colombo, 2025; Press Information Bureau, Government of India, 2026).

These examples lead to a broader conclusion.

India and Sri Lanka are not connected only because they share a past. They are connected because they continue to live that past.

A tree is worshipped.

A pilgrimage is undertaken.

A relic crosses the sea.

A ritual is repeated.

A memory passes from one generation to another.

That is why the concept of a shared spiritual geography is useful. It shifts our attention from borders to connections, from monuments to living practices, and from history as a closed chapter to history as something continually renewed.

The ocean may separate India and Sri Lanka on a political map. Spiritually, however, the relationship

has never been quite so distant.

Perhaps this is the most enduring lesson of their civilisational relationship: a border can divide territory, but it cannot necessarily divide sacred memory.

The India–Sri Lanka relationship, therefore, is not simply a relationship between two neighbouring nations. It is also a continuing conversation between two sacred landscapes, sustained by journeys, memories, objects and people. Its strength lies not in sameness, but in the ability of different communities to recognise something meaningful in a shared spiritual inheritance.

And that inheritance, rather than belonging only to the past, remains alive.

References

- De Silva, P. (2016). Competitive sharing: Plural worship at major religious sites in Sri Lanka. University of Colombo Annual Research Symposium Proceedings.
- High Commission of India, Colombo. (2025, July 14). High Commissioner of India visits descendants of Sanghamitta Maha Theri's entourage.
- High Commission of India, Colombo. (2026). India–Sri Lanka cultural relations.
- High Commission of India, Colombo. (2026). Vesak 2026: High Commission of India hosts special initiatives reflecting shared Buddhist values.
- Pfaffenberger, B. (1979). The Kataragama pilgrimage: Hindu-Buddhist interaction and its significance in Sri Lanka's polyethnic social system. *The Journal of Asian Studies*, 38(2), 253–270. <https://doi.org/10.2307/2053418>
- Press Information Bureau, Government of India. (2026, February 11). Sacred Devnimori relics of Lord Buddha return to India after historic exposition in Sri Lanka: Holy relics exposition draws over one million devotees.

Department of English
Kanhaiyalal Maniklal Institute, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra



INDIA-SRI LANKA : Historical, Cultural and Social Relations : A comprehensive study

Prof. Geeta Yadvendu

Abstract- Sri Lanka is an Island country in the far South of India bordered by the Bay of Bengal and the Indian ocean. Which Indian will be unfamiliar with the name of Lanka or Srilanka the Gold Country of Ravana, the place from where Lord Sri Rama bring home his wife Seeta. The original inhabitants of Srilanka were tribal people. Sri Lanka was invaded by Indian rulers of North India until about 1000 AD and after that by Tamil invaders of South India until about 1500 AD. Subsequently European powers such as the Portuguse, Dutch, French and British ruled Srilanka and in 1948 Srilanka gained Independence from the British rule. There have been close historical, social and cultural relation between India and Sri Lanka since ancient times. Buddhism, the main religion of Sri Lankan people reached and spread in Sri Lanka from India. Ashoka sent his son Mahendra and daughter Sanghmitra to Sri Lanka and the king of Sri Lanka Devanampiya Tissa adopted Buddhism under the inspiration of Sthavir Mahendra. Ashoka's daughter Sanghmitra took a branch of the Bodhitree from Bodhgaya and planted it in Arunadhapur the capital of Sri Lanka.

During the Gupta period and after that during the rule of Pandaya and Chala rulers of South India, India and Sri Lanka had mutual political and cultural relations. Sri Lanka is a neighboring country of India. Sri Lanka is a progressive nation where people of all religions including Sinhalese, Tamil, Christian and others lived together without any religious conflicts and conservative attitude. The Sinhalese-Tamil conflict has also become almost peaceful now. The first adult suffrage (right to vote) in any Asian country was introduced in Sri Lanka in 1929 AD. Sri Lanka gained Independence from the British Rule on February 4th 1948 as an Independent dominion state. On May 22, 1972 Sri Lanka's new constitution adopted as full Republic of Sri Lanka. The history of India and Sri Lanka is deeply intertwined. The Buddhism and Buddhist culture in Sri Lanka are the gifts of India to Sri Lanka. A major part of Sri Lanka's population is the Tamil are the natives of India. Therefore, Sri Lanka and India have always been friends and always remain so.

Keywords : Ramayan, Sri Ram, Buddhism, Tamil, British, Faihyam

Sri Lanka is an Island country bordered by the Indian ocean and the Bay of Bengal in the far South of India. The small sea part called the Park-Straits separates India from Sri Lanka. Which Indian will be unfamiliar with the name of Lanka / Sri Lanka. Ravana's Gold Country Sri Lanka, the place from where Lord Rama Returned by brings home his wife Seeta. In the mythological tales, Lanka is described as a city of Demons. However, these tales also clearly demonstrate the splendor and great natural attraction of Sri Lanka.¹

It is clear from the evidences of Fa-hien (Chinese Traveller) and other sources that natives of Sri Lanka were tribal people and ancient vedic Aryans considered people other than their own race as rivals and generally addressed them as such. For example, the vedic texts refer to the people of the Indus valley civilisation as Dasa-Dasyu etc. In India Lord Shri Rama's invasion on Lanka is a part of India mythology.

Hindu kings from Northern India invaded Sri Lanka until about 1000 AD and after that Tamil invaders from South India invaded Sri Lanka until about 1500 AD. Subsequently, European powers such as the Portuguese, Dutch, French and British ruled Sri Lanka and in 1948 AD Sri Lanka gained independence from British rule.

So, the history of India and Sri Lanka contains many similarities and due to their geographical locations they have always been affected by each other. During the pre-historic period, there was no sea barrier between India and Sri Lanka. Scientific evidences show that both the land masses were connected by land route. When the sea level was low, Sri Lanka was probably remain connected to India by land bridge.² Probably this was called Ram-Setu in the mythological tales. The people of Dravid-Eastern Australoid race, Adivasi tribal people are considered to be the original inhabitants of Sri Lanka.³

Sinhalese and Tamils of Sri Lanka are the people originally went to Sri Lanka from India.

The 3/4th population of Sri Lanka is of Sinhalese. In addition Arab traders who are known as Moors and the Burghers people who came from Holland and settled here are also part of Sri Lanka's population.

India has mutual political, social and cultural relation with Sri Lanka since ancient times.

Sri Lanka which is an Island situated just below of India. The area of Sri Lanka is 24232 square kilometers and the main exports of Sri Lanka are tea, rubber and coconut.⁴ Sri Lanka and India have had social and political relations since ancient times. The primary base of these relations is the Ramayana, the mythological tale of Sri Ramachandra and Sita Ji written by Maharshi Valmiki and also Buddha's religion Buddhism which reached Sri Lanka from India. Rama's struggle with Ravana, the ruler of the Lanka and the liberation of Sita from Ravana's captivity, described in the Ramayana from a major basis of India's. Cultural relations with Sri Lanka. The primary religion of Sri Lanka is Buddhism, spread in Sri Lanka from India. The Mauryan period (324 BC E to 185 BCE) holds a significant place, in India history, as the Mauryan period marks the beginning of the Era of the great empires and kingdoms in India. From this period, India's prestige and fame began to spread abroad, and India's cultural, religious, political and commercial relations began to established with foreign countries. Sri Lanka being a close neighbor of India since ancient times, has maintained close cultural and social ties with India. The ancient history of India-Sri Lanka relationship dates back from the age of Mahakavyas and Puranas to the 6th century B.C.E. This is also claimed that for some time Sri Lanka was remain under the reign of Vessali.⁵ Emperor Ashoka sent his son Mahendra and daughter Sanghamitra to Sri Lanka for the Propagation of Buddhism. Under the inspiration of Sthavira Mahendra a Buddhist council was organized in Sri Lanka around 250-240 BCE in the Anuradhapura the capital of Sri Lanka. The patron of this council was Sri Lankan king Devanampiya Tissa and the leader was Mahendra, son of Emperor Ashoka of India. Mahendra's sister, daughter of king Ashoka Sanghamitra took a branch of the Bodhi tree from Bodhi Gaya to Sri Lanka's capital Anuradhapura and planted it in the capital of the Island.⁶

Buddhism and Buddhist philosophy deeply influenced Sri Lanka language, art, culture and architecture.⁷

During 301 to 328 AD Sri Lanka was ruled by Kirtishri Meghvarna, while India was ruled by the Gupta Emperor Samudragupta (325-376 AD). Samudragupta was a follower of HinduVaishnavism and a great emperor of North India. During the Gupta age, from the 4th to 6th centuries Sri Lanka and India enjoyed good cultural relations.

In the Gupta period, when the Chinese traveller Fa-Hien returned back to China, he returned by sea route to China via Patliputra via Ganga by on a merchant ship.⁸ Sometimes in 408 or 409 AD. Fa-Hien traveled on a merchantship from the part of a Tamralipti of Bay of Bengal to Sri Lanka.⁹ After about two years stay at Sri Lanka, Fa-Hien again boarded took a sea going vessel to return to China through Southeast Asia or present day Indonesia.¹⁰

Fa-Hien traveled to both India and Sri Lanka. He traveled to India through the dangerous desserts of Central Asia and the passes of the Pamir and Hindukush mountains and returned by sea via Sri Lanka. Fa-Hien's account of Sri Lanka is the only eyewitness account by a Chinese Buddhist pilgrim of this momentous event of Buddhism. Fa-Hien returned to China via Sea route in 414 AD.¹¹ Hwen-Stang who came to India in 629 AD during the reign of Harshvardhana and returned to China in 645 AD but did not go to Sri Lanka.¹²

In his travel account Fa-Hien wrote about the natives of Sri Lanka, weather, environment, travel of Sri Lanka by Buddha, bringing branch of Bodhivrksha to Sri Lanka. He also describe about the tooth of lord Buddha in Sri Lanka.¹³

Muslim invasions on India began in the 10th century and three great empires of South India emerged - Chola, Pandya and Vijaynagar Empire. All three empires had direct links with Sri Lanka.¹⁴ Around 1001 AD, Chola king Rajaraja-I conquered Ceylon and captured Sinhali king Mahendra vth (Sinhaleshvar). He was brought to India. Mahendra died in India itself. Sinhalese remain under the Chola empire till 1070 AD. Anuradhapur was the capital of Sri Lanka for about 1500 years from 437 BCE to about 1001 AD.¹⁵

In 1070AD, Vijaybahu first (1056-1111 AD) liberated Ceylon from the Cholas. He was crowned in 1072 AD and the Chola name of Polannarub was changed from Jannathpur to Vijayrajpur.¹⁶

Sri Lankan hindus are basically the Tamil or Dravin people or their descendants who have been settled here for thousands of years who are laboures in the tea gardens.¹⁷ The Tamils of Sri Lanka are very hardworking and they had given their great contribution in the tea and rubber industry of Sri Lanka. Today the main religion of Sri Lanka is Buddhism. The culture of India influenced greatly Sri Lanka. The famous Ashokamaya temple in Timbirigasya in named after the great Indian Emperor Ashoka whose son Mahendra inspired the people of Sri Lanka to adopt Buddhism. According to the folk beliefs, Lord Buddha had gone to Sri Lanka 3 times.¹⁸

The entire Sri Lanka is decorated with status of Buddha, temples, fairs and festivals. Buddhism was introduced in Sri Lanka three centuries before the christ. The ruler of Sri Lanka Devanampiya Tissa was a contemporary of Ashoka The Chinese traveller Fa-Hien went from India to Sri Lanka. There are two major and biggest festivals of Sri Lanka are - (1) One is Baisakh Purnima, on which day Gautam Buddha was born, attained enlightenment and Nirvana and (2) The second is Jyestha

Purnima on which day the monk Mahendra (son of Ashoka the great) entered in Sri Lanka and brought the Sinhali king Devanampiya Tissa under the shelter of Buddhism and Sangha.¹⁹

Even, the great Chola kings could not eradicate the Buddhism from Sri Lanka after conquering the island. The Chola kings started building Hindu temples at various places in Sri Lanka to hinder or block the spread of Buddhism in Sri Lanka. However, they could not destroy the influence of Buddhism but this led to a feeling of rebellion and discontent among the people of Sri Lanka. The brother of Sinhalese king Mahendra Vith (Sinhaleshwara), who was imprisoned by the Chola king, led the rebellion and the struggle continued for 15 years. Finally around 1070 AD, Vijayabahu-I regained his kingdom. Vijayabahu-I ruled for a long period and again developed Buddhism in Sri Lanka. After Vijayabahu-I, The mighty ruler of Sri Lanka was Parakramabahu, who got the throne in 1153 AD. The conflict between Sinhalese and Tamils continued throughout the history of Sri Lanka. Like India in Sri Lanka too the British rulers adopted the policy of divide and rule and adopted the policies of dividing the Sinhalese and the Tamils due to which the conflict continued even after Sri Lanka's independence from the British rule and as a result of this conflict, on 21 May 1991, in Sri Lanka, the militants of LTTE (Liberation Tiger of Tamil Eelam) assassinated the Prime Minister of India, Mr. Rajiv Gandhi, because Sri Rajiv Gandhi had sent the Indian peace keeping force (IPKF) to intervene in the Sri Lankan civil war and to establish peace, as India had promised to Sri Lanka's government to establish peace in Sri Lanka by surrounding arms of LTTE. Angered by this, The Tamil militants assassinated the Prime Minister of India Shri Rajiv Gandhi.

Due to the entrance of Tamils in Sri Lanka, The caste system, an evil of the social system of India, also entered in Sri Lankan society, but it did not reach the same level as society of India and it did not create any significant effect on Buddhist society of Sri Lanka. In 1498 AD when the Portuguese navigator Vasco-De-Gama reached the Indian city Calicut, six years later of this Portuguese ships reached the coast of Colombo. The captain of these Portuguese ships sent their representatives to the then local commander in Kotte, 6 miles from Colombo. The king gave permission to the Portuguese for the trade of Cardamom and also put condition that they would protect the coast of Sri Lanka from foreign invaders with this the arrival of European powers started in Sri Lanka, as they entered in India.

After the Portuguese the Dutch and the British also adopted the policy of expanding their influence in Sri Lanka and adopted the same imperialistic policies and tactics as that they used in India for maintaining their power and rule. The Dutch were victorious in the struggle between the Dutch and the Portuguese, and the Dutch dominated Sri Lanka from 1658 AD to 1695 AD. The Dutch reformed Sri Lanka's administrative system. These Dutch people were called Barghers. They married local women and settled in Sri Lanka. After the Dutch, the British established dominance in Sri Lanka, having become active in this direction since 1762 AD. Meanwhile, the French also started entering Sri Lanka by 1796 AD, the British had also set their feet in Sri Lanka and the English rule of India began to rule Sri Lanka as well. The British conquered Sri Lanka with the help of Indian soldiers. In 1812 AD, Sri Lanka declared a colony of the British empire. The freedom struggle of Sri Lanka began in 1918 AD and ended in 1948. This was also influenced by the policies of British rule in India.

Conclusion- Thus, there have been close historical, social and cultural relations between India and Sri Lanka since ancient times. The story of Sri Ram and Sita described in Ramayana is incomplete

without Sri Lanka. The characters of Ramayana like Ravana, Vibhisana, Mandodari, Suparnkhan, Kumbkaran, Meghnath Kaikesi, Trijata, Ahiravana are related to Sri Lanka.

The main religion of Sri Lanka, Buddhism reached and spread in Sri Lanka from India. This has a glorious history. The great emperor Ashoka of the Maurya dynasty sent his son Mahendra and daughter Sanghmitra to Sri Lanka and the king of Sri Lanka Devanampiya Tissa adopted the Buddhism. During the Gupta period and after that during the rule of Pandaya and Chola kings in South India. India and Sri Lanka had mutual political and cultural relations. Sri Lanka is a neighboring country of India. Sri Lanka is a progressive nation where people of all religions including Sinhalese, Tamil, Christian and others lived together without any religious conflicts and conservative attitude. The Sinhalese-Tamil conflict has also become almost peaceful now. The first adult suffrage in any Asian country was introduced in Sri Lanka in 1929 AD.

After Sri Lanka's Independence, the first Prime Minister, D.S. Senanayake leader of the United National Party signed the "Sri Lankan Independence Bill", which was introduced in the Parliament of England in November 1947. On February 4th 1948, Sri Lanka gained independence from the British Empire as an independent dominion state. On May 22, 1972, the country's new constitution came into effect and Ceylon became a full Republic as Sri Lanka.²⁰ Sri Lanka is a close neighbor of India and the history of India and Sri Lanka is deeply intertwined. The Buddhism and Buddhist culture in Sri Lanka are gifts of India to Sri Lanka. A major part of Sri Lanka's population the Tamils are the natives of India. Therefore, Sri Lanka and India have always been friends and always remain so.

REFERENCES

1. Sri Lanka (Bhogolic, Samajik, Etihaski Parichay) Author - Snehlata, Rajkamal Prakashana, Page - 09, Published with Collaboration with UNESCO, First Edition March 1959.
2. <https://www.researchgate.net>
Pragetihasik Kal se lekar Etihaski Kal tak Sri Lanka Ka Manvikaran : Jevik or Puratatvik Sakshya April 2016 DOI 10.1002/978111905080.cl27 Samiti Kul Tilak, Mount Royal University.
3. Sri Lanka - (Bhogolic, Samajik, Etihaski Parichay) Snehlata - Rajkamal Prakashan, Page-11
4. Adhunik Vishva Ka Itihas 1500-2000 AD. Jain and Mathur ISBN 81-87441-09-06 20th edition September 2014 Page 105
5. The quarterly review of Historical studies Vol. L1 ISSN-0033-5800 October 2011-March 2012 Page No. -4 (Sinha B.P. (Ed.) comprehensive history of Bihar, Vol-I, Part-II Patna 1974 page-56 cited by Dr. Dayanand 'Roy Aspects of Relations between North India and Sri Lanka in Ancient Times').
6. Mahabansh (Ed) Willaim Gained Colombo, 1908 XI 1823.
7. Barua B.M., Gaya and Bodhgaya Vol-1, Calcutta, 1974, Page 178.
8. Roy, Daya Nand, Patiliputra Ka Itihas Circa 450 BC to 554 AD, Janki Prakashan Patna P. 123.
9. <https://factsanddetails.com>
10. Ibid.
11. Ho-Cho's Travelogue - 8th century's India. Translated by Dr. Jagdish Chandrikesh Introduction - Dr. K.M. Srimali National Book Trust (NBT) Page -4, ISBN-978-81-237-4924-2
12. Ibid. Page -11
13. Chini Yatri Fa-Hien Ke Yatra-Vivoran, Translation - Jagmohan Verma Page - 92 ISBN - 978-81-237-1392-0
14. Mendis G.S., The Early History of Ceylone, Colambo 1959 Page 65-66.

15. Lanka, Tripitakacharya Rahul Sankrityayan, Publisher-Sahitya Sevan Sangh, Chapra July 1935 First - Edition Page -2
16. Ibid, Page -2
17. Ibid Page No. 77
18. Sri Lanka (Geographical, Social and Historical Introduction) Snehlata, Rajkamal Publications, 1959 Page-44
19. Lanka, Tripitakacharya Rahul Sankrityayan, Publishers - Sahitya Sevak Sangh Chapra, July 1935, First Edition Page - 11.
20. Wilson, A. Jeyaratham (1988), The Break-up of Sri Lanka - University of Hawai Press, ISBN - 9780824812508

Principal & Professor of History
B.D.M.M. Girls Degree College,
Station Road, Shikohabad, -283135
Mobile No. : 9897137444, 7906114641



The Antiquity of the Buddhist Concept of Sustainable Development: An inquiry into Environmental Conservation, conservation and management through Sri Lankan Inscriptions

Ven. Beragagama Saddhananda thero, Ven. Gammahegewewa Amitha thero

Abstract- Sustainable development is a new concept built on the thinking of human-centered physical development and relative environmental conservation. It emphasizes on securing for the future especially when consuming resources. Although this concept has become the most popular topic in modern society, its social function and practice are more than twenty-five centuries old. The primary aim of this study is to discuss the historicity of the environmental conservation process, which is considered as a main theme of the sustainable development process, with the help of inscriptions in Sri Lanka. Accordingly, a special attention is paid to the Mihintale Pillar Inscription of Sena II (853-887 CE), Athakada Pillar Inscription of Udaya III (935-938 CE), Buddhanehela Inscription of Sena III (938-946), Mihintale, Abhayagiriya and Wewalketiya Slab Inscriptions of Mihindu IV (956-972 CE), Kiribath Vehera Slab Inscription and Alutwewa Pillar Inscription of Kassapa IV (898-914) and also Ruwanwelisaya Slab Inscription of Nissankamalla of the Polonnaruwa period (1186-1196 CE) to identify how the Buddhist community, who spent their daily life based on Buddhist religious thought, protected the environment including the animals when fulfilling their needs, and also the social norms, rules and punishment methods used in this regard. The research problem of this study is how that old knowledge system could be used in the implementation of current sustainable development plans. Library and field research were carried in collecting data for the study. Case studies were carried out as well. The comparative analysis method was used for data analysis.

Introduction- The concept of sustainable development is an idea based on socio-economic and environmental concepts. In moving towards global sustainable development, it is important to maintain the balance in these conceptual areas. In this regard, a special attention is paid to environmental aspects due to the reason that the protection of the ecosystem is a key factor for the survival of both animals and humans. Accordingly, its primary aim is to plan global economic growth in a manner that does not threaten the environment.

It is a known fact that ecologists, geologists, zoologists, biologists and forest scientists currently pay special attention to the protection, conservation and management of the global ecosystem. However, the Buddha was a religious teacher who tried to implement practical plans to socialize this concept around the 6th century BCE. This is evident from the teachings of the Buddha in Tripitaka and the preaching of his disciples. The daily routines of the monastic life introduced by the Buddha also

provide an example. Accordingly, the primary aim of this study is to examine the environmental conservation process associated with consumption in the Buddhist monastic environment of ancient Sri Lanka with the help of some selected inscriptions on the island belonging to the 9th- 10th century AD.

Discussion- The inscriptions of Emperor Asoka indicate that he was a philanthropist who worked to ensure the survival of man and the environment (Ghanavimal, 1986). *Kautilya's Arthashastra* also contains information about the laws and punishments that prevailed in contemporary India (Kautilya Arthashastra, 2003: Authority 3,4,5,6,7). Laws and rules laid down as well as punishments applied in order to protect the environment in Sri Lanka are found in the inscriptions only after the 9th century AD. A pillar inscription of Sena II (853-887CE) in Mihintale indicates rules laid down to prohibit cutting trees such as palm, coconut and tamarind on the top of Mihintale rock (Attachment No 01).



Estampage No. 1: Mihintale Pillar Inscription

It has been mentioned that if someone cuts trees in violation of that law, they should be fined. (Ranawella; 2001:128). Athakada Pillar Inscription of Udaya III (935-938 CE) also prohibits, the (Attachment No 3) cutting of coconut trees and banyan trees. (Ranawella; 2004:127) Similarly, Buddhannehela Inscription of Sena III (938-946) prohibits cutting trees (Ranawella; 2004:148). An inscription of Mihindu IV (956-972 CE) emphasizes that the trees in the estates should not be cut and if someone violates the law, the prescribed fine should be collected from that person or he should be employed in the tank irrigation work (Amarawansa, 1969:310). A slab inscription of Abhayagiriya belonging to the same king states that it is forbidden for lay people to cut trees and

plants in the monasteries (Ranawella; 2004:253-254). The Puliyankulama slab inscription of Udamahayage also mentions that trees should not be cut (Wicramasingha 1912:185).

The *Kiribath Vehera Slab Inscription of Kassapa IV (898-914)* makes mention of a tree as the southern boundary of a land ^Wicramasingha 1912:158&. The *Alutwewa Pillar Inscription* belonging to the same king also makes mention of trees (Ranawella; 2001:192). Accordingly, there was a formal state mechanism for environmental conservation in Sri Lanka by the 8th-9th century A.D. In particular, it seems that these rules and regulations have been implemented to control environmental erosion, assure water security, safeguard the environment, and ensure the existence of the animals. It is understood that it is simply a concept similar to environmental conservation, which is emphasized in the modern sustainable development process. It is also a special characteristic that this process is seen in the Buddhist religious context. It is noted that cutting trees such as palm, tamarind, coconut, and banyan is prohibited in association with lands offered for Buddhist religious consumption and maintenance. Accordingly, this concept has directly caused an inherent quality to the Buddhist philosophy and culture to be nurtured and socialized. There are many reasons for such circumstances.

It is a well-known fact that the Bodhisattva performed the virtues of the Bo tree which gave him shade to attain enlightenment. This signifies that man should respect even the trees in the environment that support him. After attaining enlightenment, the Buddha focused on environmental conservation in his Buddhist teaching. It has been shown that planting flowers, gardening, building ponds etc., will lead to go to heaven (Samyutta Nikaya, Vanropasutta,60). Buddhism states that contributing to the environmental conservation process is a high virtue. Accordingly, deforesting the living environment is inappropriate (Dighanikaya, Samannaphala sutta:112). Development is not the only cause of environmental pollution but also the thoughts and behaviors of the individual. Therefore, the development of individualized social discipline for environmental conservation must occur.

The Buddha preached the monks the discipline of stay or dwell in a suitable place during the rainy season from the concept of environmental protection. The grass and insects may be harmed when the monks walk during the rainy season, therefore, the Buddha emphasized the appropriateness of staying or dwelling in a suitable place during the rainy season without travelling (Mahavaggapali, p; 347).

When a group of monks in the city of Alaw cut down the vegetation to prepare the land for the construction of a new temple, the Buddha blamed them and imposed a discipline, viz., *bhutagama* forbidding the upasampada monks (the *bhikkus*) from harming them. Accordingly, destroying the living plants on the earth whether in water or on a rock or in any other place is an offence for a Buddhist monk. Moreover, according to *Pachitti Pali*, it has been emphasized that polluting a grassy land, urinating on grass, and littering are also offensive actions (Pachiththiyapali, Biksuni Vibhanga,150). It is stated in the *Viharakara Sanghadisesa Khandaka* that if a monk commits such destruction, that monk will become *sanghadisesa* (Parajika pali, Vihara sangadhisesa,405-407).

For the same reason, archeological excavations have now confirmed that there was a formal mechanism in the Buddhist monastic complexes to manage the environmental damage caused by adding urine to the environment. The urine discharged from the constructed cisterns and latrines is added to the clay vessels filled with charcoal, sand and limestone which are buried in the ground through clay pipes or stone supports without releasing it directly to the ground. It is designed in such

a way that it is connected to the ground after being filtered by the inter-connected clay vessels. This technique of the Buddhist monastic complexes could be seen in the monasteries of Abhayagiriya and Jetavanaya in Anuradhapura and Ramba Vihara in Ruhuna. Accordingly, it must be mentioned that this process is a perfect illustration of a formal environmental conservation plan that was alive in the old Buddhist monastic environment.



Plate 1 & 2: Latrine and toilet technology

Forest burnings are a major cause of deforestation. The *Bhikku Vinaya* has also enacted laws to prevent the damage caused by forest fires. The lawas have been enacted in the monks' discipline to prevent the damage caused by forest burning. "Monks, forests should not be set on fire. If someone burns forest, he will suffer (Mahavagga pali, Besajjakandhakaya,341).

As well as plants, the animals that lives with them is a part of the environment. Many animals live in association with plants. The animals are also nourished by the trees and vice versa. Buddhism gives sanctuary to all living beings. It is for this reason that refrain from killing other life or *pânâtipâtâ* has been taught as the first precept of Buddhism. Buddhist philosophy also teaches that kindness and compassion should be practiced to all birds. Furthermore, in Buddhism, killing other life or *pânâtipâtâ* is emphasized as the first evil of the ten evils. The person who practices refraining from killing other life is a true ascetic as well (Dhammapadaya, dandavagga, 14).

It has been emphasized that if a monk wears shoes made of quail or peacock feathers, goat horn he will experience suffering (Pachiththiya pali, Bhiksu vibangaya, 339). Those laws may have been enacted to prevent monks from using products made using animal parts and to socialize the example of protecting the animals. This may also have an effectlay society on the subject of getting rid of animal slaughter as the lay society takes the example of monk life (sharandha, 2016:111).

In the *Dasa Sakviti Vata* in *Cakkavatti Siha nâda Sutta* mentions that it is the responsibility of the political system to provide shelter to the animals and birds (Dighanikaya, 2004:102). In addition, it is also indicated in the Kutadatta Sutta that the ruler of the state should protect the environment including the animals (Dighanikaya, 2004:264). The Emperor Ashoka was a ruler who enacted laws to control the killing of animals based on the first precept of Buddhism, nmaely, abstain from killing

any living being which Buddha preached in 6th century BCE. In his Nigali Sagar inscription, a number of groups of animals are named and ordered not to kill them. Furthermore, the list stipulates that pregnant and breastfeeding cows, female pigs as well as calves under six months of age, should not be killed. It has also been emphasized that it is good not to feed another life from one life (Ghanavimala 1986:88). The Mahavamsa mentions several occasions that some rulers of Sri Lanka worked for the protection of animals. The main reason for that is the Buddhist social atmosphere prevalent in Sri Lanka.

Even though the ruler who came to power was a foreigner, he had to adapt to the culture of the time. King Elara was a ruler. The king even offered to execute his own son when his only son accidentally killed a calf. Even though the ruler who came to power was a foreigner, he had to adapt to the culture of the time. King Elara was a Chola ruler. He even ordered to execute his only son when he accidentally killed a calf (Mahavanshaya, 1967:21,16-20). It reveals that special attention was paid to the protection of the animals in ancient Sri Lanka. King Mihindu IV is also remarkable among the rulers who worked for the welfare of the animals. He was ruler who arranged food for animals like monkeys, pigs, deer and dogs in keeping with their desire for eating food (Mahavanshaya, 52,33). In addition to the information mentioned in the chronicles, several inscriptions mention the activities of the rulers who worked for the welfare of the animals in Sri Lanka. Among such inscriptions, Ruwanmaduwa Inscription of Kassapa IV (898-914 CE) is noteworthy (Attachment No 3). A regulation that prohibits the slaughter of pigs, deer, and rabbits by the residents of the village is mentioned in the inscription (Ranawella 2001:226).

The Vevalketiya Inscription of King Mahinda IV (956-972 CE) is important as an inscription that clearly records the laws and punishments for controlling animal slaughter during the period of Anuradhapura in Sri Lanka. The inscription was discovered for the first time in the village of Vevelketiya, which is located in the northern direction of Anuradhapura, therefore, it is called the Vevalketiya Inscription but more than ten copies of it have been found in different places of Sri Lanka. Each inscription clearly states the location and administrative unit.

Vevalketiya Inscription	- Agamkuliya (Nothorn)
Vannadipalama	- Galitura (Eastern)
Meehondavava	- Thalandura (Eastern)
Kahatagasigiliya	- Kanadarabima (Eastern)
Vessagiriya	- Demalaviharaya (Southern)
National Museum Colombo	- Pelapashi (Western)



Plate 3: Vevalketiya Inscription

Accordingly, it is clear that the kings have attempted to apply the same law throughout Sri Lanka. An institution known as *Dasagam Sabha* has been implemented to punish those who violate this law, which is in effect throughout Sri Lanka. It seems that the institution has given severe punishments to control both animal slaughter and theft. Stealing and killing buffaloes, cows and goats is a serious offense even punishable by death (Amaravnsa, 1969:286). Moreover, it has been stated that if someone commits cattle theft or is found guilty of buying stolen cattle, they will be beaten with a hot iron and put on iron sandals. According to this inscription, document, when a person sells cattle brought from an outside village, another person must make surety for the cattle. Accordingly, it is clear that this action is a step taken to control the trade in illegal cattle.

King Nishshankamalla (1187-1196 AD) who reigned during the Polonnaruwa period has enacted laws to prohibit animal slaughter in several of his inscriptions. In the Ruvanvalisaya Slab Inscription belonging to him mentions “Approximately to the Village about seven cows and ugly animals can not be killed drums are played in the sanctuary twelve large fishes are kept in the sanctuary and the sanctuary by the rule of not killing the birds” Accordingly, it is clear that laws have been made that animals living on land, fish living in water and birds in the sky should not be killed within seven gawwas from Ruvanvaliya Stupa (Amaravnsa, 1969:383).

The specialty of this inscription is that get people who kill the animals agreed not to kill the animals after providing the things that they need to live. Accordingly, this inscription could be considered as an important occasion when a ruler acted to provide sanctuary to the entire living beings in Sri Lanka. It is clear that King Nisshankamalla was a ruler who fully understood the importance of refrain from killing any living being in Buddhism. The Nathagane Inscription of Veediya Bandara of the Kingdom of Kotte also states that monkeys, toque macaque and bats should not be killed (Ranawella, 2014:759). Accordingly, it is clear that there was a formal mechanism necessary to protect the environment including the animal in ancient Sri Lanka, which was nourished by Buddhism.

Conclusion: Environmental conservation and management belonging to the modern sustainable development process is an ancient concept. There is no doubt that the Buddha had a broad understanding of that concept. He was a religious scholar who attempted to socialize that concept

through his sermons and actions. It is for that reason that the monks' society was attributed to emphasize the importance of the environment as well as how protecting it affects human society. Lay people constantly imitate the lifestyle of the Buddhist monk and prepare their daily life accordingly. Even the entire society is motivated about the process of environmental protection from it. Contemporary inscriptions provide evidence to how the political system that based on Buddhist culture has proceeded to regularly maintain the environmental conservation process since the past. The rulers of ancient Sri Lanka appreciated protecting the environment as a good deed. As such, they came forward to implement the laws and punishments against damaging and destroying the environment. In some cases, the punishments were expanded even to the death penalty. This reveals that a formal mechanism of environmental conservation was active in the society of ancient Sri Lanka. Moreover, the characteristic feature of the process was the select trees which live for a long time and have immense use and lay down special laws to protect such trees. It controls not only over-consumption but saves resources for future generations. This concept is very similar to the goals of the modern sustainable development concept. Moreover, it is clear that there was a process to manage inappropriate effects of forest destruction, water, noise, air and soil pollution etc. in the Buddhist society of ancient Sri Lanka. In this regard, inscriptions of various rulers from the Anuradhapura period to the Kotte period provide sufficient evidence. Those inscriptions indicate the entire process of environmental conservation through several main themes. Among them, preparing plans to secure rare environmental resources, managing overall environmental damage, working to protect environmental quality, securing the right to life of the entire animals, and controlling animal cruelty by giving advance wealth to the people who kill animals for their livelihood can be considered important. Accordingly, it is clear that there is a possibility of planning the modern sustainable development process with the help of ancient knowledge system that includes Buddhist religious teachings. It should also be mentioned that contemporary inscriptions are a major source that can be used to understand such process in the society of ancient Sri Lanka.

A	B	C
1 Svasti	1 novadn	1 le kuli Mahava -
2 Abhayi Si-	2 is Se	2 r Adakkalam
3 risamboyi	3 su radko-	3 äti no kiyß
4 Mapurmuk na -	4 I-kämiya	4 veherat ga-
5 vavannehi	5 n novadn	5 nn is me
6 Mät - mashi	6 is (Sß)-	6 tuvka ayat
7 dasavak da -	7 giri gal	7 Radkolat ga -
8 vas Sß	8 uda talan	8 nmin sitiya-
9 giri veheri -	9 pulupa mi -	9 (k) veherat me
10 n Pere - dunuma	10 van sini -	10 vadlamhayi
11 ndalan ganna ku -	11 mbaln	11 rogya
12 li is Mang -	12 nokapanu I -	12 siddhi
13 mahavar is	13 s käpu-	

14 Melci no	14 yu kamtä -
15 vadn	15 n genä da
16 S Mang -	16 nd gann
17 Diva Pediva	17 is pavu
	18 sangväl-
	19 le piriven
	20 sangväl-

ATTACHMENT NO 1: MINTHALE PILAR INSCRIPTION

A	B
1 (Svasti)	1 Väjändunu nava
2 Siribara Kt-	2 payala satar
3 kula kät -	3 sîmayen ätu-
4 Kvas rad para-	4 Jat tk täna
5 puren bat La -	5 Attni kapu
6 kdiv polo yo-	6 hindvannat
7 na parapuren hi -	7 Ä Mekppar
8 mi vû	8 vädßrum Nil-
9 yhu daru Sirisa -	9 gonn Agbo
10 nagbo Maharad -hu	10 nvan varä vana Me-
11 tum sat längû	11 kppar Ag-
12 de vana Ektä -	12 Mahasivi is
13 yehi Äsela pu -	13 Mekppar Ag-
14 ra davasak dava -	14 bohi is Dam-
15 s vadla Ekt	15 gamuva Sivu
16 n samiye Ma-	16 is Vatrak
17 hamevn Tisa-	17 Kasb Raksama-
18 ram radmaha ve-	18 nan var vana Ku-
19 herhi Uturgi-	19 dasal Kalu Ag-
20 ri- pethi pihit	20 bo is äp me
21 vû Vadur Sene-	21 tuvkd enamo e-
22 virad piriven	22 kse vä me gämi-
23 hi bad Utur pa-	23 n He]-Ku]I Deme-
24 shi Loholu -	24]-kulî Hulu-ket
25 päß-kuliyehi	25 rat-Kuli no gann ko

26 (vû) Amba⁻
27 taru pirive (nat)

C

1 m Deruvanß Dek-
2 matän no vadm
3 kot is me gama-
4 t vädä tireluvan
5 mîvun väriyan
6 suvar mahavar no
7 gann kot i-
8 s Kolptti-
9 n no vadm kot
10 is Ratladu pa-
11 s-mehetän Vä-
12 ssan Radû
13 dsiyan no
14 vadm kot is Tu-
15 di Soli Bakat rä-
16 hân no gasanu
17 kot is mehi ä-
18 tu]atä vädä pulupu
19 äsatu no ka-
20 panu kot is Ki-
21 rivar Telvar
22 Bilibat sl
23 Magiva Pegiva no
24 gann kot is
25 gam-gon kiri-ge-
26 ri no gann kot
27 is äräkkan Pe-

26 t is Manggi-
27 va Piyagiva Me-
28 l[si Radkol
29 kmiyan no va-
30 dn ko[is Vä-
31 ri Perenttiya-

D

1 nanganu is (Va)-
2 dkaduvinna (A)-
3 mbatarin kudi-
4 yaku ganut Vehe-
5 r-kämiyan däkvu-
6 nu sanganat deva-
7 nu Kot vändä Ek-
8 tän samiyan de-
9 nut vada]en Ma-
10 mahindehi satar si-
11 myen ätulatä
12 Vû täna vû me-
13 gamhi täbu at-
14 tni kanu pära
15 här dunumha

Figures: Crow

Cobra-Monk;s fan

Dog

28 reläkkān no va-

29 dn kot is

30 Veher kāmīyan

31 veher vattat

32 kudiyan no

ATTACHMENT NO 2: ÄTKADA PILLA INSCRIPTION

A	B	C	D
1 Sirisang-	1 rā kudasa-	1 nat Ratladu Pa-	1 nan bala
2 Bo Mapurmu-	2 lā kitim i-	2 sladu Mag-	2 gannā kot
3 Kā savanne	3 sā āp me	3 diva Pediva Du	3 isā megāmā
4 Ā sela a-	4 tuvāk dena	4 numandul Me-	4 kudin hūran mu
5 va viseni	5 mo Uturpa	5 lāssi no	5 van sahavun
6 Davas vada-	6 sā Matābi	6 vadna kot	6 nomranu isā
7 Leyin ā	7 mā āvu ka-	7 isā Deruva-	7 vadāleyin me
8 Mekāppa-	8 [i]vān.....	8 tān Deruva-	8 Attāni
9 R (vādārum)	9	9 nā.....	9
10.....	10	10.....	10

ATTACHMENT NO 3: RUVANMADUVA PILAR INSCRIPTION

References

- o Amravansha, K, 1969, Lakdhiva sellipi, Colombo: M.D. Gunasena and Grup.
- o Kautilya Arthashastharaya, 2003, Authority 3,4,5,6,7, Version, Hiripitiye pghakiththi thero, Maradana: S. godage saha sahodharayo.
- o Ghanavimala thero, B, 1986, Ashoka Inscription, Maradana: Madhawa Prints.
- o Dighanikya, 2004, Buddha Jayanthi Tripitaka garnthamalawa, nedimahala, Buddhist Cultural Center.
- o Pachiththiyapali, 2004, Buddha Jayanthi Tripitaka garnthamalawa, nedimahala, Buddhist Cultural Center.
- o Parajikapali, 2004, Buddha Jayanthi Tripitaka garnthamalawa, nedimahala, Buddhist Cultural Center.
- o Mahavanshaya, 1967, (edit): Sumangala thero and Batuwanthudawe, Colombo: Ratna Book Press.
- o Mahavaggapali, 2004, Buddha Jayanthi Tripitaka garnthamalawa, nedimahala, Buddhist Cultural Center.
- o Medhanandha, D, 1997, Buddhism and environment, Colombo: Ministry of Buddhism.
- o Ranawella, S, 2014, Asirimath Kotte, (edit), B, Hettiarchi and others, Colombo: Government printing Department.
- o Saranandha, L, 2016. Buddhist Thought on Environmental Conservation, Colombo: S. Godage and brothers.
- o Samyutta Nikya. 2004, Buddha Jayanthi Tripitaka garnthamalawa, nedimahala, Buddhist Cultural Center.
- o Rawella, S 2001 Inscription of Ceylon, vol. v part I, Colombo; Department of Archaeology,
- o Ranawella, 2004 Inscription of Ceylon, vol. v part II, Colombo; Department of Archaeology,
- o Wicramasinghe 1912, Epigraphia Zeylanica, vol, I Archaeological Survey of Ceylon, Landon; Oxford University press.

Ven. Beragagama Saddhananda thero
Senior Lecturer and the Dean of the Faculty of Buddhist Studies
at the Buddhist and Pali University of Sri Lanka

Ven. Gammahegewewa Amitha thero
Lecturer (Temporary) Department of Archaeology
Buddhist and Pali University of Sri Lanka



Trade Relations Between India and Sri Lanka: From the Itihasa of the Ramayana to Contemporary Economic Partnership

Shruti Das, Anshika Mittal

Abstract— India and Sri Lanka are bound by one of the oldest continuous relationships in maritime Asia, a relationship that predates the modern nation-state and is remembered, in Indian cultural memory, through the itihasa of the Ramayana and the crossing associated with Lord Rama. This paper traces the arc of India-Sri Lanka trade relations across three registers: the cultural-mythological register of the Ramayana and the Vedic hymn Shri Suktam, in which the island figures as a land of wealth guarded by Kubera; the historical register of ancient, medieval, and colonial maritime commerce; and the contemporary register of the India-Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA) and India's role as Sri Lanka's principal source of emergency support during the 2004 tsunami, the post-conflict recovery after 2009, and the sovereign debt crisis of 2022. The paper is careful to distinguish traditional and itihasa material, which is a matter of faith and literary heritage, from documented economic history, and argues that the two registers together help explain why India has repeatedly acted as Sri Lanka's first responder in moments of crisis.

Keywords— *India, Sri Lanka, Ramayana, Shri Suktam, Kubera, ISFTA, maritime trade, Neighbourhood First*

1. Introduction

The Palk Strait and the Gulf of Mannar separate India and Sri Lanka by little more than thirty kilometres of shallow sea at their narrowest point, a distance that has, for most of recorded history, functioned less as a barrier than as a corridor. Along this corridor moved pilgrims, monks, spices, pearls, elephants, textiles, and ideas, long before either country existed in its present political form. Two very different kinds of sources preserve the memory of this exchange. The first is itihasa - the received narrative tradition of the Ramayana, in which the island of Lanka appears as the kingdom of Ravana and the site of Lord Rama's campaign to recover Sita - together with Vedic hymns such as the Shri Suktam, which invoke the island's legendary wealth through the figure of Kubera, the guardian of riches. The second is the documentary and archaeological record of trade: Chola-era inscriptions, Anuradhapura-period ports, colonial customs records, and, in the present day, bilateral trade statistics and treaty texts. This paper reads both registers together, while being explicit about which claims belong to devotional and literary tradition and which are supported by historical or economic evidence.

The paper is organised as follows. Section 2 discusses the Ramayana tradition as a repository of cultural memory about Lanka's wealth and its relationship with the mainland. Section 3 turns to the

Shri Suktam and the figure of Kubera, presenting the hymn's genuine Sanskrit verses and situating the popular story of Ravana displacing Kubera from Lanka within the itihasa tradition rather than as documented economic history. Section 4 surveys ancient and medieval maritime trade. Section 5 discusses colonial disruption. Section 6 examines the ISFTA and present-day trade volumes. Section 7 documents India's assistance to Sri Lanka during three major crises. Section 8 briefly notes reciprocal Sri Lankan contributions to India, and Section 9 concludes.

2. Trade and Cultural Memory in the Ramayana Tradition

In the Ramayana, Lanka is described as a city of extraordinary opulence - its ramparts, according to the traditional narrative, wrought in gold, its markets and treasuries overflowing with gems, pearls, and fine cloth. Whether or not these descriptions correspond to any single historical settlement, they encode something historically plausible: that the island south of the Indian mainland was, from a very early period, associated in the Indian imagination with maritime wealth, precisely because it lay astride the sea lanes carrying pearls from the Gulf of Mannar, cinnamon and other spices from the island's interior, and gems for which Sri Lanka has been famous into the modern era.

The itihasa also encodes a story of connection rather than mere conquest. Rama's crossing to Lanka, traditionally associated with the causeway remembered as Rama Setu (also called Adam's Bridge), is followed in the narrative not by the destruction of the island but by the restoration of its throne to Vibhishana, Ravana's righteous younger brother, who is thereafter portrayed as a devoted ally of Ayodhya. Read as cultural memory rather than as a chronicle, this arc - crossing, conflict, and the installation of a friendly and legitimate ruler - has long been understood by scholars of Indian religion and literature as a foundational narrative for the idea that the mainland and the island are bound together not by domination but by dharmic partnership. This same idea recurs, in a secular register, in the modern diplomatic vocabulary that describes India and Sri Lanka as sharing 'civilisational' and 'people-to-people' ties, and it is invoked, sometimes literally, in Indian political rhetoric when discussing contemporary assistance to Colombo.

It is important to state plainly that the historicity of the Ramayana's specific events is a matter of religious faith and literary tradition, and is treated differently by different communities of readers; it is not treated here as verified archaeological or documentary history. What can be said with more confidence, on the basis of the historical and archaeological record discussed in Section 4, is that a highly organised, wealth-generating maritime relationship between the Indian mainland and Sri Lanka existed from antiquity, and that this relationship is precisely the kind of material reality that a wealth-focused, richly ornamented literary description of Lanka would plausibly reflect and elaborate.

3. Shri Suktam, Kubera, and the Itihasa of Wealth

A second thread of cultural memory linking wealth, the south, and the guardianship of riches runs through the Shri Suktam, a khila (supplementary) hymn of the Rig Veda dedicated to the goddess Lakshmi. The Shri Suktam does not itself narrate the story of Ravana and Kubera, and it does not contain literal references to bilateral trade with the island of Lanka; it would be inaccurate to present it as a trade document. What the hymn does contain is a repeated invocation of Kubera - described in the verses as the 'friend' whose arrival brings fame and prosperity - a figure whom the wider Puranic and epic tradition identifies as the half-brother of Ravana and the original ruler of Lanka

before Ravana is said, in the itihasa, to have driven him out and taken the island, along with the celestial chariot Pushpaka Vimana, for himself. Kubera is thereafter associated in the tradition with Alaka in the Himalayas, while Lanka remains under Ravana until Rama's campaign restores it to Vibhishana. This narrative of displacement and restoration is itihasa - traditional sacred narrative - and is presented here as such, alongside, rather than fused with, the separate and genuine text of the Shri Suktam.

A small selection of the hymn's fifteen core verses is given below in Devanagari, transliteration, and translation, to illustrate the register in which Kubera and prosperity are invoked.

हिरण्यवर्णा हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥1॥

Hiranyavarnam harinim suvarnarajatasrajam ।

Candram hiranmayim lakshminim jatavedo ma avaha ॥1॥

1. O Jatavedas (Agni), invoke for me that Lakshmi who is of golden complexion, beautiful, adorned with garlands of gold and silver, moon-like and resplendent as gold.

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।

यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥2॥

Tam ma avaha jatavedo lakshminim-anapagaminim ।

Yasyam hiranyam vindeyam gam-asvam purushan-aham ॥2॥

2. Bring to me, O Jatavedas, that Lakshmi who never departs, by whose grace I may obtain gold, cattle, horses, and dependants.

अश्वपूर्वा रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।

श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥3॥

Asvapurvam rathamadhyam hastinada-prabodhinim ।

Sriyam devam-upahvaye srirma devi jushatam ॥3॥

3. I invoke the goddess Sri, who is preceded by horses, seated in the midst of chariots, and awakened by the trumpeting of elephants - may that goddess Sri favour me.

Toward the close of the hymn, one verse is popularly rendered in devotional translation as an invocation of Kubera's friendship and of fame born of prosperity: 'May the friend of Kubera come to me, and fame together with wealth; born into this land, may he grant me renown and prosperity.' This popular rendering is widely circulated in devotional collections, though exact wording and verse numbering vary somewhat across published recensions of the hymn.

The hymn closes, in its fifteenth verse, with the statement that one who purifies himself and offers ghee while reciting this suktam of fifteen verses daily will draw the favour of Sri. A sixteenth and seventeenth verse (phalashruti, or 'fruit of recitation') are appended in most printed editions and describe the benefit of recitation rather than adding further content about Kubera or Lanka.

Read cautiously, the Shri Suktam and the Kubera-Ravana itihasa together suggest that the pre-

modern Indian imagination associated the island south of the mainland with concentrated, well-guarded wealth from a very early period - plausibly because it lay on real pearl, gem, and spice routes - and that this wealth needed, in the moral logic of the epic, to be held by a righteous guardian (Kubera, and later Vibhishana) rather than by a usurper (Ravana). This is a devotional and literary framework, not an economic history in the technical sense; the documented economic history begins in Section 4.

4. Ancient and Medieval Maritime Trade

The documentary and archaeological record shows sustained maritime exchange between South India and Sri Lanka from at least the early historic period. Tamil Sangam-era references, and later Chola inscriptions, describe trade in pearls from the Gulf of Mannar, precious stones, elephants, spices - above all cinnamon, for which Sri Lanka became internationally famous - areca nut, and fine textiles. The Anuradhapura and later Polonnaruwa kingdoms maintained active ports that connected the island to South Indian dynasties (Pandya, Chola, Pallava) as well as, through them, to wider Indian Ocean networks reaching to Rome, Arabia, and Southeast Asia. Buddhist monastic and pilgrimage traffic moved alongside commercial cargo, reinforcing trade with cultural and religious ties, much as the *itihasa* tradition discussed above imagines the mainland and the island as bound by more than commerce alone. The Chola presence in parts of northern Sri Lanka in the eleventh century, whatever its political character, also intensified commercial integration, and the medieval period saw continued exchange of gems, ivory, and spices for South Indian grain, iron goods, and textiles.

5. Colonial Disruption

The arrival of Portuguese (from 1505), Dutch (from 1658), and finally British (from 1796, with full control by 1815) colonial administration reoriented Sri Lanka's trade away from organic regional networks and toward metropolitan markets in Lisbon, Amsterdam, and London. Plantation agriculture - cinnamon under the Dutch, and later coffee and, still more consequentially, tea and rubber under the British - replaced diversified local production with export monocultures tied to colonial capital. India itself was under British rule for most of this period, and the two colonies were increasingly administered as parts of a single imperial economic system, with indentured Tamil labour recruited from South India to work Ceylon's tea estates - a migration that, alongside its considerable human cost, created lasting demographic and cultural links between the two countries that persist to the present. The colonial interlude thus did not sever the India-Sri Lanka relationship so much as it changed its shape, subordinating it to an external imperial logic before both countries achieved independence in 1947 and 1948 respectively.

6. Contemporary Trade Relations: ISFTA and Beyond

Independent India and Sri Lanka rebuilt bilateral commerce gradually, and the relationship was placed on a formal treaty footing with the India-Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA), signed on 28 December 1998 and in force from 1 March 2000 - Sri Lanka's first bilateral free trade agreement and among India's earliest as well. ISFTA reduced tariffs across a wide range of goods, with defined concessions such as duty relief on a fixed annual quota of Sri Lankan garments (subject

to Indian-fabric content requirements) and a concessional tariff quota for Sri Lankan tea. Sri Lankan exporters have made substantial use of the agreement - more than sixty per cent of Sri Lanka's exports to India in recent years have claimed ISFTA preferences - while Indian exporters, whose goods are broadly price-competitive in the Sri Lankan market regardless of preferential treatment, have used the agreement's provisions more sparingly.

The results are visible in trade volumes: bilateral merchandise trade stood at roughly US\$3.6 billion in 2020, rose to about US\$5.45 billion in 2021, reached US\$5.5 billion in FY 2023-24 (Indian exports of US\$4.1 billion and Sri Lankan exports of US\$1.4 billion), and was reported at approximately US\$7.1 billion for FY 2025-26. India has for years been Sri Lanka's largest trading partner and one of the largest sources of foreign direct investment in sectors including energy, tourism, hospitality, infrastructure, food and beverages, and textiles. Negotiations toward a broader Economic and Technology Co-operation Agreement (ETCA), intended to extend ISFTA into services, investment, and trade facilitation, have continued through more than a dozen rounds of talks, reflecting both the depth of the commercial relationship and the political sensitivities that still attend its further liberalisation on the Sri Lankan side.

7. India as Sri Lanka's Steadfast Neighbour: Crises and Support

Beyond routine commerce, India has repeatedly acted as Sri Lanka's first responder in moments of acute crisis, a pattern that gives the historical and cultural material of Sections 2-4 a contemporary echo.

The 2004 Indian Ocean tsunami struck Sri Lanka's coastline within hours of the earthquake off Sumatra, killing more than 30,000 people and displacing hundreds of thousands. The Indian Navy was among the first foreign forces to reach Sri Lankan shores, delivering water, medical teams, and relief supplies within a day of the disaster, and Indian assistance continued through medical camps, reconstruction of housing, and infrastructure rebuilding in the following years.

In the final phase and aftermath of Sri Lanka's civil war, which ended in 2009, India funded large-scale resettlement and reconstruction programmes for displaced persons in the Northern and Eastern Provinces, including the construction of tens of thousands of houses for war-affected families, restoration of the Palaly-Jaffna railway line, and support for de-mining and livelihood restoration - assistance framed explicitly around Colombo's own stated needs rather than conditions imposed from outside.

The most dramatic instance of Indian support came during Sri Lanka's 2022 sovereign debt and foreign-exchange crisis, its worst economic collapse since independence. As fuel queues stretched for kilometres, medicines ran short, and inflation exceeded fifty per cent, India extended in total close to US\$4 billion in emergency financing over the course of the year - including a US\$400 million currency swap under the SAARC facility, a deferral of roughly US\$510 million in Asian Clearing Union payment obligations, a US\$500 million line of credit for petroleum products, a further US\$1 billion credit line (through the State Bank of India) for food, medicine, and other essentials, and a US\$55 million credit line for fertiliser. India also supplied direct shipments of rice and other commodities as a goodwill gesture ahead of the Sinhala and Tamil New Year. Independent analysts have described India as Sri Lanka's 'lender of last resort' in this period, noting that this emergency support was extended even before Sri Lanka formally approached the International Monetary Fund,

and that it was later treated as exempt from the debt restructuring process negotiated with Sri Lanka's other creditors. India subsequently supported Sri Lanka's IMF programme with the financing assurances required for the Fund's Board approval, and extended the US\$1 billion State Bank of India credit line by a further year in 2023 to smooth the ongoing recovery, which the IMF reported in 2025 had restored roughly forty per cent of the output lost between 2018 and 2023.

Taken together, the tsunami response, the post-war resettlement programme, and the 2022 financial rescue illustrate a consistent pattern: whatever the state of formal trade statistics in a given year, India has functioned as Sri Lanka's most reliable neighbour in moments when the island's own resources were exhausted - a role that Indian officials themselves frequently describe, invoking the same register of civilisational kinship discussed in Section 2, as a natural extension of a relationship many generations older than either state.

8. Reciprocity: Sri Lanka's Contributions to India

The relationship is not one-directional. Sri Lanka has been a consistent supplier of tea, spices, gems, rubber-based products, and processed foods that Indian consumers and industry value, and Sri Lankan ports, particularly Colombo, historically handled a very large share of India's own transshipment container traffic before India expanded its own transshipment capacity, offering Indian exporters efficient access to global shipping lines. Sri Lanka has also served as a diplomatic and strategic partner for India in Indian Ocean security cooperation, including trilateral maritime security coordination with the Maldives, and as a cultural and pilgrimage destination for Indian Buddhist and Hindu pilgrims visiting sites associated with the Ramayana tradition and with early Buddhism. In recent years growing digital and financial integration - including the extension of India's UPI payment system to Sri Lanka - has added a further, technology-driven layer of reciprocal partnership to the historically asymmetric flow of large-scale financial assistance.

9. Conclusion

India and Sri Lanka's trade relationship cannot be fully understood through economic statistics alone, nor can it be reduced to the itihasa tradition of the Ramayana and the Shri Suktam. The two registers instead illuminate each other. The literary and devotional memory of Lanka as a land of guarded wealth, crossed by Rama and restored to righteous rule, encodes a very old intuition that the island's prosperity and the mainland's fortunes are entangled; the documented history of Chola-era ports, colonial plantation trade, the ISFTA, and India's extraordinary interventions during the 2004 tsunami, the post-war recovery, and the 2022 economic collapse show exactly how that entanglement has operated in practice across two and a half millennia. As Sri Lanka's economic recovery continues under its IMF-supported reform programme, and as India and Sri Lanka work toward a broader Economic and Technology Co-operation Agreement, the relationship appears set to deepen further - a modern chapter in what Indian officials, echoing the epic itself, are fond of calling one of the oldest friendships in the region.

Work Cited

1. Valmiki. Ramayana (traditional itihasa; multiple recensions and translations).
2. Rig Veda Khila: Shri Suktam. Verses and translations after Shlokam.org, "Sri Suktam - Sanskrit lyrics with

- English meaning,” shlokam.org/srisuktam, and Greenmesg.org, “Sri Suktam - Sanskrit Text with English Translation,” greenmesg.org/stotras/lakshmi/sri_suktam.php.
3. Hindu Temple Talk, “Sri Suktam - Sanskrit And English Verses With Meaning,” hindutempletalk.org, 2021.
 4. Wikipedia, “Kubera” and “Ravana” (traditional genealogy of Kubera and Ravana as sons of Vishrava, and Kubera’s displacement from Lanka).
 5. Department of Commerce, Sri Lanka, “Indo-Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA),” doc.gov.lk.
 6. High Commission of India, Colombo, “India-Sri Lanka Economic And Trade Engagement,” hcicolombo.gov.in.
 7. Directorate General of Commercial Intelligence and Statistics (India), India-Sri Lanka bilateral trade note, FY 2023-24 and FY 2024-25 figures.
 8. Global Trade Research Initiative (GTRI), “India-Sri Lanka Free Trade Agreement (ISFTA) expansion,” 4 August 2024.
 9. Observer Research Foundation, “India-Sri Lanka Economic Relations: The Rise of a Digital and Financial Partnership,” 21 November 2025.
 10. ODI, “India as an emerging aid donor to debt crisis hit Sri Lanka,” odi.org.
 11. The Diplomat, “India as a Lender of Last Resort,” 7 July 2023.
 12. Outlook India, “Sri Lanka Crisis: India Top Lender To Sri Lanka In 2022, Says Think Tank Report,” 2022.
 13. Al Jazeera, “India extends \$1bn credit line for Sri Lanka by a year,” 9 May 2023.

Note: Sections 2 and 3 draw on the Ramayana and Shri Suktam as itihasa and devotional literature, presented as cultural and literary heritage rather than as independently verified historical documentation. Readers seeking the historicity debate around the Ramayana and Rama Setu should consult specialist archaeological and historiographical literature separately.

Shruti Das, General Secretary
(Swastik Welfare Trust)
Anshika Mittal, IT Incharge
(Swastik Welfare Trust)



Buddhist Psychology and Mental Well-Being: A Comparative Perspective on India and Sri Lanka

P. M. G. Chathurangani

Abstract- Buddhist teachings have increasingly attracted attention within contemporary psychology because of their emphasis on understanding suffering, emotional regulation, mindfulness, compassion, and psychological well-being. Although Buddhism originated in India and subsequently developed into a major religious and cultural tradition in Sri Lanka, its psychological dimensions have relevance beyond religious boundaries. Buddhist thought contains systematic analyses of human experience, mental processes, desire, attachment, and suffering. This paper examines Buddhist psychology and its contribution to contemporary understandings of mental well-being, with particular attention to the social and cultural contexts of India and Sri Lanka. The paper explores selected Buddhist concepts, including the Four Noble Truths, mindfulness (sati), compassion (karuGa), loving-kindness (metta), impermanence (anicca), and non-self (anatta), and considers their relevance to emotional regulation, stress and coping, psychological flexibility, interpersonal relationships, and psychological well-being. A comparative perspective is used to discuss how Buddhist psychological ideas have been embedded within Indian and Sri Lankan cultural contexts. The paper argues that Buddhist psychology can provide a valuable culturally informed framework for understanding human suffering and well-being, while contemporary psychological approaches can contribute empirical methods for evaluating relevant practices. At the same time, Buddhist concepts should not be reduced simply to therapeutic techniques because they are embedded within broader ethical, philosophical, and cultural systems.

Keywords: *Buddhist psychology, mental well-being, mindfulness, compassion, emotional regulation, cultural psychology, India, Sri Lanka*

Introduction- Psychology is concerned with understanding human behaviour, cognition, emotions, relationships, and psychological well-being. Traditionally, psychological research has relied heavily on scientific observation and empirical investigation. However, contemporary psychology has increasingly recognized the importance of culture, meaning, and diverse understandings of human experience and human behaviours. This has created opportunities for dialogue between psychology and traditional philosophical and contemplative systems (Davidson and Kaszniak, 2015). Buddhism is particularly relevant to this interdisciplinary discussion. Originating in ancient India, Buddhism developed an extensive analysis of suffering, desire, attachment, perception, consciousness, and human behaviour (Gethin, 1998). Although Buddhism should not be described simply as an ancient form of modern psychology, its teachings contain systematic reflections on mental processes and human experience (Harvey, 2013). The relationship between India and Sri Lanka is especially significant. Buddhism originated in India and was subsequently transmitted to Sri Lanka, where it

became deeply connected with religious, cultural, educational, literary, and social life (Harvey, 2013). This historical relationship provides a valuable context for examining how Buddhist concepts concerning the mind and well-being have developed within different cultural environments. In recent decades, Buddhist-derived practices such as mindfulness and meditation have attracted substantial interest within psychology. Mindfulness-based interventions have been incorporated into psychological and healthcare contexts, while research has examined their relationship with stress, emotional regulation, attention, and psychological well-being (Kabat-Zinn, 2003). Meditation has likewise been investigated through systematic reviews and meta-analyses (Sedlmeier et al., 2012).

However, the adaptation of Buddhist practices into modern psychology also raises important questions. When mindfulness is removed from its traditional ethical and philosophical context, does it retain the same meaning? How can psychological researchers study Buddhist practices without reducing complex religious and cultural traditions to simple therapeutic techniques? These questions are particularly important when examining Buddhism in culturally connected but distinct contexts such as India and Sri Lanka. This paper therefore examines Buddhist psychology and mental well-being from an interdisciplinary perspective. It focuses on Buddhist concepts that have relevance to contemporary psychology and considers their social and cultural significance in India and Sri Lanka.

Objectives of the Study

1. To examine the psychological dimensions of selected Buddhist teachings.
2. To explore the relationship between Buddhist principles and psychological well-being.
3. To examine the relevance of mindfulness, compassion, emotional regulation, to contemporary psychology.
4. To discuss the social and cultural significance of Buddhist psychology in India and Sri Lanka.
5. To identify opportunities and limitations in integrating Buddhist concepts with contemporary psychological approaches.

Understanding Buddhist Psychology

The term “Buddhist psychology” refers broadly to Buddhist analyses of the mind, emotions, behaviour, suffering, and the cultivation of wholesome mental states. Buddhism developed as an ethical, philosophical, and soteriological tradition rather than as a scientific discipline in the modern sense (Gethin, 1998). Buddhist teachings examine how desire, attachment, aversion, ignorance, perception, and other mental processes influence human experience (Harvey, 2013). The analysis of the mind is therefore closely connected with the Buddhist concern with suffering and liberation. One important feature of Buddhist psychology is its focus on the relationship between mental processes and suffering. Human beings may experience dissatisfaction when they become strongly attached to changing experiences, possessions, identities, expectations, and relationships (Harvey, 2013). This has potential parallels with contemporary psychology, which investigates cognition, emotion, behavioural patterns, and responses to stressful situations. Nevertheless, Buddhist psychology should not simply be described as an early version of contemporary psychology. Its ultimate aims and philosophical assumptions are different (Gethin, 1998).

The Four Noble Truths and the Psychology of Suffering- The Four Noble Truths are central to Buddhist teaching. They concern dukkha, its causes, the possibility of its cessation, and the path

associated with overcoming it (Harvey, 2013). The first Noble Truth recognizes the presence of suffering, dissatisfaction, and unsatisfactoriness in human experience. The second identifies craving and attachment as important conditions contributing to suffering. The third proposes that suffering can cease, while the fourth presents a path of practice. From a psychological perspective, this framework is significant because it begins with an examination of human experience. People encounter disappointment, loss, frustration, uncertainty, interpersonal conflict, and change. Buddhism encourages individuals to examine the causes and conditions associated with such experiences (Gethin, 1998). The relationship between attachment and suffering is particularly relevant. Individuals may experience distress when reality fails to match strongly held expectations. Buddhist teachings encourage awareness of craving and attachment rather than complete identification with them (Harvey, 2013). The Four Noble Truths can therefore be viewed as providing a framework for examining the relationship between experience, interpretation, attachment, and suffering. However, this should be understood as a conceptual connection rather than as evidence that the Four Noble Truths constitute a modern psychological theory.

Mindfulness and Psychological Well-Being- Mindfulness is one of the most widely studied Buddhist-derived concepts in contemporary psychology. In modern psychological contexts, mindfulness is often described as intentional awareness of present-moment experience accompanied by a non-reactive or accepting attitude (Kabat-Zinn, 2003). Kabat-Zinn (2003) played an influential role in bringing mindfulness-based interventions into contemporary healthcare and psychological settings. Baer (2003) subsequently reviewed the conceptual and empirical literature concerning mindfulness training and its potential clinical applications. From a Buddhist perspective, however, mindfulness is more than a relaxation strategy. It forms part of a broader path involving ethical development, mental discipline, and insight (Bodhi, 2011). Bodhi (2011) argues that the traditional Buddhist understanding of mindfulness is more specific and contextually embedded than some modern interpretations suggest. This distinction is important because contemporary psychological interventions may use mindfulness in ways that differ from its traditional Buddhist framework. Mindfulness may help individuals become more aware of thoughts, emotions, and bodily experiences without immediately reacting to them. This may provide an opportunity for more deliberate responses to difficult situations (Baer, 2003).

However, mindfulness should not be presented as a universal solution to psychological difficulties. Davidson and Kaszniak (2015) identify important conceptual and methodological challenges in mindfulness research, including issues concerning definitions, measurement, study design, and interpretation.

Compassion and Loving-Kindness- Compassion (karuṇā) and loving-kindness (mettā) are important qualities within Buddhist traditions. Compassion involves sensitivity toward suffering and a motivation to respond constructively, while loving-kindness emphasizes goodwill toward oneself and others (Harvey, 2013). These concepts have relevance to contemporary psychological research concerning empathy, prosocial behaviour, interpersonal relationships, and well-being. Self-compassion is particularly relevant. Neff (2003) conceptualized self-compassion as involving self-kindness, recognition of common humanity, and mindful awareness of difficult experiences. This provides an interesting point of connection between Buddhist-inspired ideas and contemporary psychological theory. A compassionate approach may reduce harsh self-judgment when individuals encounter mistakes or difficulties. Similarly, compassion toward others may encourage understanding rather

than hostility.

Impermanence and Psychological Adaptation- The Buddhist concept of anicca, or impermanence, emphasizes that conditioned phenomena are continually changing (Harvey, 2013). Human experiences are constantly changing. Emotions arise and pass, relationships develop and change, and social circumstances shift. Psychological distress may sometimes be intensified by the expectation that a particular situation should remain unchanged. The recognition of impermanence can therefore be interpreted as encouraging adaptation to change. An individual experiencing disappointment, for example, may recognize that the current situation is part of a changing process rather than a permanent condition. This perspective has potential relevance to resilience and psychological flexibility. Nevertheless, empirical research is required to determine how beliefs concerning impermanence actually influence psychological outcomes.

The Concept of Non-Self and Psychological Identity- The Buddhist concept of anatta commonly translated as non-self, presents a complex understanding of personal identity. Buddhist thought challenges the idea of a completely permanent and independent self (Harvey, 2013). This concept has potential relevance to psychological discussions concerning identity and self-concept. People may sometimes develop rigid narratives about themselves, such as defining themselves entirely through academic success, failure, social status, or past experiences. A more flexible understanding of identity may allow individuals to recognize that characteristics and circumstances can change. However, anatta should not be directly equated with psychological concepts such as self-esteem or self-concept. It represents a broader philosophical position concerning the nature of human experience (Gethin, 1998).

Buddhist Psychology in the Indian Context- India occupies a central place in the history of Buddhism because Buddhism emerged within the intellectual and cultural environment of ancient India (Gethin, 1998). Buddhist thought developed alongside other Indian philosophical traditions concerned with consciousness, suffering, ethics, knowledge, and liberation. The Buddhist analysis of the mind therefore forms part of a wider history of Indian philosophical reflection. In contemporary India, Buddhist concepts remain relevant within religious, philosophical, educational, and psychological discussions. However, Buddhist communities and practices in India are diverse, and their social meanings vary across historical and cultural contexts. This diversity demonstrates the importance of culturally sensitive psychological research. Psychological theories developed in one cultural environment should not automatically be assumed to have identical meanings in another.

Buddhist Psychology in the Sri Lankan Context Sri Lanka has played an important role in the preservation and development of Theravada Buddhist traditions. Buddhism has influenced Sri Lankan religious life, literature, education, art, and cultural practices over many centuries (Harvey, 2013). This context provides an important setting for examining the relationship between Buddhism and psychological well-being. Buddhist concepts may be encountered through religious education, temple activities, meditation, ethical teachings, and community practices. Consequently, concepts such as mindfulness and compassion may have meanings that differ from their interpretation when presented exclusively as modern psychological techniques. Studying Buddhist psychology in Sri Lanka therefore requires attention not only to individual psychological outcomes but also to the cultural and social environments in which Buddhist practices are embedded.

Comparative Perspective: India and Sri Lanka- India and Sri Lanka share a long historical

relationship through Buddhism, although Buddhist traditions have developed within different social and cultural environments (Gethin, 1998). In India, Buddhism forms an important part of the country's philosophical and historical heritage, while contemporary Buddhist communities represent diverse traditions. In Sri Lanka, Theravada Buddhism has maintained a particularly strong institutional and cultural presence. This provides an opportunity for comparative psychological research. Researchers could investigate how people in India and Sri Lanka understand concepts such as mindfulness, compassion, suffering, impermanence, and ethical conduct. A comparative study could ask whether mindfulness is understood primarily as a religious practice, a psychological practice, or a combination of both. It could also examine whether Buddhist practices are associated with different understandings of stress, coping, interpersonal relationships, and psychological well-being. Such research would demonstrate the value of integrating psychology with Buddhist studies and cultural psychology.

Relevance of Buddhist Psychology to Contemporary Psychology- Buddhist psychology has considerable relevance to contemporary psychological research, particularly in the areas of emotional regulation, stress management, , and well-being. However, these connections should be understood carefully because Buddhist concepts originate within a broader ethical and philosophical framework and should not simply be equated with modern psychological constructs (Gethin, 1998).

Emotional Regulation- Emotional regulation refers to the ways individuals understand, manage, and respond to emotional experiences. Mindfulness encourages individuals to observe thoughts, emotions, and bodily experiences with greater awareness rather than responding automatically to them. This emphasis on awareness has contributed to the development of mindfulness-based psychological interventions (Kabat-Zinn, 2003). This makes mindfulness relevant to contemporary psychological discussions of emotional regulation. However, further empirical research is necessary to determine how different mindfulness practices affect different forms of emotional regulation (Davidson and Kaszniak, 2015).

Stress and Coping- Stress can arise from academic pressure, interpersonal difficulties, uncertainty, major life changes, and other challenging circumstances. Buddhist meditation and mindfulness practices have been investigated as possible approaches to coping with stressful experiences. Mindfulness may encourage individuals to pay attention to present experience rather than becoming completely absorbed in worries about the past or future. This does not mean that mindfulness eliminates stressful circumstances; rather, it may influence how individuals relate to those circumstances. Sedlmeier et al. (2012), in a meta-analysis of meditation research, found evidence of various psychological effects associated with meditation. However, the findings varied according to the type of meditation and outcome measured. Therefore, it would be inappropriate to claim that Buddhist meditation “cures” stress. A more appropriate psychological interpretation is that mindfulness and meditation may provide strategies for developing awareness and potentially responding to stressful experiences more adaptively.

Psychological Well-Being- Buddhist approaches offer a broader conception of well-being than simply experiencing positive emotions. Well-being may involve ethical conduct, compassion, wisdom, awareness, and reduced attachment (Gethin, 1998). This perspective can contribute to contemporary psychology by encouraging researchers to consider not only whether people feel happy but also how they develop meaningful, ethical, and socially connected ways of living.

Mindfulness and Cultural Context- An important issue in applying Buddhist psychology to contemporary psychology is cultural adaptation. Modern mindfulness-based interventions often use mindfulness in secular healthcare or educational contexts. This has made mindfulness more accessible to people who do not identify with Buddhism (Kabat-Zinn, 2003). However, Bodhi (2011) points out that traditional Buddhist mindfulness exists within a broader framework of ethical practice and mental development. Therefore, researchers should be careful when separating mindfulness from the Buddhist framework in which it developed. Davidson and Kaszniak (2015) similarly emphasize the importance of conceptual clarity and methodological rigor in mindfulness research.

Social and Cultural Significance- Psychological well-being does not exist independently of culture. People's understandings of mental health, suffering, happiness, relationships, identity, and coping are influenced by social and cultural environments. This is particularly important in India and Sri Lanka, where Buddhist concepts have historical and cultural significance. A culturally sensitive approach can help researchers understand how psychological experiences are interpreted within communities. Mindfulness may be presented as a secular intervention, whereas within Buddhist traditions it relates to ethical development and a broader path of mental cultivation (Bodhi, 2011). Therefore, interdisciplinary research should examine both the psychological effects of Buddhist-derived practices and the cultural meanings attached to those practices.

Challenges and Limitations- Despite the potential contribution of Buddhist psychology to contemporary psychology, several limitations should be recognized. Buddhist teachings should not be reduced entirely to psychological techniques. Mindfulness and compassion are traditionally connected with ethical and philosophical principles (Bodhi, 2011). Also, scientific claims concerning Buddhist practices should be supported by empirical research. Davidson and Kaszniak (2015) identify several conceptual and methodological challenges in mindfulness and meditation research. In addition to that cultural adaptation can change the meaning of practices. A meditation practice removed from its original ethical and philosophical context may function differently from traditional Buddhist practice. Finally, psychological well-being is multidimensional. Buddhist practices may be relevant to well-being, but social support, family relationships, education, economic circumstances, physical health, and access to psychological services also influence psychological well-being.

Discussion- The literature examined in this paper indicates that Buddhist psychology provides several concepts relevant to contemporary discussions of psychological well-being. The Four Noble Truths provide a framework for examining suffering and its conditions, while mindfulness emphasizes awareness of present experience (Kabat-Zinn, 2003).

Compassion and loving-kindness provide an interpersonal dimension, while impermanence and non-attachment encourage reflection on changing experiences and responses to difficulty (Harvey, 2013). The psychological relevance of mindfulness is particularly evident in research concerning emotional awareness, stress, and psychological well-being (Davidson and Kaszniak, 2015). Meditation has also been examined through quantitative research, although the findings require careful interpretation because meditation practices differ substantially (Sedlmeier et al., 2012). The relationship between Buddhism and psychology becomes particularly interesting when viewed through India and Sri Lanka. Buddhism originated in India and developed into a major cultural and religious tradition in Sri Lanka. The two countries therefore provide historically connected but culturally distinct contexts for examining Buddhist approaches to the human mind. A major contribution of an interdisciplinary perspective is

the recognition that psychological well-being cannot be completely separated from cultural meaning. A practice interpreted as a therapeutic technique in one context may be understood as an ethical or spiritual practice in another (Bodhi, 2011). Therefore, future research should avoid both extremes: rejecting traditional knowledge without examination or accepting traditional claims without empirical evidence. Dialogue between Buddhist studies, psychology, cultural studies, and empirical research can produce a more balanced understanding.

Conclusion- Buddhist psychology offers a valuable perspective for understanding human suffering, emotional experience, interpersonal relationships, and psychological well-being. Concepts such as mindfulness, compassion, loving-kindness, impermanence, and non-attachment have attracted considerable attention within contemporary psychological research (Baer, 2003). The historical and cultural relationship between India and Sri Lanka provides a meaningful context for interdisciplinary investigation. While Buddhism emerged in India, Sri Lanka became an important centre for the preservation and development of Buddhist traditions (Harvey, 2013). The psychological relevance of Buddhist ideas can be seen in several areas, including emotional regulation, stress and coping, psychological flexibility, interpersonal relationships, and well-being. Contemporary mindfulness research demonstrates the potential value of Buddhist-derived practices while also highlighting the importance of methodological rigor and conceptual clarity (Davidson and Kaszniak, 2015).

At the same time, Buddhist psychology should not be reduced to a collection of therapeutic techniques. Its concepts are embedded within broader ethical, philosophical, and contemplative systems. Contemporary psychology can contribute empirical methods for investigating Buddhist practices, while Buddhist perspectives can encourage psychology to consider broader cultural and philosophical understandings of well-being. Ultimately, dialogue between Buddhism and psychology may contribute to a more culturally sensitive understanding of mental well-being. Such interdisciplinary work is particularly relevant to the study of emotional regulation, psychological resilience, compassion, mindfulness, cultural psychology, and human flourishing.

References

- Baer, R. A. (2003). Mindfulness training as a clinical intervention: A conceptual and empirical review. *Clinical Psychology: Science and Practice*, 10(2), 125–143. <https://doi.org/10.1093/clipsy.bpg015>
- Bodhi, B. (2011). What does mindfulness really mean? A canonical perspective. *Contemporary Buddhism*, 12(1), 19–39. <https://doi.org/10.1080/14639947.2011.564813>
- Davidson, R. J., & Kaszniak, A. W. (2015). Conceptual and methodological issues in research on mindfulness and meditation. *American Psychologist*, 70(7), 581–592. <https://doi.org/10.1037/a0039512>
- Gethin, R. (1998). *The foundations of Buddhism*. Oxford University Press.
- Harvey, P. (2013). *An introduction to Buddhism: Teachings, history and practices* (2nd ed.). Cambridge University Press. <https://doi.org/10.1017/CBO9781139084320>
- Kabat-Zinn, J. (2003). Mindfulness-based interventions in context: Past, present, and future. *Clinical Psychology: Science and Practice*, 10(2), 144–156. <https://doi.org/10.1093/clipsy.bpg016>
- Neff, K. D. (2003). Self-compassion: An alternative conceptualization of a healthy attitude toward oneself. *Self and Identity*, 2(2), 85–101. <https://doi.org/10.1080/15298860309032>
- Sedlmeier, P., Eberth, J., Schwarz, M., Zimmermann, D., Haarig, F., Jaeger, S., & Kunze, S. (2012). The psychological effects of meditation: A meta-analysis. *Psychological Bulletin*, 138(6), 1139–1175. <https://doi.org/10.1037/a0028168>

Horagollagama, Nittambuwa, Sri Lanka
University of Delhi
International students' House for Women, Band Bahadur Marg, Mukherjee Nagar, Delhi 110009
Mob- +91 920 59 52 744, +94 76 740 29 18

(References)

- Abbi, A. (1992). Reduplication in South Asian Languages: An Areal, Typological and Historical Study. Allied Publishers.
- Hook, P. E. (1974). The Compound Verb in Hindi. The University of Michigan Press.
- Kachru, Y. (2006). Hindi. John Benjamins Publishing Company.
- Kellog, S. H. (1938). A Grammar of the Hindi Language. Routledge & Kegan Paul Ltd.
- McGregor, R. S. (1995). Outline of Hindi Grammar. Oxford University Press.
- Montaut, A. (2004). A Grammar of Hindi. Lincom Europa.
- Shapiro, M. C. (1989). A Primer of Modern Standard Hindi. Motilal Banarsidass Publishers.
- Verma, M. K. (1971). The Structure of the Noun Phrase in English and Hindi. Motilal Banarsidass Publishers.

Visiting lecturer
Buddhist and Pali University of Sri Lanka.

37/1AB
Keenaduwa
Janapriya mawatha
Alubomulla
Panadura.
Post code :12524
Tele 0718391058



From Dhamma to Discourse: A Linguistic Study of Early Buddhism

Pallavi Arya

Abstract

The emergence of Buddhism in ancient India was not only a religious and philosophical development but also a significant linguistic event. Early Buddhism arose within a multilingual environment in which Sanskrit carried considerable prestige in Brahmanical intellectual and ritual traditions, while a range of Middle Indo-Aryan and regional speech forms circulated in wider social contexts. The choice of linguistic forms therefore influenced how Buddhist teachings could be communicated, remembered, transmitted, and institutionalized. This paper examines early Buddhism through a linguistic perspective, focusing on language choice, specialized vocabulary, semantic change, caste and social identity, forms of address, oral transmission, religious authority, and language contact.

Particular attention is given to terms such as dhamma, kamma, nibbâna, saEgha, bhikkhu, and bhikkhunî, which acquired specialized meanings within Buddhist discourse. The paper also considers the relationship between Buddhist teachings and the social vocabulary of caste and status. Although Buddhist thought challenged the idea that birth alone determined spiritual worth, Buddhist discourse continued to use many categories and address forms inherited from contemporary society. This reveals an important distinction between ideological innovation and everyday linguistic practice. The study argues that the history of early Buddhism can also be understood as a history of discourse formation, semantic transformation, oral memorization, institutionalization, and linguistic negotiation.

Keywords: Buddhism, Pâli, Prakrit, language, discourse, semantics, sociolinguistics, caste, oral tradition, religious authority

1. Introduction

Buddhism is commonly studied through history, philosophy, religion, society, economy, and political institutions. Yet language provides another important way of understanding its emergence and development. Religious ideas become socially effective through words, forms of address, repeated formulas, narratives, and systems of classification. In the case of early Buddhism, this linguistic dimension is especially important because the teachings were initially transmitted orally before being preserved in textual traditions. The language used in preaching, dialogue, memorization, and later textualization therefore played a major role in the formation of Buddhist identity and authority.

Early Buddhism emerged in a multilingual ancient Indian environment. Sanskrit was strongly associated with Brahmanical learning and ritual prestige, while different Prakrit and Middle Indo-Aryan forms

were used in a variety of social and regional contexts. Buddhism developed within this linguistic diversity rather than outside it. Its linguistic choices helped shape the accessibility and identity of its teachings, while later literary traditions gave these forms greater standardization and institutional authority.

A linguistic study does not require the assumption that one surviving language represents the exact speech of the historical Buddha. Oral transmission, communal recitation, textual compilation, and later editorial processes make such a reconstruction difficult. Instead, the present study examines the linguistic patterns preserved in Buddhist traditions and asks what those patterns reveal about communication, social identity, religious authority, and institutional development.

2. Objectives of the Study

- To examine the emergence of Buddhism from a linguistic perspective.
- To discuss the position of Pāli and Prakrit within the multilingual environment of ancient India.
- To analyze semantic change and the formation of specialized Buddhist vocabulary.
- To examine the relationship between language, caste, and social identity.
- To study forms of address and greeting as indicators of social relations.
- To understand the role of oral formulae and repetition in the transmission of Buddhist teachings.
- To identify the development of a distinctive Buddhist religious register.
- To examine language as a medium through which religious authority was challenged and later institutionalized.
- To consider linguistic change produced by translation, contact, and geographical expansion.
- To demonstrate how linguistic analysis can contribute to the historical study of Buddhism.

3. Methodology

The study follows a qualitative and interdisciplinary linguistic approach. It draws on the supplied scholarly discussion of the origin, nature, development, and decline of Buddhism and interprets its themes through historical linguistics, sociolinguistics, semantics, pragmatics, discourse analysis, and the study of language contact. The purpose is not to reconstruct a single original Buddhist language but to identify linguistic processes visible in the early Buddhist tradition.

The analysis pays particular attention to vocabulary, semantic specialization, social categories, address forms, oral formulae, and the relationship between language and religious authority. Because the early teachings circulated orally, linguistic forms should be understood as products of repeated communal transmission as well as individual speech. The later textual traditions represent an important stage in the standardization and preservation of this discourse.

The study therefore distinguishes between linguistic evidence and historical certainty. It avoids treating Pāli as a simple transcript of everyday speech and does not assume that every surviving formulation can be directly attributed to the historical Buddha. Instead, linguistic patterns are treated as evidence for the development of a Buddhist communicative and institutional tradition.

4. Linguistic Background: Sanskrit, Prakrits and Pâli

Ancient India was characterized by linguistic diversity. Sanskrit occupied a prestigious position in Brahmanical intellectual, ritual, and literary traditions, while various Prakrit and Middle Indo-Aryan forms circulated across different communities and contexts. The emergence of Buddhism must therefore be placed within a linguistic field in which choices of register could have social and ideological implications.

Pâli occupies an important position in this history, but it should not be simplistically identified as the single 'language of the common people.' Pâli represents a complex Middle Indo-Aryan literary tradition that developed conventions of vocabulary, grammar, narrative organization, and textual transmission. Its importance lies partly in the fact that Buddhist literature established an alternative literary and religious register outside the exclusive prestige associated with Sanskritic traditions.

This alternative register did not mean that Buddhist discourse rejected all earlier linguistic resources. Rather, it adapted existing linguistic material to new religious purposes. The result was a developing Buddhist vocabulary and discourse style that could communicate teachings, organize communities, preserve formulas, and establish textual authority.

5. Pâli, Accessibility and Religious Communication

The use of Middle Indo-Aryan forms could broaden the communicative reach of Buddhist teaching beyond highly specialized Sanskritic intellectual settings. Religious communication depends not only on the content of a doctrine but also on the linguistic forms through which listeners encounter it. The use of a different register could make Buddhist preaching appear more accessible while simultaneously creating a new linguistic identity.

At the same time, accessibility should not be equated with complete linguistic simplicity. Buddhist literature developed specialized vocabulary, repeated formulas, narrative structures, and conventional patterns that supported both comprehension and oral memorization. As the tradition expanded, these forms became part of a recognizable Buddhist literary register.

The linguistic history of Buddhism therefore involves a tension between accessibility and specialization. A register may broaden communication at one stage and become institutionalized at another. What begins as an alternative form of religious communication can eventually acquire its own conventions and authoritative status.

6. Buddhist Vocabulary and Semantic Change

One of the clearest linguistic contributions of Buddhism is the semantic specialization of ordinary or inherited vocabulary. Religious traditions often create new meanings not by inventing entirely new words but by reorganizing the meanings of existing forms. Buddhist discourse illustrates this process particularly clearly.

The term dhamma has a broad semantic field. Within Buddhist contexts it can refer to teaching, truth, principle, phenomenon, law, or doctrine, depending on context. Its repeated use within a developing religious system gave it a central role in expressing Buddhist ideas.

Kamma likewise acquired a distinctive religious significance. While the broader concept of action existed in Indian intellectual traditions, Buddhist discourse connected kamma closely with intentional

action and its consequences. This semantic development contributed to a framework for explaining ethical responsibility and experience.

Nibbâna became a central term for liberation and the ending of the conditions associated with suffering. Its importance demonstrates how a word can become conceptually dense through repeated doctrinal use. SaEgha developed as a term for the organized monastic community, while bhikkhu and bhikkhunî marked religious and institutional identities. These terms together show the development of a specialized Buddhist register.

Semantic change is therefore central to the history of Buddhism. Words did not merely transmit pre-existing doctrines; their repeated use within Buddhist discourse helped shape the conceptual structure of the tradition itself.

7. Language, Caste and Social Identity

Language also reflects the social world in which a religious movement develops. Buddhist texts used vocabulary associated with social classification, including terms relating to caste and status. At the same time, Buddhist teachings questioned the assumption that birth alone determined spiritual worth. This creates an important linguistic and ideological tension.

The distinction between social recognition and ideological approval is significant. A discourse can name and describe social categories without accepting the values traditionally attached to them. Buddhist discourse could therefore use familiar categories of vaGGa and jâti while challenging their absolute relevance to spiritual achievement.

This suggests that linguistic reform does not necessarily occur at the same speed as ideological reform. Social categories may remain linguistically available even when their interpretation changes. The persistence of inherited vocabulary can therefore reveal continuity within a movement that is otherwise presented as socially innovative.

The Buddhist position should consequently not be described as a complete linguistic revolution. Its discourse introduced important challenges to birth-based spiritual hierarchy, but it continued to operate within the vocabulary and communicative practices of its social environment. The linguistic evidence thus helps reveal both the reformist and the continuous dimensions of early Buddhism.

8. Forms of Address and Pragmatics

Forms of address and greeting are important because they communicate relationships between speakers. They can express respect, distance, familiarity, age, social position, authority, gender, and religious status. For this reason, the study of address forms provides a useful pragmatic perspective on Buddhist discourse.

Buddhist teachings could emphasize ethical conduct and spiritual equality while still employing differentiated forms of address. Such patterns demonstrate that ideological equality does not automatically produce linguistic equality. Speakers continue to draw on socially recognized conventions when interacting with one another.

The pragmatic dimension of Buddhist language therefore complements its doctrinal dimension. It shows how a religious community negotiated hierarchy in everyday communication. Linguistic practices could preserve distinctions even while Buddhist teaching questioned the moral or spiritual significance of some social hierarchies.

9. Oral Tradition, Memory and Transmission

Early Buddhism was fundamentally an oral tradition before the teachings were systematically preserved in written form. This fact has major linguistic consequences. Oral traditions require structures that make material easier to remember, repeat, correct, and transmit across generations. Repetition, parallel structures, formulaic expressions, lists, recurring sequences, rhythmic organization, predictable syntax, and repeated dialogues can all support memorization. Such patterns are not merely stylistic decoration. They function as technologies of memory, helping communities preserve lengthy bodies of teaching without relying initially on written texts.

The transmission of Buddhist teaching can therefore be understood as a gradual movement from oral discourse to memorized formula, communal recitation, textual standardization, and literary canon. Each stage introduces possibilities for both preservation and modification. Repetition helps maintain continuity, while repeated performance can also produce standardized forms.

The oral character of early Buddhism also explains why it is difficult to reconstruct the exact language of individual historical speakers. Surviving texts are the result of collective transmission and later textual preservation. Linguistic analysis is consequently most useful when it examines recurring patterns and the development of the tradition rather than attempting to identify a single original spoken form.

10. Buddhist Discourse as a Religious Register

As Buddhism developed institutionally, it created a recognizable religious register. This register included vocabulary relating to ethics, meditation, suffering, liberation, karma, rebirth, mental states, religious practice, and monastic discipline. The repeated use of this vocabulary helped members of the community recognize shared ideas and practices.

A specialized register also contributes to institutional cohesion. Monastic communities require terms for roles, rules, practices, relationships, and forms of teaching. Words such as *saEgha*, *bhikkhu*, and *bhikkhunî* therefore did more than name individuals or groups; they helped organize religious identity and institutional life.

The formation of a Buddhist register demonstrates that religious innovation involves linguistic organization. A movement becomes communicatively stable when its concepts, practices, and institutions can be named, repeated, taught, and recognized through shared linguistic forms.

11. Language and Religious Authority

Language is closely connected with religious authority because control over interpretation, teaching, and sacred knowledge often depends on specialized forms of communication. In the Brahmanical context, Sanskrit carried substantial prestige as a language of intellectual and ritual authority. Buddhism introduced an alternative discourse that could challenge established patterns of religious legitimacy.

The linguistic challenge was not simply a matter of replacing one language with another. It involved changing who could participate in religious communication, what kinds of speech were considered authoritative, and how teachings could be remembered and transmitted. Buddhist discourse thus contributed to an alternative structure of religious authority.

However, the history of Buddhism also demonstrates how alternative discourse can become institutionalized. As Buddhist communities expanded, they developed their own textual specialists,

literary conventions, memorization practices, and authoritative traditions. The movement can therefore be described through a trajectory of challenge, alternative discourse, and institutionalization.

This process is important for understanding the relationship between language and power. A linguistic form may initially function as an alternative to established prestige and later acquire prestige of its own. Religious institutions can transform communicative practices into markers of orthodoxy and authority.

12. Language Contact, Translation and Expansion

The geographical expansion of Buddhism created new linguistic conditions. As Buddhist ideas moved into different regions, concepts had to be translated, transliterated, borrowed, adapted phonologically, or represented through equivalent terms in other languages. The spread of Buddhism was therefore also a history of linguistic contact.

Translation is not merely the replacement of one word by another. Religious concepts may carry cultural assumptions that do not have exact equivalents in another language. Translators and communities must therefore make decisions about meaning, terminology, and conceptual correspondence. The movement of Buddhist ideas across languages could consequently produce both continuity and reinterpretation.

The transmission of Buddhist vocabulary into Chinese, Tibetan, and other Asian linguistic traditions illustrates the wider cultural reach of this process. Terms may be preserved through transliteration, represented through translation, or reshaped within new linguistic environments. Each method affects how a religious concept is understood.

Linguistic expansion thus belongs to the history of religious expansion. A tradition becomes geographically durable partly because its concepts can be carried across linguistic boundaries.

13. Linguistic Contradictions and Social Continuity

The linguistic record of early Buddhism contains productive contradictions. Buddhist teachings could challenge birth-based spiritual hierarchy while continuing to use inherited social vocabulary. Similarly, a community could emphasize ethical equality while retaining differentiated forms of address. These tensions should not automatically be treated as inconsistencies; they demonstrate that ideological and linguistic change operate through different processes.

Ideological discourse can change relatively quickly because a movement may explicitly redefine values. Everyday linguistic practices, however, are embedded in social relationships and may change more slowly. Speakers continue to use familiar categories because communication depends on shared conventions. The Buddhist tradition therefore illustrates how linguistic continuity can coexist with conceptual innovation.

This distinction also prevents an overly simple interpretation of Buddhism as either completely revolutionary or completely conservative. Its language reflects negotiation between inherited social forms and new religious meanings. The study of this negotiation reveals dimensions of Buddhist history that are less visible when language is treated only as a neutral medium.

14. Linguistic Perspective on the Decline of Buddhism

The decline of Buddhism in India is often discussed through political, economic, and institutional explanations. A linguistic perspective does not replace these explanations but complements them.

Religious traditions depend on systems of teaching, memorization, textual transmission, and institutional reproduction. When institutional support weakens, specialized linguistic registers may also become less securely transmitted.

The decline of Buddhist institutions could affect vocabulary, manuscript traditions, education, monastic practices, and the interpretation of technical concepts. Linguistic continuity depends on communities that teach and use specialized terminology. When those communities decline, parts of a religious register may lose their immediate social context.

Nevertheless, linguistic decline does not mean complete extinction. Buddhist concepts and terms could survive through other Indian traditions, regional practices, textual preservation, and transmission outside India. The history of Buddhist language therefore includes both loss and continuity.

This perspective emphasizes that religious traditions survive not only through institutions but also through words, texts, and practices of interpretation. The weakening of one institutional setting can change the social meaning of a vocabulary without necessarily erasing the vocabulary itself.

15. Conclusion

Language was an active force in the emergence and development of Buddhism. The Buddhist tradition arose within the linguistic diversity of ancient India and developed alternative forms of religious communication. Its use of Middle Indo-Aryan literary forms, its specialized vocabulary, and its reliance on oral transmission contributed to the formation of a distinctive religious discourse.

The semantic development of terms such as dhamma, kamma, nibbāna, and saEgha shows how linguistic resources can acquire new conceptual significance through sustained religious use. At the same time, the continued use of social categories and differentiated address forms demonstrates that linguistic change does not necessarily follow ideological change in a direct or immediate way.

The oral tradition further reveals that linguistic form was central to the preservation of Buddhist teaching. Repetition, formulaic structures, lists, and recurring patterns supported memorization and communal transmission before textual standardization. As Buddhism expanded, translation and language contact enabled its concepts to enter new linguistic environments, creating further opportunities for adaptation and reinterpretation.

A linguistic history of Buddhism therefore complements political, economic, social, and philosophical histories. It demonstrates that the development of Buddhism was also a process of discourse formation: inherited language was reorganized, meanings were specialized, social categories were negotiated, oral patterns were institutionalized, and religious authority was constructed. Buddhism can consequently be understood as a linguistic negotiation between inheritance and innovation, continuity and change, challenge and institutionalization.

References

- Bapat, P. V. (1926). Studies in Buddhist literature and tradition.
- Krishan, Y. (1986). The Buddhist tradition and its historical development.
- Lamotte, E. (1988). History of Indian Buddhism: From the Origins to the Œaka Era.
- Law, B. C. (1933/1983). Historical studies of Buddhism and Pāli literature.
- Malalasekera, G. P. (1937–). Dictionary of Pāli Proper Names.
- Nakamura, H. (1980/1989). Indian Buddhism: A Survey with Bibliographical Notes.

- Nattier, J. (1991). Once Upon a Future Time: Studies in a Buddhist Prophecy of Decline.
- Norman, K. R. (1983). Pāli Literature: Including the Canonical Literature in Prakrit and Sanskrit of All the Hīnayāna Schools of Buddhism.
- Oldenberg, H. (1971). Buddha: His Life, His Doctrine, His Order.
- Pande, G. C. (1957/1978). Studies in the Origins of Buddhism.
- Thapar, R. (1978/1984). Ancient Indian social and historical studies.
- Wagle, N. K. (1966). Society at the Time of the Buddha.

Assistant Professor, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra



India - Sri Lanka in the Indian Ocean Region : An Analysis of Geo - economic and Geo - political Challenges

Dr Bhawna Pokharna

Abstract- India and Sri Lanka have been friends since ancient time. The bilateral relations have a history of more than 2500 years with close historical, cultural, and economic interactions. The bilateral relations have witnessed myriad ups and downs in the post-independence era. The recent Chinese incursions in Sri Lanka in the form of BRI projects have altered the power equations in the Indian Ocean region and posed geo-economic and geo- political challenges to both India and Sri Lanka. The present paper explores the India-Sri Lanka relations and their importance for maintaining peace and stability in the South Asian region.

Keywords : India - Sri Lanka bilateral relations, Geo- economic , Geo- political Challenges, debt Trap.

Review of Literature : Scholars Like Wijayasiri, J. & Senaratne, N., (2018) in their paper, China's Belt and Road Initiative (BRI) and Sri Lanka., Wignaraja, G., Panditaratne, D., Kannangara, P. & Hundlani, D. (2020). And their paper Chinese Investment and the BRI in Sri Lanka, Wibisono, A. N., 2019 in his paper 'China's Belt and Road Initiative in Sri Lanka: Debt Diplomacy in Hambantota Port Investment', Senevirathna, Asantha (2025) in his paper 'Emerging Power Rivalry in the Indian Ocean Region: Geopolitical Implications for Sri Lanka', Premaratna and Asha Thrishali. (2020) in their paper Sri Lanka and the Geopolitics of Indo-Pacific: Perceptions, Opportunities and Challenges Have discussed in depth about myriad aspects of Chinese BRI in Sri Lanka and debt trap strategy

Research Methodology: The paper adopts qualitative approach to undertake present study. The paper used secondary methods and internet resources to accomplish the study. The paper also employed historical and analytical approach to bring it to present form.

Introduction-India and Sri Lanka are old neighbours, separated by a narrow stretch of water in the Palk Strait covering about 20 miles. The bilateral relationship is 2500 years old, marked by deep civilisational and cultural contacts. The impact of close vicinity is evident by the fact that development in one country affects another country. The island nation's history is integrated with India, which played an important role in shaping the course of events. Indian influence has a profound impact on Sri Lanka. The two major ethnic groups, Sinhala and Tamils, have their roots in India. Sinhalese had gone to Sri Lanka from the Plains of Indo-Gangetic during the ancient time. Tamils migrated from South India to Sri Lanka. Buddhism was introduced in Sri Lanka during Ashoka's rule and still has a very prominent impact on Sri Lanka. The Sinhalese language has Indo-Aryan language roots. (Pokharna, 2009)

Sri Lanka's location in the Indian Ocean makes it strategically important. In the post-Independence phase, Sri Lanka adopted a pro-Western inclination, which culminated in the Sri Lanka-Britain agreement. In January 1954 Indian Prime Minister Pt Nehru and Sri Lankan Prime Minister Kotelawala signed an agreement whereby Sri Lanka agreed to grant stateless person Sri Lankan citizenship under the Indian and Pakistani Residents Act of 1949. (Sahadevan, 2004)

But with the Solomon Bandaranaike, who became Sri Lankan Prime Minister in 1956, and Sirimavo Bandaranaike in 1959, a change was evident in Sri Lankan foreign policy whereby they adopted a pro-Indian attitude and became a major partner in the non-aligned movement. It supported the Indian stand on all important issues, such as the Suez Crisis in 1956, the Tibetan uprising of 1969 and the Congo Crisis of 1960. (Pokharna, 2009) During the Cold War period, India attempted to exclude a hostile third power presence from the island nation. In 1963, Sri Lanka, with its initiative, put forward the Colombo Proposal to conclude post-war settlement between India and China. (Sahadevan, 2004). The Sirimavo-Shastri pact of 1960 was a step in the direction of resolving the problem of stateless peoples' question. The pact is the first of its kind to repatriate the overseas Indians. It stated that out of 9.7 lakh stateless persons on the island, Sri Lanka would grant citizenship to 3 lakhs, while India agreed to accept the repatriation to India of 5.25 lakh people after granting it citizenship to them. (Sahadevan, 2004) The future status of the remaining 1.5 lakh persons was agreed upon; it was agreed that they were subject to a separate agreement between the two governments.

When Sirimavo Bandarnaike came to power again in 1970, she played a leading role in the Non-Alignment Movement by hosting the fifth Non-Alignment Movement summit meeting in Colombo in 1976. (Suryanarayan, 1994) She put forward another proposal to convert the Indian Ocean into a Zone of Peace. In 1974 India and Sri Lanka resolved a dispute over Katchativu Island. India had easily acceded to Sri Lanka's claim over the Katchativu Island under the maritime agreement signed on 26 June 1974. (Sahadevan, 2004) By this agreement, India surrendered a small portion of its territory over which it had a right claim of ownership by virtue of the historical evidence that the island formed part of the Ramnathpuram Samasthanam.

In the late 1970s, Premadasa became the new prime minister of Sri Lanka and chose to visit China in September 1979. Then China-Sri Lanka ties have become a bit critical of India, as Colombo condemned Soviet intervention in Afghanistan and refused to recognize the Hang Samarin government of Cambodia. In the 1980s, when ethnic conflict between Sri Lankan Sinhala and Sri Lankan Tamil began, bilateral relations came under pressure once again.

Anti-Tamil violence which broke out in Colombo in July 1983 prompted India to intervene in the conflict, but military efforts failed to prevent the deterioration of the situation. The situation took a turn in May 1987, when the Sri Lankan government regained control of the Jafana region, and at that time India supplied food and medicine by air and sea to the region. On July 29, 1987, Indian Prime Minister Rajiv Gandhi and Sri Lankan President J. R. Jayawardhane signed an accord designed to settle the conflict by sending the Indian peacekeeping force to establish peace and order and to monitor Tamil separatists to establish new administrative bodies. (The Hindu, 2017)

In June 1989, Sri Lanka's new president, R Premadasa, demanded the withdrawal of the Indian Peacekeeping Force, and New Delhi completed the withdrawal in March 1990. (Singh, 2020) The May 1991 assassination of Rajiv Gandhi by the LTTE forced New Delhi to crackdown on the LTTE

presence in Tamil Nadu and two naval patrols in the Palk Strait to interdict LTTE movement to India. In January 1992, repatriation of Tamil refugees to Sri Lanka commenced.

Since then all the successive Indian governments kept away from meddling into the ethnic conflicts of Sri Lanka, and India chose to enhance economic cooperation with Sri Lanka. The two countries signed a free trade agreement in December 1998, which became operational from December 15, 2001. The Sri Lankan president, Chandrika Kumaratunga, and then Mahinda Rajapaksa visited India many times.

Indian Prime Minister Narendra Modi propounded his *Neighbourhood First* policy and endeavoured to forge strong ties with neighbouring countries. He visited Sri Lanka in March 2015, which was the first bilateral visit by the prime minister of India since 1987, and in May 2017 as the chief guest for the first International Vesak Day hosted by Sri Lanka. He visited again in June 2019 to express solidarity after Easter Sunday attacks. (HCI, 2026)

In April 2025, Prime Minister Modi was in Sri Lanka, where he witnessed the signing of a total of 7 MoUs spanning various fields like connectivity, energy defence cooperation, health, mass media, etc. A bilateral agreement on debt restructuring was also signed. 5 new projects built with Indian assistance were also inaugurated by the two leaders. During the same visit, the highest award to a foreign national, the Vishva Mitra award, was bestowed upon the Prime Minister Modi.

From the Sri Lankan side, various visits took place in the recent past. President Gotabaya Rajapaksa and the then Prime Minister Mahinda Rajapaksa visited India in November 2019 and February 2020, respectively. In the year 2020, a virtual bilateral summit was also hosted between Prime Minister Modi and his Sri Lankan counterpart, Mahinda Rajapaksa, which resulted in the issuance of a joint statement titled *Mitratva Magga – Path of Friendship*. (The HCI, 2026)

In July 2023, President Wickramasinghe visited India during a summit which adopted the declaration on Promoting Connectivity, Catalysing Prosperity: India–Sri Lanka Economic Partnership vision. Later again, he visited India in June 2024 to attend the swearing ceremony of the new government in India. President Disanayaka visited India in September 2024 and February 2026. Important agreements were concluded, which included an MoU for a capacity-building programme for civil servants and a protocol amending the Agreement for the avoidance of the Double Taxation. India also announced extending financial support to 100 new students annually from Jaffna and Eastern University. Prime Minister of Sri Lanka, Dr Harini Amarasuriya, visited India in October 2025 to be a part in the NDTV World Summit during which she called on prime minister Modi. (HCI, 2026)

Trade and Commerce: India has traditionally been among Sri Lanka's largest trade partners. The bilateral trade between India and Sri Lanka amounted to USD 7.18 billion in the year 2025-26. In this India's exports were USD 5.52 billion, and Sri Lanka's exports were USD 1.66 billion. The negotiations for finalisation of the Economic and Technology Cooperation Agreement (ETCA) covering both goods and services were resumed after 5 years in October 2023, with the latest (14th) round of talks Held in July 2024. (The HCI, 2026) India is also one of the largest contributors to Foreign Direct Investment (FDI) in Sri Lanka. The main investments from India are in the areas of energy, hospitality, real estate, manufacturing, telecommunication, banking and financial services. The total investment remained at USD 2.94 billion till 2025

Besides the developmental assistance, India has provided multi-faceted assistance to Sri Lanka, close to USD 4.1 billion, during the economic crisis in 2022. These include a USD 500 Line of Credit (LoC) for the supply of petroleum products; a currency swap of USD 400 million extended to the Central Bank of Sri Lanka (CBSL) by the Reserve Bank of India (RBI); a USD 1 billion credit facility for the supply of food items, medicines, fuel and industrial raw materials; and a deferment of payment of liabilities of approx USD 2 billion under the Asian Clearing Union (ACU) mechanism by CBSL to RBI in 2022 (India launched 'Operation Sagar Bandhu' to assist Sri Lanka in the aftermath of Cyclone Dityah). India has provided more than 1123 tonnes of relief material, including dry rations, tents, tarpaulins, hygiene kits, water purification kits and about 14.5 tonnes of medicines and surgical equipment. (HCI, 2026)

India and Sri Lanka have age-old cultural and historical relations which bind the two countries. India-Sri Lanka bilateral trade, which stands around 5.5 billion USD; Indian support of 4 billion USD during the Sri Lankan financial crisis; and India's 7.5 billion USD developmental investment in Sri Lanka. India and Sri Lanka are conducting joint patrolling in the Indian Ocean and joint military exercises such as Matra Shakti and SLINEX. The two countries are also working together under the Colombo Security Conclave to fight maritime crime, smuggling and terrorism. All these suggest the time-tested friendship between the two countries. Thus, the two countries are moving forward steadily with peace and harmony essential for the peace and stability of the region. But there are factors which disturb the friendly relations between the two countries. The most important among them is Sri Lanka - China relations specially in the aftermath of BRI expansion in Sri Lanka and subsequent military build up after China took over Hambantota and combo port on lease.

Geo - Economic and Geo - Political Challenges

Both India and Sri Lanka are important countries on the coast of the Indian Ocean. According to the statement of Alfred Mahan, the Indian Ocean has become a 21st-century ocean in the world, and due to that, as an island, Sri Lanka is also becoming a significant player in the Indian Ocean. (Premaratne and Asha Trishali, 2020) Citing the importance of IOR, noted scholar Kaplan has said that the IOR will continue to grow as the preeminent trade and energy seaway in the twenty-first century and will be the centre stage of power rivalry in the world. India and Sri Lanka face immense challenges in the Indo-Pacific owing to Sino-Indian rivalry, debt distress and critical infrastructural dependencies.

Around 80 per cent of the world's seaborne oil trade passes through the choke points of the Indian Ocean, and therefore it literally connects the East to the West. Sri Lanka is an island nation that is strategically located in an important position in the IOR that connects the busiest sea routes in the world. The north of the island represents the South Asia subcontinent, with India being the most notable country in this region with over 1.4 billion population. The west of the island represents the developing regions of Africa and the Middle East that are rich in petroleum resources and minerals. The sea routes that pass beyond Africa and the Middle East connect the regions of Europe and the Americas. (Senevirathna, 2025) The eastern side of the island represents the rapidly developing Southeast Asia and large Australian landmass. Beyond these, eastern frontiers lead to great manufacturing hubs of China, Japan, and Korea. The geo-strategic location of Sri Lanka in the Indian Ocean makes it susceptible to outside powers intruding in the region. The Cold War geopolitics reinforced Sri Lanka's geostrategic importance with ports like Trincomalee, which were looked at

as a perfect location for warship and submarine deployment. As a result, both the USA and the Soviet Union tried to influence the island nation in their global geo-strategic competition (Anderson & Wijeyesekera, 2011). India is a natural big power of the region and considers itself the net security provider of the region, ensuring peace, stability and maritime security. In the present century the rise of China has sharpened Indian fear of losing its supremacy in the region. Moreover, the big power involvement in the region has revived the possibility of the beginning of a new cold war in the region. The 21st century's most ambitious project, the Chinese Belt and Road Initiative, is posing major geo-economic and geo-political challenges to India and Sri Lanka. China has launched many projects in Sri Lanka since 2013-14 under the BRI Flagship. Specifically, President Mahinda Rajapaksa's era from 2004 to 2014 was identified as an important period in the China-Sri Lanka relations, where Sri Lanka became a major partner to the Maritime Silk Route Initiative (MSRI) under BRI. China has given financial assistance to Sri Lanka in projects such as water and sanitation, transport, information communication and urban development. (Kamburawala and Abeyrathne, 2022). China granted financial assistance to projects like the building of a large multifaceted theatre complex called 'Nelum Pokuna', initiating the building of South Asia's tallest tower named 'Lotus Tower', developing Mahinda Rajapaksa International Airport (MRIA), and building a coal power plant in Norochcholai, Hambantota port, and Colombo city port (Senevirathna, 2021) (Kamburawala and Abeyrathne, 2022)

India is a natural big power of the region and considers itself the net security provider of the region, ensuring peace, stability and maritime security. In the present century the rise of China has sharpened Indian fear of losing its supremacy in the region. Moreover, the big power involvement in the region has revived the possibility of the beginning of a new cold war in the region. The 21st century's most ambitious project, the Chinese Belt and Road Initiative, is posing major geo-economic and geo-political challenges to India and Sri Lanka. China has launched many projects in Sri Lanka since 2013-14 under the BRI Flagship. Specifically, President Mahinda Rajapaksa's era from 2004 to 2014 was identified as an important period in the China-Sri Lanka relations, where Sri Lanka became a major partner to the Maritime Silk Route Initiative (MSRI) under BRI. China has given financial assistance to Sri Lanka in projects such as water and sanitation, transport, information communication and urban development. (Balachandran, K , 2020)(Kamburawala and Abeyrathne, 2022). China granted financial assistance to projects like the building of a large multifaceted theatre complex called 'Nelum Pokuna', initiating the building of South Asia's tallest tower named 'Lotus Tower', developing Mahinda Rajapaksa International Airport (MRIA), and building a coal power plant in Norochcholai, Hambantota port, and Colombo city port (Senevirathna, 2021) (Kamburawala and Abeyrathne, 2022)

Some of the above-mentioned projects are pure grants, while others were loans with interests that have contributed to the rising external debt in Sri Lanka. The Chinese investment in Sri Lanka during 2004 to 2014 amounts to an estimated US\$ 11 billion (Senevirathne, 2025), and 12 billion USD till 2019 (Wignaraja et al., 2020). However, these projects have contributed to the economic development and rise of living standards among Sri Lankans. The most important Chinese involvement under BRI in Colombo was developed by China Harbour Engineering Company (CHEC) at the Colombo Port City. The project is a US\$ 1.4 billion investment that includes 265 hectares of land reclamation from the sea. The Colombo Port City and the Hambantota Port are signature projects of Belt and Road cooperation between the two countries. China lent money to Sri Lanka to build

these ports. Indian commentators frequently argue that China is using the BRI to pursue ‘strategic ambitions’ in South Asia. Interestingly, the concerns over the BRI projects grew louder after China took over Sri Lanka’s Hambantota Port on a 99-year lease as a debt swap in 2017. (Wignraja et al., 2020) (Senevirathna, Asantha (2025)). Cash-depleted Sri Lanka has a total foreign debt of USD 46.9 billion, 52 per cent of which is owed to China, its largest lender. Therefore, Sri Lanka is caught in a power struggle involving powerful economies like the United States, India, China, and Japan due to its strategic location at the heart of the Indian Ocean. (Wijayasiri & Senaratne, 2018). China’s ownership of the troubled Hambantota port in Sri Lanka raised concerns about a possible loss of sovereignty. Infrastructure development initiatives are frequently motivated more by political than by economic factors. It has been established that China engaged in debt diplomacy with Sri Lanka in three stages and was successful in acquiring the Hambantota Port through the signing of a 99-year lease. They are the investment phase, the construction and operating phase, and the expropriation and debt collection phase. Sri Lanka was forced to adopt a \$1.12 billion debt relief deal in exchange for handing over the 99-year lease of Hambantota Port (Wibisono, 2019). During the economic crisis in Sri Lanka in 2022, China seemed to be reluctant to provide economic support to Sri Lanka to come out of the crisis. Since the Indian Ocean region is also very important for China, it would not risk severing its influence in Sri Lanka but try to involve with other engagements and interactions.

Conclusion- India and Sri Lanka are the two important countries of the Indian Ocean Region which possess deep historical and cultural relations. The two countries have also witnessed a troubled past owing to the Tamil crisis, which deteriorated the bilateral relationship for some time. The Chinese influence in Sri Lanka has increased, particularly after the launch of BRI projects, which eventually put Sri Lanka in debt trap distress. It posed many geo-economic and geopolitical challenges in the IOR region. Whereas India has supported Sri Lanka during the financial crisis of 2022 and at the time of other natural calamities. Thus, strong India–Sri Lanka relations are necessary for peace and stability of the Indian Ocean region.

References

- Balachandran, K (2023) βWhy Is Trincomalee Port Still Undeveloped?,β *The Diplomat*, <https://thediplomat.com/2023/03/why-is-trincomalee-port-still-undeveloped/>
- Baruah, Darshana M., 92018) βIndia’s Answer to the Belt and Road: A Road Map for South Asia,β Carnegie Endowment, August 21, 2018, <https://carnegieendowment.org/research/2018/08/indias-answer-to-the-belt-and-road-a-road-map-for-south-asia?lang=en>
- Bose, Sohini (2025), Ports and Geopolitics: The Case of Sino-Indian Rivalry in the Bay of Bengal, Ports and Geopolitics: The Case of Sino-Indian Rivalry in the Bay of Bengal
<https://www.orfonline.org/research/ports-and-geopolitics-the-case-of-sino-indian-rivalry-in-the-bay-of-bengal>
- David Brewster, βThe Bay of Bengal: India’s Growing Role as a Regional Security Provider,β *The Strategist*, December 11, 2014, <https://www.aspistrategist.org.au/the-bay-of-bengal-indias-growing-role-as-a-regional-security-provider/>
- David, A., & Wijeyesekera, A. (2011, October 15). US Naval Basing in Sri Lanka. *Small Wars Journal*. <https://smallwarsjournal.com/jrnl/art/us-naval-basing-in-sri-lanka>
- The High Commission of India in Colombo (2026) India-Sri Lanka Bilateral Relations available at <https://>

- www.hcicolombo.gov.in/page/india-sri-lanka-bilateral-relations/
- The Hindu, (2017) Thirty Years of India Sri Lanka accord available at <https://www.thehindu.com/news/international/30-years-of-the-indo-sri-lanka-accord/article19517964.ece>
- The Hindu*, (2025) Sri Lankan President Dissanayake Arrives in Beijing on 4-day Visit to China, January 15, 2025, <https://www.thehindu.com/news/international/sri-lankan-president-dissanayake-arrives-in-beijing-on-4-day-visit-to-china/article69099074.ece>
- Kamburawala and Abeyrathne (2022), Belt and Road Initiative (BRI) and Sri Lanka: A Review of Literature, KDU Journal of Multidisciplinary Studies DOI:10.4038/kjms.v4i2.514(2):56-65,
- Pokharna Bhawna, (2009) India China Relations Dimensions and perspectives, New Century publications, New Delhi,
- Premaratne and Asha Trishali. (2020) Sri Lanka and the Geopolitics of Indo-Pacific: Perceptions, Opportunities and Challenges S.P. University of Colombo, Journal of polity and society vol, 2, no, 1 available at <https://journalspoliticalscience.com/index.php/i/article/view/19>
- Sahadevan P. (2004) India and Sri Lanka : A Changing Relationship, Dialogue Vol 5, no 3,
- Senevirathna, Asantha (2025) Emerging Power Rivalry in the Indian Ocean Region: Geopolitical Implications for Sri Lanka, Studies https://www.ejss.net.in/article_html.php?did=15967&issueno=0
- Singh, Rajkumar, (2020) IPKF Withdrawal And India-Sri Lanka Relations – Analysis, Euresia review, <https://www.eurasiareview.com/17072020-ipkf-withdrawal-and-india-sri-lanka-relations-analysis/>
- Suryanaryan, Sri Lanka's policy towards China, China Report 30 :2 1994, p 207
- Wibisono, A. N., (2019). China's Belt and Road Initiative in Sri Lanka: Debt Diplomacy in Hambantota Port Investment. MANDALA- Jurnal Ilmu Hubungan Internasional, 2(2)
- Wignaraja, G., Panditaratne, D., Kannangara, P. & Hundlani, D., (2020). Chinese Investment and the BRI in Sri Lanka, s.l.: Asia-Pacific Programme.
- Wijayasiri, J. & Senaratne, N., (2018). China's Belt and Road Initiative (BRI) and Sri Lanka. China: BRI o el nuevo camino de la seda, pp. 373-401. <https://archivos.juridicas.unam.mx/www/bjv/libros/12/5550/19.pdf>

Professor of Political Science
Govt Meera Girls College Udaipur
Raj India



Indian Classical Music Therapy and Its Cultural Relevance in South Asia: An Experimental Case Study

Saroda Debi Sheba

Abstract:

Indian classical music is one of the oldest and most influential cultural traditions of the Indian subcontinent, having played an important part in the spiritual, artistic, and social life of South Asia for centuries. Its melodic structure based on the raga system has influenced musical traditions throughout the region. In particular, the historical, cultural, and religious ties between India and Sri Lanka have led to Indian music traditions influencing Sri Lankan Buddhist chanting, traditional music, and music education. Apart from its cultural importance, Indian Classical Music has lately attracted increasing interest as a complementary therapeutic method to improve psychological and cognitive well-being.

This paper is an experimental case study to explore the therapeutic possibilities of Indian classical music for Alzheimer's and dementia patients. Music-based intervention sessions were conducted for a specific period of time, and changes in participants' cognitive functions, behavioral responses, emotional health, social involvement, and selected physiological parameters were observed and analyzed. The findings suggest that Indian classical music can help to reduce anxiety, increase emotional stability, improve social interaction, and help in cognitive functioning in patients with dementia.

Despite being carried out in India, the study's conclusions might be more applicable in the South Asian context because of the region's common musical and cultural traditions. The potential for culturally relevant music-based therapeutic approaches in dementia care is highlighted by the historical and cultural ties between India and Sri Lanka. This study highlights the importance of Indian classical music as a promising supplemental intervention in healthcare as well as a significant cultural legacy of South Asia. In order to investigate the therapeutic uses of deeply ingrained musical traditions throughout South Asia, it also promotes interdisciplinary research and regional cooperation.

Keywords : Indian Classical Music, Music Therapy, Dementia, Alzheimer's Disease, South Asia, Cultural Heritage, Experimental Case Study.



Is Abhidhamma Exclusively for *Devas*? Canonical Evidence and the Role of Ultimate Realities in Human Liberation

Ven. Bingiriye Sunandabodhi

Abstract- This study refutes modern assertions claiming that the Abhidhamma Pimaka is non-canonical, unnecessary for human liberation, or intended strictly for celestial beings (*devas*). By synthesizing evidence from canonical sources, commentaries (*ammhakathâ*), and historical chronicles, this paper proves the historical transmission and indispensable spiritual efficacy of the Abhidhamma for human insight practice (*vipassanâ*). The research problem arises from contemporary critics who misinterpret the Buddha's three-month continuous sermon in *Tâvatimsa* heaven as proof of its irrelevance to human beings. Primary canonical evidence from the *Dhammahadaya-VibhaEga* refutes this by establishing that the heavenly venue was dictated by temporal physics: three human months equal mere minutes in *Tâvatimsa*, making a non-stop sermon humanly impossible to attend without physical interruption. Commentarial literature—specifically the *DhammasaEgaGî-Ammhakathâ* (*Ammhasâlinî*)—proves human delivery via Venerable Sâriputta, who received daily methodological summaries (*naya*) from the Buddha and taught them to 500 monks who subsequently attained Arahant ship. Furthermore, canonical discourses like the *Mahâparinibbâna sutta* and *Dhammacakkappavattanasutta* affirm that all three Pimakas convey the unified taste of liberation (*vimutti-rasa*). In the *Dhammacakkappavattanasutta*, the truth of suffering (*dukkha-sacca*) is defined via the five aggregates (*pañcakkhandha*), requiring precise knowledge of the ultimate realities (*paramattha dhamma: citta, cetasika, rūpa, and nibbâna*) systematized in the Abhidhamma. Secondary historical accounts in the *Sîhalavatthu* and *Milindapañha* further demonstrate how even auditory exposure to Abhidhamma generates vital karmic support (*upanissaya*) leading to *Nibbâna*. Conclusively, the Abhidhamma Pimaka remains an essential, authentic foundation for human liberation and accurate Dhamma exposition.

Keywords: Abhidhamma Pimaka, *Paramattha Dhamma*, *Vipassanâ*, *Theravâda* Buddhism

Faculty of Graduate Studies, Buddhist and Pali University of Sri Lanka
Sri Lanka



An Analytical Study of Buddhist Non-Harming Ethics and Youth Violence Among Generation Z with Special Reference to the Kumâra Sutta

Ven. Kalalgoda Sudarshika

Abstract- Youth violence is a significant social concern, expressed through aggression, bullying, peer conflict, retaliation, and harmful behaviour. While violence has been examined through psychological, sociological, and criminological perspectives, limited attention has been given to early Buddhist ethics as a preventive framework. This research analytically examines the Buddhist principle of non-harming (ahiCsâ) in relation to youth violence, with special reference to the Kumâra Sutta. The objective is to examine how its ethical teachings can contribute to understanding and preventing violent tendencies among contemporary youth. The central research problem is that how can the non-harming ethic articulated in the Kumâra Sutta provide an ethical framework for addressing contemporary youth violence? The research adopts a qualitative methodology based on textual and thematic analysis of the Kumâra Sutta, supported by canonical and secondary literature. The research gap concerns limited scholarly investigation of this sutta as a resource for addressing youth violence, particularly among Gen Z. The discussion examines compassion, recognition of shared vulnerability, moral restraint, and awareness of consequences. Findings indicate that non-harming is presented not merely as abstention from violence, but as an ethical orientation fostering empathy, self-restraint, compassion, and social responsibility. **The study recommends introducing systematic training in humane qualities, compassion, empathy, non-violence, and respect for others from the preschool stage and progressively developing these qualities throughout childhood and adolescence. Such early ethical formation may help cultivate responsible individuals before harmful attitudes and violent behavioural patterns become deeply established.** In a nutshell, this approach is particularly relevant to Gen Z and subsequent generations amid increasing peer aggression, digital hostility, social fragmentation, and the normalization of harmful behaviour among young people.

Keywords: AhiCsâ, Buddhist Ethics, Generation Z, Kumâra Sutta, Non-Harming, Youth Violence

MA in Buddhist Studies (Cand.) University of Kelaniya, Sri Lanka

+94 768811205



The Origin and Evolution of Buddhism: Social, Cultural and Ideological Perspective

Pooja Kasana, Prof. Alpana Mohan

Abstract- The emergence of Buddhism marks a watershed moment in ancient India history and philosophy. The sixth century BCE in the middle Ganga Plain was an era defined by rapid economic, social and political transformations. During this period the widespread adoption of iron technology, agricultural surplus, the second wave of urbanization and the rise of new urban centers fundamentally challenged the established Vedic order. Growing public discontent with complex ritualism, animal sacrifices and the rigid birth-based varna hierarchy created a fertile ground for change. Within this context the teachings of Mahatma Buddha offered a practice and humanistic alternative.

This research paper presents a critical analysis of the causes underlying the origin of Buddhism its core doctrines and the path of its historical development. Buddha's philosophy, anchored in the Four Noble Truths and Eightfold Path, advocated the middle way (Madhyama Pratipada) striking a balance between extreme asceticism and sensory indulgence. A key strength of Buddhism lay in its dissemination through the vernacular language (Pali), its core message of social equality, which resonated deeply across all strata of society, particularly among the merchant class (Vaishyas) and the lower classes (Sudras).

Furthermore, this paper examines the phased evolution of Buddhism over time. From the initial formation of the Sangha to its expansion under the patronage of monarchs such as Ashoka, Kanishka and Harsha, its scope expanded continuously. During the Mauryan period, Buddhism transcended the Indian subcontinent to reach Sri Lanka, Central Asia and Southeast Asia. Eventually giving rise to major traditions including Hinayana, Mahayana and Vajrayana. Utilizing both ancient historical sources and modern historiography, this study demonstrates that Buddhism was not merely a religious movement, but a transformative force that reshaped Indian philosophy, art, architecture, literature.

Keywords- Buddhism Origin, Eightfold path, Mahayana, Culture impact.

* Research Scholar, Department of Psychology, VMLG College, Ghaziabad

** Professor, Department of Psychology, VMLG College, Ghaziabad